प्रकाशक—
नन्दनलाल जैन
पार्श्वनाथ भरतपुर

मुद्रक—
वीरेन्द्रसिंह जैन
कुशल प्रेस
डिसीईट रोड आगरा

नम्र—निवेदन

आज सतत २५ वर्षों के परिश्रम के पश्चात 'श्री पल्लीवाल जैन इतिहास' पाठको के कर कमलो मे प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार आनन्द हो रहा है।

प्रथम मुनिराज श्री दर्शनविजयजी महाराज त्रिपुटी ने इस कार्य मे प्रयास किया। उसके पश्चात जैन साहित्य रत्न सेठ अगरचन्दजी साहब नाहटा का 'पल्लीवाल इतिहास' के सम्बन्ध मे एक विद्वत्ता पूर्ण लेख श्री आत्मानन्द जन्म शताब्दी स्मारक ग्रंथ मे पढने को मिला। फिर पता लगा कि अजमेर निवासी श्री जुगेनचन्द्रजी के पास इस विषय की सामग्री का हस्तलिखित अच्छा संग्रह है। उनसे सम्पर्क स्थापित करके वह प्राप्त किया एवम् श्री अगरचन्दजी नाहटा से पत्र व्यवहार करके पल्लीवाल जैन इतिहास के लिखाने मे सहयोग मिलने का आश्वासन लिया।

श्री नाहटाजी ने अपनी देख रेख मे यह 'पल्लीवाल जैन इतिहास' श्री दौलतसिंहजी लोढा 'अरविन्द' से लिखवाने का कष्ट उठाया। अत मैं मुनिराज श्री दर्शनविजयजी महाराज, श्री जुगेनचन्द्रजी, श्री अगर चन्दजी नाहटा और दौलतसिंहजी लोढा का आभार मानता हूँ। उपरोक्त सज्जनो के सहयोग से ही बडी खोज के पश्चात यह इतिहास प्रकाशित कराने की मेरी और मेरे पिताजी आदरणीय श्री मिट्ठनलालजी कोठारी की सदिच्छा पूर्ण हो सकी है।

इस पुस्तक में यथा सम्भव पल्लीवाल जैन रत्नों के परिचय देने का प्रयत्न किया गया है परन्तु फिर भी २ वीं शताब्दी के कई रत्नों जैसे श्री सम्पतलालजी श्री नन्दूरामजी श्री गणेशीलालजी श्री घासीलालजी श्री बसन्तीलालजी श्री मोतीलालजी श्री रतनलालजी श्री मन्नूलालजी आदि जिन्होंने पंच महाव्रत धारण करके दीक्षा अङ्गीकार की थी उनके परिचय प्राप्त करने में मुझे सफलता प्राप्त नहीं हो सकी जिसका खेद रहा है। फिर भी जितनी सामग्री संग्रह की जा सकी है उससे प्रकाश में श्री पल्लीवाल जैन जाति के गौरव पर अच्छा प्रकाश पड़ा है। आशा है कि इतिहास प्रेमियों के लिए यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तक की सामग्री संग्रह करने में उपरोक्त चारों विद्वानों के अतिरिक्त जिस किसी भाई से मुझे तनिक भी सहयोग मिला है उन सभी कृपालुओं का हृदय से आभार मानता हूं।

विनीत—मक्खनलाल जैन भरतपुर (राजस्थान)

कुछ दो शब्द

प्राग्वाट-इतिहास के लेखन के समाप्ति-काल पर मैं श्री नाहटाजी से बीकानेर मे मिला था। इनके सौजन्यपूर्ण व्यवहार को देखकर मुझ को इस बात पर पश्चात्ताप हुआ कि ऐसे सरल हृदयी विद्वान से मुझको बहुत पूर्व ही मिलना चाहिए था। खैर ! श्री नाहटाजी ने उक्त इतिहास के लिये एक लम्बी भूमिका लिखी। मैं इनके कुछ निकट आया। तत्पश्चात् मेरी २-८ छोटी कृतिया निकली। 'जब श्रीमद् राजेन्द्रसूरि स्मारक ग्रथ' जैसे वृहद् कार्य का भार मेरे पर आ पडा, उस समय पडित सुखलालजी, प० लालचन्द भगवानदास गाधी और आपने पूरा २ सहयोग देने का वचन दिया। आपने तो वचन ही नही दिया, परन्तु उक्त वृहद् ग्रथ को उन्नत से उन्नत स्थिति मे निकालने की सम्पूर्ण जिम्मेदारी अपने कधो पर उठाली। आपके सम्पादकत्व मे वह ग्रथ अपनी भाति के ग्रथो मे नाम कमा गया। यह लिखने का आशय मात्र यही है कि विद्वान् वही है जो अपनी विद्वत्ता से दूसरो को उठाता है। यह गुण नाहटाजी मे घर जमा कर बैठा है। इसमे तनिक सन्देह नही। ऐसे कई विद्वान् देखे है जो छोटो से बात करने तक मे शर्माते हैं, अपना समय का अपव्यय करना समझते हैं और छोटा अगर कुछ लिखकर उनको दे दे तो कुछ चादी के टुकडे देकर उस पर अपना नाम चढाते नही शर्माते हैं। यहा दोनो ही गिरते हैं। यह अवगुण जिसमे नहो, वह ही सच्चा सरस्वती का पुजारी है।

श्री नाहटाजी ने दिनांक ६-११-५८ के कार्ड में मुझको लिखा कि—भरतपुर के श्री नन्दनलाल पल्लीवाल मुझे इतिहास लिख देने बाबत मेरी देन रेन में लिखावट दम का कई मास से अनुरोध कर रहे हैं और उन्होंने कुछ सामग्री भी मुझे भेज दी है। अतः मैं नाहटाजी ने मुझे लिखा "मैं तुमसे यह कार्य करवा कर अपनी जिम्मेदारी से तुरन्त हलका होना चाहता हूँ।

मैं आपका आग्रह को कैसे टाल सकता था और टालने जैसी बात भी नहीं। फिर आपका मेरे पर का स्नेह और अनुग्रह है। परन्तु मैं भी यतीन्द्रसूरि-अभिनन्दन ग्रन्थ के मुद्रण का कार्य बम्बई साढ़े तीन मास रह कर करके लौटा ही था अतः आपकी इच्छानुसार मैं इस कार्य को तुरन्त तो प्रारम्भ नहीं कर सका फिर भी अवसर मिलने के लिए मैं दिसम्बर १३ शनिवार को बीकानेर के लिए रवाना हुआ। बीकानेर में मैंने ता. १६ पर्यन्त ठहर कर प्राप्त सामग्री का अवलोकन किया और प्राप्य सामग्री के टिप्पण तैयार करके भीलवाड़ा ता. २०-१२-५८ को लौट आया। फिर परिश्रम पूर्वक इस कार्य को पूर्ण किया।

श्री नाहटाजी की कृपा से पल्लीवाल जाति का इतिहास लिखने का जो सौभाग्य मुझको प्राप्त हुआ है मैं श्री नाहटाजी का अत्यन्त आदर करता हूँ। श्री नन्दनलालजी पल्लीवाल भरतपुर ने जो सामग्री तत्परता एवं उत्साह से एकत्रित करके नाहटाजी के द्वारा मेरे पास भेज दी उससे मुझको सामग्री जुटाने में बहुत कम श्रम करना पड़ा और कार्य भी शीघ्र सम्पन्न हो गया। इसके लिए और उनके जाति प्रेम के लिये उनकी हृदय से सराहना करता हूँ।

प्रकाशित जैन प्रतिमा लेख सम्बन्धी पुस्तकों पर प्रकाशित प्रशस्ति ग्रन्थों और पल्लीवाल जाति द्वारा प्रकाशित (Census Report 1920 A D पर एक वि. सं. १९७७ में प्रकाशित 'रीति रस्म' पुस्तक तथा श्री नन्दनलाल पल्लीवाल द्वारा संग्रहित इतर सामग्री पर यह प्रस्तुत लघु इतिहास आधारित किया गया है।

पल्लीवालगच्छ और पल्लीवालजाति का प्रतिबोधक और प्रतिबोधित का संबंध रहा है। अतः एक-दूसरे की प्राचीनता एवं गौरव में एक-दूसरे का भाग सम्मिलित है। इस दृष्टि से पल्लीवालगच्छ की प्राप्त दो पट्टावलियां, पल्लीवालगच्छ-साहित्य और पल्लीवालगच्छीय आचार्यों के प्रतिष्ठित लेख यथा प्राप्त परिशिष्ट में दे दिये गये हैं। परिशिष्ट में सचमुच श्री नाहटाजी का लेख 'पल्लीवालगच्छ पट्टावली' जो श्री आत्मानन्द अर्धशताब्दी ग्रन्थ में प्रकाशित हुआ है, पुनः सहायक हुआ है और वैसे तो श्री नाहटाजी इस ग्रन्थ के लिखाने वाले होने से मेरे निकट अति आदरणीय हैं कि जिनकी कृपा से मैं पल्लीवाल जाति का इतिहास जान सका और लिख सका।

अन्त में जिन २ विद्वानों की कृतियों का इस लघु कृत के लिखने में उपयोग हुआ है उन सर्व के प्रति आभार प्रदर्शित करता हूँ और कामना करता हूं कि पाठक इसका सम्मान करेंगे तो मैं अपनी इस तुच्छ सेवा को भी महत्त्वशाली समझूंगा। शुभम्।

१३-१-१९५६ — दौलतसिंह लोढ़ा

सरस्वती विहार
भीलवाड़ा (मेवाड़)

❊ सूचनिका ❊

भूमिका

यश शेष उत्साही इतिहास प्रेमी लेखक दौलतसिंहजी लोढा अपर-नाम कवि 'अरविन्द' की प्रतिकृति, इस इतिहास के पृ० १८६ मे है और वहा पृ० १८६ से १८८ तक उसका उचित परिचय श्री जवाहरलाल लोढा (सम्पादक-'श्वेताम्बर जैन' आगरा) जैसे गुणज्ञ सज्जनने कराया है। मैं पुनरुक्ति करना नही चाहता। 'प्राग्वाट इतिहास' के बाद यह 'पल्लीवाल जैन इतिहास' लिख कर लेखक ने सचमुच समाज को अनुगृहीत किया है, अपने को 'अमर' बना दिया है।

पल्लीवाल जैन-समाज कैसा सद्गुणी, सत्कर्तव्य-परायण, प्रशसनीय था? और है-उसका इतिहास लिखना, प्रामाणिक परिचय, या दिग् दर्शन कराना सहज बात नहीं है। प्राचीन सस्कृत प्राकृत ग्रन्थो मे ताडपत्रीय और कागज पुस्तको मे, प्रशस्तिया, तथा जैन-प्रतिमा-लेखो मे मिलती हैं। अस्त-व्यस्त इधर-उधर बिखरी हुई साधन-सामग्री को ढूढ कर, समझ कर, व्यवस्थित सकलित करना, प्रामाणिक इतिहास की रचना करना बहुत परिश्रम-साध्य अत्यन्त गहन कठिन कर्तव्य है। कर्तव्य-निष्ठ परिश्रमशील विचक्षण बुद्धिशाली सद्गत लोढाजी यह कर्तव्य यथामति यथाशक्ति बजा कर स्वर्ग सिधार गये। आशा है, इस इतिहास से समाज को शुभ प्रेरणा मिलेगी। अपने कीर्तिशाली सस्मरणीय पूर्वजो कैसे सच्चरित्र, सद्गुणी, प्रतिष्ठित सुशिक्षित सज्जन नररत्न उच्च सस्कारी नागरिक थे और समयोचित कर्तव्य

बसाने वाले थे समाज देश हित करने वाले परोपकार परायण विवेकी धार्मिक आध्यात्मिक प्रवृत्ति करने वाले थे ? महिलाएं भी कैसी सुशील सच्चरित्र उदार धर्म परायण प्रेरणा मूर्ति थी ? इसका आभास इतिहास पढ़ने से हो सकता है ।

वर्तमान युग का वातावरण कुछ विचित्र है—नई पाश्चात्य संस्कृति मुग्ध राष्ट्रवाद की धुन में जात-पांत का भेद मिटाकर धर्म अधर्म का भी विचार भुलाकर समझ में नहीं आता मानवों को क्या पशु-प्राय बनाना चाहते है ? हिंसा का उत्तर वेकर अहिंसा को मिटा देना चाहते है ? इस तरह आर्य संस्कृति सभ्यता नीति-रीति-आचार-विचार को दूर कर अनीति दुराचार अनार्य संस्कार फैलाना बढ़ाना चाहते हैं । प्राचीन जाति-समाज-संगठन मिटाकर, भिन्न भिन्न वर्णों-जातियों की एकता का विनाश कर विचित्र समाज की रचना का प्रकार प्रयत्न कर रहे हैं । यह कहां तक ठीक है ? गंभीरता से विचारने योग्य है । ऐसे समय में ऐसा जाति धर्म संबद्ध इतिहास कई विरुद्ध विचार मान्यता वाले को पसन्द न भी आवे उसका उपाय नहीं है ।

जैसे विशाल देश का भरपूर उन्नति-प्रगति-प्राप्त क्षेत्र में भिन्न भिन्न प्रदेश ग्राम आदि की सुचारु व्यवस्था द्वारा होता है इस तरह मानव समूह का संयम-नियमन सदाचार रक्षण भिन्न भिन्न वर्णों के समुदाय-संगठन द्वारा व्यवस्थित किया जा सकता है । 'समान-शील व्यसनेषु सख्यम्' अर्थात् समान आचार-विचार वालों में मैत्री संभवित है । विरुद्ध आचार विचार वालों में मेल होना मुश्किल है । एक अहिंसक हो और दूसरा हिंसक एक सात्विक आहार करने वाला और दूसरा मांसाहार आदि अभक्ष्य भक्षण करने वाला तामसी पदार्थ सेवन करने वाला दारू आदि अपेय पान करने वाला हो ऐसे ही एक व्यक्ति धर्म निष्ठ हो और दूसरी व्यक्ति धर्म से नफरत करने वाली अधर्म को

उत्तेजन देने वाली हो, एक व्यक्ति आस्तिक हो, देव, गुरु आदि को मानने वाली हो, और दूसरी नास्तिक, देव, गुरु, मन्दिर, पूजन आदि मे नफरत करने वाली हो, एक व्यक्ति मूर्ति का मान-सन्मान पूजन करने वाली हो, और दूसरी मूर्ति का द्वेष-तिरस्कार करने वाली हो। उन दोनो का मेल किस तरह बैठ सकता है ? विलक्षण चक्रो से ससार रथ गृहस्थाश्रम यथा योग्य कैसे चल सके ? यह सब विचार दीर्घ दृष्टि से लक्ष्य मे रखकर पूर्वाचार्यो ने समाज-हित, समाज-सगठन के लिए फरमाया कि—'कुल-शील समै सार्ध कृतोद्वाहोऽन्यगोत्रजै ।' अर्थात् जिनका कुल और शील (सदाचरण) समान हो, और जो भिन्न गोत्र मे उत्पन्न हुए हो (अर्थात् पीढी सम्बन्ध मे बहिन, भाई न होते हो) उनके साथ विवाह करने वाला सद्-गृहस्थ गृहस्थ-धर्म पालने के लिए योग्य होता है—धर्म को निर्विघ्न पाल सकता है। ऐसे दम्पती-युगल सुख-शातिमय उन्नत जीवन पसार करते है, दूसरो के लिए आदर्श बन सकते हैं, सद्गुणी सस्कारी, धर्म परायण सन्तति प्रजा परिवार को प्रकट करते है, जो समाज के, देशके, धर्मके, अभ्युदयके लिए, अभ्युत्थान के लिए समर्थ हो सके। विशुद्ध ज्ञाति-परम्परा से देश को विशुद्धता का कल्याण लाभ है। सारे जगत का या देश का उद्धार का ठेका कोई नही ले सकता। जैसे पचो द्वारा प्रत्येक ग्राम की रक्षा व्यवस्था की जाती है, इस तरह भिन्न भिन्न जाति पच मडल, अपने अपने समुदाय की रक्षा व्यवस्था उन्नति प्रगति कर सकता है, जो परस्पर सुख दुःख मे सम सुख दुःख भागी बनता है।

इस दृष्टि से विचारा जाय तो यह इतिहास उपयोगी प्रतीत होगा। पल्लीवाल जैन समाज जागृत और उत्साही मालूम होता है। श्रीयुत नन्दनलालजी जैसे ज्ञाति-नन्दन श्रीमान् सज्जन उसमें है कि अपने जाति समाज के प्राचीन अर्वाचीन इतिहास लिखने के लिए लेखक को प्रोत्साहित कर सके। इतिहास प्रेमी श्रीमान् धीमान् अगरचन्दजी

नाहटा जिनका परिचय प्रतिकृति साथ इस पुस्तक में [पृ १७६ से १८१ तक] पाठक पढ़ेंगे उनका भी सहकार इसमें शामिल है।

सद्गत दौलतसिंहजी 'प्राग्वाट इतिहास' के लेखन समय से हमारे परिचित मित्र रहे उनके सुपुत्र पृथ्वीसिंह की तरफ से इस कार्य के लिए दो महीने पहिले दो शब्द (भूमिका) लिख देने के लिए सूचना आई थी मन्दनलालजी का भी प्रेरणा पत्र आया मैं अन्यान्य कार्य में व्यस्त था मेरा 'ऐतिहासिक लेख संग्रह' भी अभी प्रकाशित होरहा है। और मैं हिन्दी में कम लिखता हूँ, तो भी कुछ लिखने के लिए अत्याग्रह से प्रेरणा की। इसमें लेखक ने विषय क्रम से प्रकरण वार परिश्रम से लिखा है। पल्ली (पाली) स्थान की प्राचीनता और पल्लीवाल वंश की प्रशस्तियों के विषय में मैं आगे कुछ निवेदन करना चाहता हूँ। मेरा अभिप्राय है कि विक्रम की बारहवीं शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी तक पल्लीवाल ज्ञाति बहुधा प्रायः श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन रहा। पीछे कई कारणों से भिन्न २ सम्प्रदाय मानने लगा हो। श्रीमाल प्राग्वाट (पोरवाड—पोरवाल) ओसवाल सज्जनों की तरह पल्लीवाल सज्जनों को भी उनके कई कुल कुटुम्बों को व्यापार व्यवसाय वृत्ति निर्वाह आदि की अनुकूलता से भिन्न भिन्न समय में भिन्न भिन्न स्थानों में इधर उधर दूर दूर देश विदेश में निवास करना पड़ा है। उन्होंने अपनी दक्षता से सज्जनता से वहाँ वहाँ अपना संगठन कर लिया मालूम होता है। पल्लीवाल जैन समाज पूर्वजों के सन्मार्ग पर चलकर एकता से अपना उत्कर्ष सिद्ध करे यही शुभेच्छा है।

पल्ली (पाली) की प्राचीनता

विक्रम की दसवीं शताब्दी में पल्ली पर अग्नि का उपद्रव

वि०सवत् ६१८ चैत्र शु० २ का एक प्राकृत शिलालेख, जो घटियाला (जोधपुर मारवाड) से प्राप्त हुआ है, जिसमे प्रतिहारवशी राजा कक्कुक के प्रशस्त कार्यों का उल्लेख है, उसमे जिनदेवका दुरित विनाशक, सुख जनक भवन का निर्माण समर्पण जनानुराग, कीर्ति स्तम्भो के साथ सूचन है कि "उसने विपम प्रसग मे गिरि ज्वाला से प्रज्वलित पल्ली (पाली) मे गोधन आदि ग्रहण कर रक्षा की थी, और भूमि को नीलोत्पल आदि की सुगन्ध से सुगधी, तथा आम, महुडे और ईख के वृक्षो से मधुर रमणीय बनाई थी।"—यह शिलालेख, जर्नल रोयल एशियाटिक सोसायटी' सन् १८९५ मे पृ० ५१६ से ५१८ मे मुशी देवीप्रसादजी के 'मारवाड के प्राचीन लेख' मे तथा सद्गत बाबूजी पूरनचदजी नाहर के 'जैन लेख सग्रह' (खण्ड १ पृ० २५६ से २६१) मे प्रकाशित हुआ है, तथा कण्ह (कृष्ण) मुनि नामक लेख (जैन सत्यप्रकाश वर्ष ७ दीपोत्सवी अक) मे मैंने दर्शाया है उसमे निर्दिष्ट पल्ली प्रस्तुत पाली नगरी समझनी चाहिए। जिस प्राचीन स्थान से पल्लीवाल (पालीवाल) वैश्यो, ब्राह्मणो के ज्ञाति और श्वे० जैन मुनियो के पल्लीवाल गच्छ की प्रसिद्ध हुई है। विक्रम की १० वी शताब्दी मे इसके ऊपर अग्नि प्रकोप जैसी विपम आपत्ति आई थी उस समय सद्गुणी राजा कक्कुकनेवहाँ गोधन आदि की समयोचित रक्षा की थी।

वि० स० १३८९ मे जिनप्रभसूरिजी ने विविध तीर्थकल्प (सिंघी जैन ग्रन्थमाला ग्र० १०, पृ० ८६) मे तीर्थनामधेय सग्रहकल्प मे सूचित किया है अनेक प्राचीन स्थानो मे वीर का तीर्थ स्थान था, उनमे 'पल्लया' शब्द से इस पल्ली (पाली) का भी स्मरण है,। वहाँ भी भगवान् महावीर का प्राचीन जैनमन्दिर था। सिद्धराज जयसिह के मित्र खडिल्लगच्छ के विजयसिंहसूरि शिष्य वीराचार्य पाटण (गुजरात) से विद्या—बलसे आकाश मार्ग द्वारा पल्ली पुरी मे पहुँचे थे। यह घटना

पल्लीवास (ल) ब्राह्मणों ने पत्तनपुर मे महाराज जयसिंह को सूचित की थी। ऐसा उल्लेख–वि सं १३३४ म प्रभाचन्द्रसूरि के सं प्रभावक चरित्र [वीरा चार्य चरित्र श्लो० १६—१६] में मिलता है।

मिठराज और कुमारपाल के महामात्य प्राग्वाटवंशीय आनन्द पुत्र पृथ्वीपाल ने वि० सं १२ १ ज्येष्ठ वदी ६ रविवार को अपने श्रेय के लिए कराई थी विमलनाथ और श्री अनन्तनाथ देव जिन युगम मूर्तियाँ पल्लिका (पाली) के महावीर चैत्य म अपण की थी।

उसका लख श्री नाहर जैन लेख संग्रह (भा १ ले ८१४ ८१५) तथा श्री जिन विजयजी प्रा जैन लेखसंग्रह भा० २ ले ३८१) में दर्शाया है। श्रीगुजरातनो प्राचीन मंदि वंश नामक मेरा लेख ओरियन्टल कॉन्फरेन्स ७ वा अधिवेशन निबन्ध संग्रह में सन् १९३५ बड़ौदा से प्रकाशित हुआ उसमें सूचित किया है।

जैसलमेर किले के ग्रन्थ भडार में रही हुई पचासक वृत्ति के ताड पत्रीय पुस्तक क अन्त म म दो पद्यो में उल्लेख है कि 'विक्रम संवत १२०७ म पाल्ली-भंग क समय उम क ग्ति पुस्तक को ग्रहण किया था पीछे श्री जिनदत्तसूरिजी के शिष्य स्थिर चन्द्र गणि न अपने कर्म क्षयार्थ अजय मेरु दुर्ग म उसके गत भाग को लिखा था।

सुप्रसिद्ध आचार्य श्री हेमचन्द्रजी न गुर्जरेश्वर महाराजा कुमार पाल की कीर्ति पल्ली-देश (पाली प्रदेश) में भ्रमण करती सूचित की है। उनकी देशी नाम माला (वर्ग ६, गा १३२ वृत्ति में इस भाव का ११८ वाँ पद्य है।

"अमुणिअ तत्थ—गुणामिय !,

जयसिरि—वीवाह ! मुक्कया तुज्झ

मुग्ग रव समर कित्ती,

मुद्धाइत्ती किं या पल्लि टम ति ?"

भावार्थ —जिसका तेज स्फुरित अद्वितीय नहीं हुआ है, ऐसे [हे महाराजा कुमारपाल !] अन्य वस्तुओं को छोड़ कर असमर्थों के साथ विवाह करने वाले [हे महाराज] तुम्हारी कीर्ति, सभी स्त्रियों की तरह पल्लि देश (पाली के देश) में भी क्या भ्रमण नहीं करती है ? [illegible]

महाराजा कुमारपाल ने अपने बाहुपराक्रम से रणांगण में शाकंभरी (सांभर) के राजा आन्न (अर्णोराज) पर विजय प्राप्त किया था, इसका इसमें स्मरण है।

जैसलमेर भण्डार ग्रन्थ सूची (पृ० ६ गा० ओ० सिरीझ नं० २१) में हमने दर्शाया है।

वि० सं० १२१४ की शरद् ऋतु में, इस पल्ली (पाली) में साहार सेठ के स्थान में निवास कर जिनचन्द्रसूरि के शिष्य विजयसिंहसूरि ने उमास्वाति वाचक के जम्बूद्वीप समास की विनेयजनहिता टीका रची थी। [देखो तत्त्वार्थ सूत्र का परिशिष्ट, कलकत्ता आवृत्ति]

विक्रम की १२—१५ वीं शताब्दी की पल्लीवाल वंश की प्रशस्तियां

आचारांग सूत्र की ताडपत्रीय पुस्तिका, जो पाटन (गुजरात) संघवीपाडा के ग्रन्थ-भंडार में विद्यमान है, उसके अन्त में पल्लीवाल वंश की तारीफ इस प्रकार है—

"उत्तुङ्गः सरलः सुवर्णरुचिरः शाखाविशालच्छविः
सच्छायो गुरु शैल लब्ध निलयः पत्रश्रियाऽलंकृतः ।
सद वृत्तान्वयुतः सुपत्र गरिमा मुक्ताभिरामः शुचिः
पल्लीपाल इति प्रसिद्धमगमद वंशः सुवंशोपमः ॥"

पल्लीवाल (स) ब्राह्मणों ने पत्तनपुर में महाराज जयसिंह को सूचित की थी। ऐसा उल्लेख—वि सं १३३४ क प्रभाचन्द्रसूरि के सं प्रभावक चरित्र [वीरा चार्य चरित्र श्लो० १६—१६] में मिलता है।

सिद्धराज और कुमारपाल के महामात्य प्राग्वाटवंशीय आनन्द पुत्र पृथ्वीपाल ने वि० सं १२०१ ज्येष्ठ वदी ६ रविवार को अपने श्रेय के लिए कराई श्री विमलनाथ और श्री अनन्तनाथ देव जिन युगल मूर्तियाँ पल्लिका (पाली) के महावीर चैत्य में अर्पण की थी।

उसका लेख श्री नाहर जैन लेख संग्रह (भा १ से ८१४ ८१५) तथा श्री जिन विजयजी प्रा जैन लेखसंग्रह भा०२ से ३८१) में दर्शाया है। श्रीगुजरातनो प्राचीन मंत्रि वंश नामक मेरा लेख ओरियन्टल कॉन्फरेन्स ७ वा अधिवेशन निबन्ध संग्रह में सन् १६३५ बड़ौदा से प्रकाशित हुआ उसमें सूचित किया है।

जसलमेर किले के ग्रन्थ भंडार में रही हुई पंचाशक वृत्ति के ताड़ पत्रीय पुस्तक के अन्त में स दो पद्यों में उल्लेख है कि विक्रम संवत १२०७ में पल्ली-भंग के समय उस त्रुटित पुस्तक को ग्रहण किया था पीछे श्री जिनदत्तसूरिजी के शिष्य स्थिर चन्द्र गणि ने अपने कर्म क्षयार्थ अजय मेरु दुर्ग में उसके गत भाग को लिखा था।

सुप्रसिद्ध आचार्य श्री हेमचन्द्रजी ने गुर्जरेश्वर महाराजा कुमार पाल की कीर्ति पल्ली-देश (पाली प्रदेश) में भ्रमण करती सूचित की है। उनकी देसी नाम माला (वर्ग ६, गा १३५ वृत्ति म इस भाव का ११८ वाँ पद्य है।

"अमुरिअ सम्म—मुहासिय !

जयसिरि—वीवाह ! मुक्कपा सुज्झ

मुराइ एव अमइ कित्ती,

मुआमग्गी किं वा पल्लि वसं रि !"

भावार्थ —जिसका तेज-स्फुलिंग त्रुटित नही हुआ है, ऐसे [हे महाराजा कुमारपाल !] अन्य बन्धुओ को छोड कर जयश्री के साथ विवाह करने वाले [हे महाराज] तुम्हारी कीर्ति, असती स्त्री-डुम्बीकी तरह पल्लि देश (पाली के देश) मे भी क्या भ्रमण नही करती है ? गा५।

महाराजा कुमारपाल ने अपने बाहु-पराक्रम से रणागण मे शाकभरी (साभर) के राजा आन्न (अर्णोराज) पर विजय प्राप्त किया था, इसका इसमे सस्मरण है।

जेसलमेर भण्डार ग्रन्थ सूची (पृ० ६ गा० ओ० सिरीझ न० २१) मे हमने दर्शाया है।

वि० स० १२१५ की शरद् ऋतु मे, इस पल्ली (पाली) मे साहार सेठ के स्थान मे निवास कर जिनचन्द्रसूरि के शिष्य विजयसिंहसूरि ने उमास्वाति वाचक के जम्बूद्वीप समास की विनेयजनहिता टीका रची थी। [देखो तत्वार्थ सूत्र का परिशिष्ट, कलकत्ता आवृत्ति]

विक्रम की १२—१५ वी शताब्दी की पल्लीवाल वंश की प्रशस्तियां

आचाराग सूत्र की ताडपत्रीय पुस्तिका, जो पट्टन (गुजरात) सघवीपाडा के ग्रन्थ-भडार मे विद्यमान है, उसके अन्त मे पल्लीवाल वश की तारीफ इस प्रकार है—

"उत्तुङ्गः सरलः सुवर्णरुचिरः शाखाविशालच्छविः
सच्छायो गुरु शैल लब्ध निलयः पत्रश्रियाऽलंकृतः ।
सद्वृत्तत्वयुतः सुपत्र गरिमा मुक्ताभिरामः शुचिः
पल्लीपाल इति प्रसिद्धमगमद् वंशः सुवंशोपमः ॥"

पल्लीवास (ल) ब्राह्मणों ने पत्तनपुर में महाराज जयसिंह को सूचित की थी। ऐसा उल्लेख–वि सं १३३४ में प्रभाचन्द्रसूरि के सं प्रभावक चरित्र [वीरा चार्य चरित्र श्लो० ११—१६] में मिलता है।

सिद्धराज और कुमारपाल के महामात्य प्राग्वाटवंशीय आनन्द पुत्र पृथ्वीपाल ने वि० सं १२ १ ज्येष्ठ बदी ६ रविवार को अपने श्रेय के लिए कराई श्री विमलनाथ और श्री अनन्तनाथ देव जिन युगल मूर्तियाँ पल्लिका (पाली) के महावीर चैत्य में स्थापन का थी।

उनका लेख श्री नाहर जैन लेख समह (भा १ से ८१४ ८१५) तथा श्री जिन विजयजी प्रा जैन लेखसंग्रह भा० २ से ३८१) में दर्शाया है। श्रीगुजरातनो प्राचीन जैन बण नामक मेरा लेख ओरियन्टल कॉन्फरेन्स ७ वा अधिवेशन निबन्ध संग्रह में सन् १९३५ बड़ौदा से प्रकाशित हुआ उसमें सूचित किया है।

जेसलमेर किले के ग्रन्थ भंडार में रही हुई पचाशक वृत्ति के ताड़ पत्रीय पुस्तक के अन्त में से दो पद्यों में उल्लेख है कि विक्रम संवत् १२०७ में पल्ली भंग के समय उस म लिख पुस्तक को ग्रहण किया था पीछे श्री जिनदत्तसूरिजी के शिष्य स्थिर चन्द्र गणि ने अपने कर्म क्षयार्थ अजय मेरु दुर्ग में उसके अध भाग को लिखा था।

सुप्रसिद्ध आचार्य श्री हेमचन्द्रजी ने गुर्जरेश्वर महाराजा कुमार पाल की कीर्ति पल्ली-देश (पाली प्रदेश) में भ्रमण करती सूचित की है। उनकी देशी नाम माला (वर्ग ६, गा १३५ वृत्ति में इस भाव का ११८ वाँ पद्य है।

"अमुरिम देस—मुक्ताभिप !,
जयसिरि—पीवाह ! मुक्कपा तुज्म
मुरह एव भमइ कित्ती,
सुभायत्ती किं च पल्लि देस नि !"

भावार्थ—पल्लीवाल नामक वंश को इसमें सुन्दर चंदन-वृक्ष की उपमा देकर उसकी साथ तुलना की है। जैसे चन्दन-वृक्ष ऊंचा सरल सुवर्ण से मनोहर होता है शाखाओं से विलास शोभा युक्त होता है छाया वाला होता है बड़े भारी शैल (पर्वत) के ऊपर स्थान प्राप्त करने वाला होता है पत्तों से अलंकृत होता है सद् वृत्तपन से युक्त होता है सुन्दर पत्रों से गौरव वाला होता है मोतियों से मनोहर और पवित्र होता है इस तरह पल्लीवाल वंश भी ऊंचा है सरल है सुवर्ण से सुन्दर है शाखाओं से विलास कान्तिवाला छाया वाला है बड़े भारी पर्वत पर जिसने स्थान मन्दिर प्राप्त किया है जो पर्व-महत्ता से अलंकृत है सदाचरण से युक्त है सुन्दर पत्रों से गौरव वाला मोतियों से मनोहर और पवित्र होने से प्रसिद्धि को पाया है।

इस पल्लीवाल वंश में धन्न नामक यशस्वी सद्गृहस्थ श्वेताम्बर जैन हो गया जिसने श्री पार्श्वजिनेश्वर का मन्दिर कराया था। उसकी पत्नी का नाम माढ़ पुत्रों का नाम १ सामड़ २ सामंत था। उनकी बहिन श्रीमती ने गुरुपदेश से संसार की असारता समझकर धर्मसिंहसूरि के पास दीक्षा ग्रहण की थी उसकी बहिन धांधूने विशाल आचारांग-सूत्र (निर्युक्ति के साथ) लिखवाकर श्रीमती गणिनी को दिया था उसने यह पुस्तक व्याख्या के लिए श्री धर्मघोष सूरि को अर्पण किया था। ७ श्लोक वाली यह प्रशस्ति पत्तनस्थ प्राच्य जैन भाण्डागारीय ग्रन्थ सूची (गा० ओ० सि० न० ७६ पृ० १ ८-१०६) में हमने दर्शाई है। इसका अवतरण जैन पुस्तक प्रशस्ति संग्रह (पृ० ४४ ५६ में हुआ है।

इसका विवरण स्व० ओझाजी ने इस इतिहास में पृ० ७१ में दिया है। शायद वे पत्तन भा० ग्रन्थसूची को न देख सके।

"तन्वानं स्वकलाकलापमधिकं वर्यार्जवालंकृतं,
लक्ष्मीर्वंशनटीव यं श्रितवती प्रेङ्खद्‌ गुणाध्यासितम् ।
रङ्गान्नोत्तरणा भिलापमकरोद या (यो) वर्ण्यतामागता (तः),
पल्लीपाल इति प्रसिद्ध महिमा वंशोऽस्ति सोऽयं भुवि ।"

भावार्थ—अपने अधिक कला-कलाप को विस्तारने वाले, श्रेष्ठ आर्जव-सरलता से अलकृत, तथा श्रेष्ठ गुणो से विभूपित जिस वश को लक्ष्मी, वश-नटीकी तरह आश्रित होकर, रङ्ग से उतरने का अभिलाष नही करती है, ईससे जो वर्णन करने योग्य हुआ है—वैसा पृथ्वी मे प्रसिद्ध महिमा वाला यह पल्लीवाल वश है।

सुप्रसिद्ध त्रिपष्टिशलाका पुरुप-चरित (अजितनाथ से शीतलनाथ पर्यन्त पर्व २-३) की ताडपत्रीय प्रति, जो पट्टन (गुजरात) के सघवीपाडा के ग्रन्थ भण्डार मे विद्यमान है, उस पुस्तक के अन्त मे २१ श्लोक वाली प्रशस्ति है जो पट्टन भडार की ग्रन्थ-सूची (गा० ओ० सि० न० ७६, पृ० १३८-१४०) मे हमने दर्शाई है। उसका प्रथम श्लोक ऊपर दिखलाया है। वि० सम्वत् १३०३ उसमे स्पष्ट सूचित किया है।

उस वश के सोही के वशजो मे मदनसुन्दरी और भाव सुन्दरी जैन श्वेताम्बर, साध्वियाँ हुई थी, जिन्होने कीर्तिश्री गणिनी की चरणाराधना की थी (उनकी शिष्याएँ बनी थी।)

कुल प्रभ गुरु का विशुद्ध उपदेश सुनकर, उस वश के धर्म निष्ठ सद् गृहस्थ श्रीपाल ने माता-पिता के सुकृत के लिए उपर्युक्त पुस्तक लिखवाया था, और विक्रम सवत् १३०३ मे उस कुल प्रभसूरिके पट्ट-तिलक नरेश्वरसूरि से व्याख्यान कराया था। यह पुस्तक उस वर्ष मे का० शु० १० के दिन भृगुकच्छ (भरुच) मे ठ० सउवर ने लिखा था।

भावार्थ—पल्लीपाल वाला वश को इसम सुन्दर वंश-वृक्ष की उपमा देकर, उसकी साथ तुलना की है। जैसे वंश-वृक्ष ऊंचा सरल सुवर्ण से मनोहर होता है शाखाओं से विशाल शोभा-युक्त होता है छाया वाला होता है बड़े भारी शैल (पर्वत) के ऊपर स्थान प्राप्त करने वाला होता है पर्वों से समवृत होता है सद् वृत्तपन से युक्त होता है सुन्दर पत्रों से गौरव वाला होता है मोतियों से मनोहर और पवित्र होता है इस तरह पल्लीवाल वंश भी ऊंचा है सरल है सुवर्ण से सुन्दर है शाखाओं से विशाल कान्तिवाला छाया वाला है बड़े भारी पर्वत पर जिसने स्थान मन्दिर प्राप्त किया है जो पर्व-लक्ष्मी से प्रसन्न सदाचरण से युक्त है सुन्दर पत्रों से गौरव वाला मोतियों से मनोहर और पवित्र होने से प्रसिद्धि को पाया है।

इस पल्लीवाल वंश में धना नामक यशस्वी सद्गृहस्थ श्वेताम्बर जैन हो गया जिसने श्री पार्श्वजिनेश्वर का मन्दिर कराया था। उसकी पत्नी का नाम साहू पुत्रों का नाम १ सामड २ सामंत था। उनकी बहिन श्रीमती ने गुरोपदेश से संसार की असारता समझकर धर्मसिंहसूरि के पास दीक्षा ग्रहण की थी उसकी बहिन धांधूने विशाल आचारांग-सूत्र (निर्युक्ति के साथ) लिखवाकर श्रीमती गणिनी को दिया था उसने यह पुस्तक व्याख्या के लिए श्री धर्मघोष सूरि को अर्पण किया था। ७ श्लोक वाली यह प्रशस्ति पत्तनस्थ प्राच्य जैन भाण्डागारीय ग्रन्थ सूची (गा० ओ० सि० न० ७६ पृ० १ न-१०२) में हमने दर्शाई है। इसका अवतरण जैन पुस्तक प्रशस्ति संग्रह (पृ० ११ २६ में हुआ है।

इसका विवरण स्व० सोजाणी ने इस इतिहास में पृ० ७१ में दिया है। शायद वे पत्तन भा० ग्रन्थसूची को न देख सके।

स्वर्गीय सोनाजी ने इस इतिहास में इसका जिकर पृष्ठ ६७-६८ में किया है लेकिन वहां जै० गु० प्र० स० भा० ११ पृष्ठ १४ सूचित किया है मालूम होता है पट्टन भं० ग्रन्थ सूची मुख्य आधार-स्थल को वे न देख सके।

वि० संवत् १३२६ भा० व० २ सोम के दिन धवलक्क (धोलका, गुजरात) में अर्जुनदेव महाराज के राज्य-काल में महामात्य श्री मल्लदेव के समय में स्तम्भ तीर्थ (खंभात) निवासी पल्लीवाल ज्ञातीय भण्० सीमादेवी ने अपने श्रेयोऽर्थ महापुरुष-चरित्र पुस्तक (ताडपत्रीय) लिखाया था जो वर्तमान में श्री विजयनेमिसूरिजी के शास्त्र-संग्रह भण्डार अहमदाबाद में है। इसके मुख्य आधार से शीलांकाचार्य का यह प्राकृत ग्रन्थ चउप्पन्न महापुरुष चरित्र हाल में प्राकृत ग्रन्थ परिषद् (प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी) ग्रन्थ ३ वाराणसी से प्रकाशित हुआ है। इसके पृ० ३३२ की टि० ६ में उपर्युक्त पुस्तक का अन्तिम उल्लेख दिखलाया है।

स्वर्गीय सोनाजी ने इस इतिहास के पृ० ७२ में सिर्फ वर्धमान की प्रति का निर्देश किया है। वह उपर्युक्त पुस्तक सम

।

गुणान्वितो निचितस्तु णं सदा मंजुल,
स्कन्धयुत सुवर्णकलित शाखा—प्रशाखाकुल ।
नूत महिमा प्यात: चिर्ता विपन,
सद्वै चितिमृतो मूर्ध्नोपरिष्ठात स्थित

न (वास) वन वन (वृक्ष) की तरह पुष्प युक्त है अति विस्तृत ऊंचा और सदा मनोहर युक्त, सुवर्ण से शोभता तथा शाखा-प्रशाखाओं से

विभूषित, बहुत महिमा वाला, पृथ्वी मे प्रख्यात, उच्चता से, पर्वतो और राजाओ के मस्तक ऊपर रहा हुआ (राजमान्य) विद्यमान है।

पट्टन (गुजरात) सघवीपाडा के जैन ग्रन्थ-भडार मे न० २६८ सार्धशतकवृत्ति ताडपत्रीय प्रति के अन्त मे वीर जिनेन्द्र के मङ्गल श्लोक के बाद वीरपुर नामक नगर के वर्णन के बाद उपर्युक्त श्लोक है। इस पल्लीवाल वश मे ठक्कुर घ घ नामक माननीय श्रावक और उसकी पत्नी रासलदेवी का गुण-वर्णन अपूर्ण है। यह पुस्तिका इस वश के सज्जनो ने लिखा कर समर्पण की मालूम होती है। यह प्रशस्ति पट्टन भ० ग्र थ सूची (गा० ओ० सि० न० ७६ पृष्ठ १६३) मे हमने दर्शाया है।

स्वर्गीय लोढाजी ने इस इतिहास के पृष्ठ ७१ मे इसका जिकर किया है, लेकिन वहा आधार-स्थान जै० पु० प्र० स० २०३ पृ० ८८ दर्शाया है, पट्टन भ० ग्रन्थ सूची न देख सके।

> पल्लीवाल इति ख्यातो, वंशः पर्वोदितोदितः ।
> सोऽस्ति स्वस्तिकरो धात्र्या, यत्र कीर्तिर्व्यजायत ॥

भावार्थ —पल्लीवाल नाम से प्रख्यात यह वश है, जो पर्वो से उदित उदय वाला है, पृथ्वी मे स्वस्ति-कल्याण करने वाला है, जिस वश मे कीर्ति प्रकट हुई है।

पट्टन (गुजरात) के सघवी पाडा के जैन ग्रन्थ भण्डार मे न० ६० मे रही हुई देवेन्द्रसूरि-कृति उपमिति भव प्रपचा कथा-सारोद्धार (श्लोक बद्ध) के अन्त मे १६ श्लोक वाली विस्तृत प्रशस्ति है, उसका दूसरा श्लोक ऊपर दर्शाया है। इस वश के श्रेष्ठी वीकल की पत्नी रत्नदेवी थी। उनकी शीलवती पुत्री मूल्हणि सुश्राविका थी, जो वज्रसिंह की प्रियतमा थी। जयदेवसूरि की भक्त उस श्राविका ने अपनी सासू

स्वर्गीय लोढाजी ने इस इतिहास में इसरा जिकर पृष्ठ ६७-६८ में किया है लेकिन वहां सं० पु० प्र० सं० प्र० ११ पृष्ठ १४ सूचित किया है मालूम होता है पट्टन सं० ग्रन्थ सूची मुख्य आधार-स्थल को वे न देख सके।

वि० संवत् १३२६ श्रा० ब० २ सोम के दिन धवलक्क (धोलका, गुजरात) मे अर्जुनदेव महाराज के राज्य-काल में महामात्य श्री मरसदेव के समय में स्तम्भ तीर्थ (खंभात) निवासी पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठ० लीलादेवी ने अपने श्रेयोऽर्थ महापुरुष चरित्र पुस्तक (ताडपत्रीय) लिखाया था जो वर्तमान में श्री विजयनेमिसूरिजी के शास्त्र-संग्रह-भण्डार अहमदाबाद में है। इसके मुख्य आधार से शीलाचार्य का यह प्राकृत ग्रन्थ चउप्पन्न महापुरुष चरित्र हाल में प्राकृत ग्रन्थ परिषद् (प्राकृत टेक्स सोसायटी) ग्रन्थ ३ वाराणसी से प्रकाशित हुआ है। इसके पृ० ३३२ की टि० ६ में उपर्युक्त पुस्तक का अन्तिम उल्लेख दिखलाया है।

स्वर्गीय लोढाजी ने इस इतिहास के पृ० ७२ में सिर्फ वर्धमान स्वामी चरित्र की प्रति का निर्देश किया है। वह उपर्युक्त पुस्तक समझना चाहिए।

"पुण्यागण्य गुणान्विता निचिततस्तु ग सत्ग मंजुल,
छायाश्लेषपुत सुवर्णकलित: शाखा—प्रशाखाकुल'।
पल्लीपाल इति प्रभूत महिमा ख्यात: क्षिता विश्रत,
वशो वश इवोच्चकै क्षितिभृतो मूर्ध्नोपरिस्थित स्थित :

भावार्थ—पल्लीपाल (वाल) वंश वंश (वृक्ष) की तरह पुण्य से प्रगणित गुणों से युक्त है अति विस्तृत ऊंचा और सदा मनोहर है छाया-संयोग से युक्त, सुवर्ण से शोभता तथा शाखा-प्रशाखाओं से

विभूषित, वहुत महिमा वाला, पृथ्वी मे प्रख्यात, उन्नता से, पर्वतो और राजाओ के मस्तक ऊपर रहा हुआ (राजमान्य) विद्यमान है।

पट्टन (गुजरात) सघवीपाडा के जैन ग्रन्थ-भडार मे न० २६४ सार्धशतकवृत्ति ताडपत्रीय प्रति के अन्त मे वीर जिनेन्द्र के मङ्गल श्लोक के वाद वीरपुर नामक नगर के वर्णन के वाद उपर्युक्त श्लोक है। इस पल्लीवाल वश मे ठक्कुर घ घ नामक माननीय श्रावक और उसकी पत्नी रासलदेवी का गुण-वर्णन अपूर्ण है। यह पुस्तिका इस वश के सज्जनो ने लिखा कर समर्पण की मालूम होती है। यह प्रशस्ति पट्टन भ० ग्र थ सूची (गा० ओ० सि० न० ७६ पृष्ठ १६३) मे हमने दर्शाया है।

स्वर्गीय लोढाजी ने इस इतिहास के पृष्ठ ७१ मे इसका जिकर किया है, लेकिन वहा आधार-स्थान जै० पु० प्र० स० १०३ पृ० ६४ दर्शाया है, पट्टन भ० ग्रन्थ सूची न देख सके।

पल्लीवाल इति ख्यातो, वंशः पर्वोदितोदितः ।
सोऽस्ति स्वस्तिकरो धात्र्यां, यत्र कीर्तिर्व्यजायत ।।

भावार्थ —पल्लीवाल नाम से प्रख्यात यह वश है, जो पर्वो से उदित उदय वाला है, पृथ्वी मे स्वस्ति-कल्याण करने वाला है, जिस वश मे कीर्ति प्रकट हुई है।

पट्टन (गुजरात) के सघवी पाडा के जैन ग्रन्थ भण्डार मे न० ६० मे रही हुई देवेन्द्रसूरि-कृति उपमिति भव प्रपचा कथा-सारोद्धार (श्लोक वद्ध) के अन्त मे १६ श्लोक वाली विस्तृत प्रशस्ति है, उसका दूसरा श्लोक ऊपर दर्शाया है। इस वश के श्रेष्ठी वीकल की पत्नी रत्नदेवी थी। उनकी शीलवती पुत्री सूल्हणि सुश्राविका थी, जो वज्रसिंह की प्रियतमा थी। जयदेवसूरि की भक्त उस श्राविका ने अपनी मासू

पाटू के भंडारों की बहु परिस्ता लिखवाई थी। पट्टन भं० ग्रन्थ सूची (गा० ओ० सि० नं० ७६ पृ० ४०-४१) म हमने दर्शाया है।

स्वर्गीय मोझाजी ने इस इतिहास म पृ० ६९-७० मे इसका परिचय कराया है बड़ा भाधार स्थान बै० पु० प्र० ई ७० पृष्ठ ९८-९९ दिखलाया है। पूर्वोक्त पट्टन भण्डार-ग्रन्थ सूची को म देख सके।

सुप्रसिद्ध जिम प्रभसूरि ने बि० सं० १३८८ में हम्मीर मोहम्मद (तुगलक) के राज्य-काल में योगिनी पत्तन (दिल्ली) म कल्पप्रदीप (विविध तीर्थ कल्प) ग्रन्थ की रचना पूर्ण की थी। उसमें प्राकृत नासिक्यपुर कल्प से सूचित किया है कि—

नासिक्यपुर म प्राचीन जैन प्रासाद था उसको किसी अत्याचारी ने गिरा दिया है ऐसा सुनकर पल्लीवाल वंश के विभूषण साहु ईश्वर के पुत्र नाग्निस्य के सुपुत्र नाऊ की कुक्षि रूप सरोवर के राज हंस-समान परम श्रावक साहु कुमारसिंह ने फिर नया प्रासाद (जैन मन्दिर) कराया। न्याय से पाया हुआ अपना द्रव्य सफल किया अपने आत्मा को संसार रूप समुद्र से उतारा। इस तरह अनेक प्रकार से सार रूप नासिक महातीर्थ का आराधन भाव से यात्रा महोत्सव करने से धारा विधानों से भाकर के संघ करते हैं, कलिकाल के गर्व को विमर्दन करने वाले भगवत के शासन की प्रभावना करते हैं।

विशेष के लिए देखें विविध तीर्थ कल्प पृ० ५१-५४ सिंघी जैन ग्रन्थमाला ग्रन्थ १० तथा हमारा लिखित श्रीजिन प्रभसूरि अने सुम तान महम्मद।

सबकी पाडा पट्टन भंडार की ग्रन्थ सूची पृ० २४७-२४८ म पल्ली वाल कुल की ३२ श्लोक वाली ऐतिहासिक प्रशस्ति हमने प्रकाशित कराई है लेकिन उस समय वह किस ग्रन्थ के अन्त म है, ज्ञात नहीं था। पीछे गवेषणा से ज्ञात हुआ कि :—

स० १४४२ भाद्र० शु० २ सोम के दिन स्तंभ तीर्थ (खंभात) मे लिखित पचाशक वृत्ति ग्रंथ-ताडपत्रीय पुस्तक के अन्त मे है। उसके प्रारम्भ मे (आभू श्रेष्ठी) नाम है, अन्त से सूचित होता है कि सोम-तिलक सूरीश्वर के पट्टन के ज्ञान भंडार की यह पुस्तिका थी।

उसके १८ वे श्लोक से ज्ञात होता है कि उस वंश के दानी श्रीमान् रत्नसिंह ने संघपति होकर संघ को विमलाचल आदि तीर्थों की यात्रा कराई थी। और [श्लोक २०-२१] सद्गुणी राज-मान्य सिंह ने वि० स० १४२० मे तपागच्छीय श्री जयानन्दसूरि और देव सुन्दरसूरिका सूरिपद-महोत्सव किया था।

सर्व कुटम्बाधिपति इस सिंह के आदेश से तमालिनी (खंभात) मे, धनाक और महदेव ने संवत् १४४१ मे स्तम्भनकाधिप (स्तम्भन-पार्श्वनाथ) के चैत्य मे ज्ञान सागरसूरि (तपागच्छीय) का सूरिपद-महोत्सव किया था।

तथा सौवर्णिक श्रेष्ठ अन्य गृहस्थो ने वि० स० १४४२ मे कुल मंडन सूरि से गुणरत्नसूरि (तपागच्छीय) का सूरिपद-महोत्सव किया था।

इस प्रशस्ति मे सौवर्णिक-श्रेष्ठ साल्हा-कुटुम्ब के गुण-वर्णन के साथ उसके स्वजनो के भी नाम दर्शाये हैं। इस साल्हा की सुशील, विशुद्ध बुद्धिशाली भार्या हीरादेवी जो सौवर्णिक-शिरोमणि लूढा और लाखणदेवी की सुपुत्री थी, उसने शत्रुंजय वगैरह तीर्थों की यात्रा से पुण्योपार्जन किया था।

स्वर्गीय लोढाजी ने इस इतिहास के पृ० ७७ से ८१ तक इस कुल का परिचय, वंशवृक्ष के साथ कराया है लेकिन इसका आधार-स्थान जै० पु० प्र० स० प्र० ४०, पृ० ४२, और प्र० स० प्र० १०२ पृ० ६४ दर्शाया है। मालूम होता है वे, पट्टन भं० ग्रन्थ सूची न देख सके अस्तु

भूमिका धारणा से अधिक विस्तृत हो गई है इससे यहां ही समाप्त कर देता हूं। गवेषणा करने वाले संशोधक सज्जन इससे अधिक इतिहास प्रकाश में लावें और समाज का गौरव बढ़ावें। लेखक प्रेरक प्रकाशक आदि का परिश्रम सफल हो। शुभभूयात्।

सं २०१८]
फा० सु २ बुधवार]

लालचन्द्र भगवान गांधी
(निवृत्त जैन पंडित-बड़ौदा राज्य)
बड़ी वाड़ी रावपुरा बड़ौदा

पल्लीवाल जैन इतिहास

प्रभु-स्तुति

सोमं स्वयंभुवं बुद्धं, नरकांत करं गुरुम् ।
भास्वन्त शंकर श्रीदं; प्रणामि प्रयतो जिनम् ॥

अर्थात—शान्ति के धारक और आल्हादकारी होने से जो साक्षात चन्द्र कहलाते हैं। विना उपदेशक के स्वय ज्ञान प्राप्त करने से जो स्वयभू (ब्रह्मा) कहे जाते हैं। केवल ज्ञानी होने से जो बुद्ध कहलाते हैं। दूसरो कर्म प्रकृतियो के साथ नर्क नामक दैत्य को परास्त करने वाले होने से जो साक्षात विष्णु कहे जाते हैं। अलौकिक बुद्धिमान होने से जो बृहस्पति सभापित होते हैं। केवल ज्ञान से लोकालोक को प्रकाशित करने के कारण जो सूर्य कहे जाते हैं। आसन्न भव्य को मुक्ति सुख प्रदान करने वाले होने से जो शकर कहलाते हैं। स्वर्ग और मोक्ष की लक्ष्मी के देने वाले होने से जो कुवेर कहलाते हैं। ऐसे श्री जिनेन्द्रदेव की मैं मन वचन काया से पवित्र होकर स्तुति करता हूं।

सरस्वती-वन्दना

वाचस्पत्यादयो देवाः, स्व समीहित सिद्धये ।
यां नमन्ति सदा भक्त्या, तां वंदे हंसवाहिनीम् ॥

अर्थात—बृहस्पति आदि देवता भी इच्छित कार्य की सिद्धि के लिए भक्तिपूर्वक जिसको नमन करते हैं। उस हसवाहिनी देवी की मैं वन्दना करता हूं।

पाली और पल्लीवाल

जोधपुर—मारवाड़—अहमदाबाद— रेल्वे लाइन पर पाली एक प्रसिद्ध व्यापारिक नगर है। राजस्थान के प्रसिद्ध व्यापारिक कला-कौशल वाले नगरों में पाली की आज भी गणना है। ठीक एक सहस्र वर्ष पूर्व भी पाली राजस्थान के प्रसिद्ध व्यापारिक नगरों में प्रसिद्ध था और मारवाड़ के भीनमाल जाबालिपुर और ओसियाँ जैसे प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगरों की समृद्धता एवं सम्पन्नता में इससे स्पर्द्धा थी। इतना ही नहीं पाली का व्यापार अरब अफ्रीका ईरान अफगानिस्तान तुर्क यूरोप तिब्बत आदि पश्चिमी-उत्तरीय प्रदेशों के संग भी बड़े पैमाने पर चलता था और राजस्थान मालवा दोआब मध्य प्रदेश गुर्जर भूमियों में पाली के व्यापारी भारी प्रतिष्ठा के साथ व्यापार विनिमय करते थे। जालोर के जालोरी श्रीमालपुर के श्रीमाली प्राग्वाट देशीय प्राग्वाट पोरवाल उपकेशपुर ओसियाँ के ओसवाल बघेरा के बघेरवाल मेड़ता के मेड़तवाल नागौर के नागौरी जैसे अन्य स्थानों एवं भिन्न प्रान्तों एवं विदेशों में स्थानों के नामों से संबोधित किये जाते थे पाली के व्यापारी अथवा निवासी भी पालीवाल पल्लीवाल पल्लकीय विशेषणों से पुकारे जाते थे।

पाली नगर का पल्लीवाल गच्छ और पल्लीवाल जाति का परस्पर संबंध 'पाली' शब्द की समानता पर तो ध्वनित होता

ही है, परन्तु इसके इतिहास एव पुरातत्व सम्बधी प्राचीन प्रमाण भी उपलब्ध होते हैं और राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार श्री ओझाजी, टॉड साहब आदि तथा वर्त्तमान राजस्थानी इतिहासज्ञ भी इन तीनो मे घनिष्ट सबध रहा हुआ बतलाते हैं। पाली मे प्राप्त प्राचीनतम लेख वि० स० ११४८, ११५१ और १२०१ मे पाली पल्लिकीय शब्दो का प्रयोग इन तीनो मे प्राचीनतम सबध को प्रगट करने मे पूर्ण सक्षम है। अधिक ऊहा पोह की आवश्यकता ही प्रतीत नही होती।

कन्नौज के अतिम महाराज राठौड या गहडवाल जयचद के मुहम्मद गोरी के हाथो अन्त मे पराम्त होगए। कन्नौज का साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया। वहाँ से कई राठौड कुल और अन्य प्रतिष्ठित कुल भारत के अन्य भागो मे चले गये और जिसको जैसा अवसर प्राप्त हुआ उसने अपना वैसा-वैसा चलन स्वीकार किया। कई कुल वीरो ने छोटे-छोटे राज्य भी स्थापित किये। ऐसे पुरुषो मे जोधपुर के राठौर राजवश का प्रथम पुरुष रावसीहा था। रावसीहाने आकर पाली मे अपना राज्य स्थापित किया। इसके सबध मे भाति-भाति की कई किवदन्तियाँ प्रचलित हैं, परन्तु यहाँ राठौर राज्य की स्थापना का विषय प्रस्तुत इतिहास का अग नही है। मात्र इतना ही लिख देना पर्याप्त है कि पाली के समृद्ध व्यापारी श्रेष्ठि

(१) गौरी शकर ओझा कृत राजस्थान के इतिहास मे जोधपुर राज्य का इतिहास।

(२) टॉड राजस्थान मे पाली सम्बधी विवरण।

श्रीमंतों की सुरक्षा की नितान्त आवश्यकता थी। पाली उस समय समृद्ध नगरों में अग्रगण्य तो था परन्तु राजधानी नगर नहीं था। पाली को राजा की उपस्थिति अत्यन्त आवश्यक थी। जाबालिपुर का राजा जाबालिपुर में रहता था और पाली धन व्यापार में जाबालिपुर से भी अधिक समृद्ध था। पाली के आस पास छोटे छोटे जागीरदार भूमिपति जालेचा चौहान रहते थे और वे अवसर देखकर पाली को पाली के व्यापार को मार्ग में व्यापारियों को भांति भांति की हानियाँ पहुँचाया करते थे। ठीक ऐसे ही विषम काल में राव सीहा अपने कुछ वीरवर साथियों के साथ इधर पाली होकर जा रहे थे। पाली निवासी प्रतिष्ठित पुरुषों ने राव सीहा को सर्व प्रकार योग्य वीर त्यागी समझ कर पाली में अपना राज्य स्थापित करने की प्रार्थना की। राव सीहा इस अवसर की खोज में तो थे ही। इस प्रकार उन्होंने सहज ही पाली में अपना राज्य स्थापित किया। राव सीहा अपने अन्तिम समय तक पाली में ही राज्य करते रहे। जालौर परगना के बीठू ग्राम में वि स १३३ का क १२ सोमवार का देवल शिला लेख राव सीहा की मृत्यु तिथि का प्राप्त हुआ है। बीठू पाली से १४ मील उत्तर पश्चिम में है।

पल्लीवाल कहे जाने वाले ब्राह्मण वैश्यों के अतिरिक्त बढ़ई, छीपी लोहार, स्वर्णकार आदि भी भारत के भिन्न-भिन्न भागों में

(१) ओझा कृत राजस्थान जोधपुर राज्य का इतिहास देखें।

बसे हुये पाये जाते हैं। इनमे पल्लीवाल ब्राह्मण और पल्लीवाल वैश्य तो पाली के पीछे एक जाति के रूप मे ही प्रतिष्ठित हो गये हैं। पाली मे भी इन दोनो वर्गों मे घनिष्ट सम्बध यजमान पुरोहित रहने का प्रमाण मिलता है। जैसे श्रीमाली वैश्यो का श्रीमाली ब्राह्मणो के साथ सम्बध रहा हुआ प्राप्त होता है ठीक उसी भाति का पल्लीवाल वैश्य और ब्राह्मणो मे सम्बध था।

पाली की प्राचीनता का प्राचीनतम प्रमाण पाली नगर के उत्तर पूर्व मे बना हुआ पातालेश्वर महादेव का विक्रमीय ९वी शताब्दी का बना हुआ मदिर है। इस प्रमाण से यह कहा जासकता है कि पाली की प्राचीनता नवी शताब्दी से भी पूर्व मानी जा सकती है। आज इतना प्राचीन पाली, उतना बडा नगर भले न भी रह गया हो, परन्तु फिर भी वह राजस्थान का प्रसिद्ध व्यापारिक नगर तो आज भी हैं और वहाँ पल्लीवाल ब्राह्मणो के लगभग ५०० घर आज भी बसते हैं। एक मोहल्ला आज भी पल्लीवाल मोहल्ला के नाम से वहाँ कीर्तित है। पाली के पल्लीवाल ब्राह्मण और वैश्य दोनो बडे-बडे व्यापारी वर्ग रहे हैं। इनकी माण्डवी और सूरत जैसे व्यापारी नगरो मे कोठियाँ और दुकाने थी। ये दूर-दूर तक व्यापार करने जाया आया करते थे। खम्भात जैसे सुदूर बन्दर नगर के जैन मन्दिर और ज्ञान भण्डारो मे पल्लीवाल श्वेताम्बर जैन श्रेष्ठियो द्वारा लिखवाई हुई कई ग्रथ प्रतियाँ और प्रतिष्ठित प्रतिमायें सिद्ध कर रही हैं कि विक्रम की तेरहवी चौदहवी शताब्दी तक तो श्वेताम्बर पल्लीवाल कच्छ, काठिया

बाड़ सौराष्ट्र, उत्तर गुर्जर पत्तन के प्रदेशों में सर्वत्र फैल चुके थे। प्रस्तुत इतिहास में वर्णित कई पुरुष परिचयों से यह विश्वास किया जा सकता है। राजस्थान के जयपुर, भरतपुर, अलवर राज्यों में व उत्तर प्रदेश के आगरा ग्वालियर मथुरा विभागों में भी पल्लीवाल वैश्य कुल विक्रम की १५ १६ वीं शताब्दी पर्यन्त भरपूर फैल चुके थे। इसके प्रमाण में भी वर्तमान प्रस्तुत इस लघु इतिहास में कुछ प्रसंग आये हैं।

एक दन्त कथा के अनुसार पाली को वहां के समस्त पल्लीवाल वैश्य और ब्राह्मणों को अकस्मात् भारी धर्म संकट आ उपस्थित होने पर छोड़ कर चला जाना पड़ा था। जाना ही नहीं पड़ा परन्तु साथ ही यह शपथ लेकर कि कोई भी पल्लीवाल अपने को अपनी पिता की सच्ची संतान मानने वाला लौट कर पाली में नहीं बसेगा और वहां का अन्न-जल ग्रहण नहीं करेगा। हमको तो यह कथा पीछे से जोड़ दी गयी प्रतीत होती है ऐसी घटना पाली में विक्रमीय १७ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में घटी उल्लिखित मिलती है। किन्तु इस शताब्दी में तो पाली पर जोधपुर राठौड़ हिंदू राजवंश का शक्तिशाली यवनशासकों द्वारा पूर्ण सम्मानित राज्य था। हिन्दू राज्य मे हिन्दुओं को कोई धर्म-संकट उत्पन्न होना-माना नहीं जा सकता और जो हिन्दू-राज्य यवन-सम्राटों द्वारा समर्पित हो पूर्ण सम्मानित हो तो वैसे हिन्दू राज्य में भी कोई धर्म-संकट उपस्थित हो जाना केवल गप्प है। इतिहास मे भी कहीं ऐसा हुआ प्रतीत नहीं होता कि पाली पर

कभी भयकर हिन्दू-विधर्मी शत्रुओ द्वारा कोई भयकर आक्रमण हुआ हो, जिसके दुखद परिणाम मे पाली के निवासियो को पाली सदैव के लिये त्याग कर जाना पडा हो। राव सीहा ने पाली मे विक्रमीय तेरहवी शताब्दी के अतिम भाग मे अपना प्रभुत्व भली भाति जमा लिया था और उसी राव सीहा के वशजो के अधिकार मे आज तक पाली चला आता रहा। इससे यह तो सिद्ध हो गया कि ऐसा भयकर प्रकोप पाली पर विक्रम की तेरहवी शताब्दी पश्चात् तो नही हुआ। ऐसा प्रकोप इसके पूर्व हुआ तो वह भी माननें मे नही आ सकता। गजनवी और गौरी के आक्रमणो के पूर्व तो कोई हिन्दू-विरोधी शत्रु का आक्रमण राजस्थान मे हुआ नही सुना अथवा पढा गया। इन दोनो के आक्रमणो के स्थान, सवत्, मार्गो की आज इतिहासकारो ने पूरी-पूरी शोध कर के अपनी कई रचनायें इतिहास के क्षेत्र मे प्रस्तुत कर दी है, परन्तु उनमे कही भी पाली पर आक्रमण करने का अथवा आक्रमण के प्रसग मे मार्ग मे पाली को विध्वसित कर देने का कोई वर्णन पढने मे अथवा जानने मे नही आया कि अमुक सैनिक पदाधिकारी द्वारा किये गये अत्याचारो एव धर्मभ्रष्ट व्यवहारो के कारण पल्लीवालो को पाली छोड कर जाना पडा हो। गौरी और उसके सैनिक अथवा उच्चाधिकारी सेना नायक अजमेर से आगे वढे ही नही। गुलाम वश के शासन काल मे जालौर पर, मडोर पर इल्तुतमिम ने वि० स० १२८५-८६ मे आक्रमण अवश्य किया था, परन्तु पाली को भी नष्ट किया हो

ऐसा कोई विश्वासनीय उल्लेख अभी तक प्राप्त नहीं हुआ। और इस समय तो पाली राठौड़ वीरवर रावसीहा की सुरक्षा में आ चुका था। विक्रम की सोलहवी शताब्दी में राठौड़ राजकुल की राजधानी मंडोर से जोधपुर आ गई थी और उन्हीं वर्षों में जोधपुर राज्य का प्रबंध भी समुचित ढग से सुदृढ़ बनाया गया था। इस राज्य सुव्यवस्था के स्थापना काल में यह संभव है कि पाली के ब्राह्मण कुल राजा से अप्रसन्न हो गये हों। पाली में वैसे तो एक लाख ब्राह्मण घरों का होना बताया जाता है परन्तु यह संख्या मानने में नहीं आ सकती। हाँ इतना अवश्य सत्य है कि पल्लीवाल कहे जाने वाले आज के ब्राह्मण अधिक से अधिक संख्या में पाली में ही बसते थे और वैश्यों में भी उनमें से अति समृद्ध घर तो व्यापार करते थे और शेष कृषि का कार्य करते थे। पाली की समस्त कृषि योग्य भूमि पर ब्राह्मणों का एक छत्र अधिकार था। अन्य कृषक जातियों के अधिकार में कृषि योग्य भूमि नाम मात्र को थी। राज्याधिकारियों ने ब्राह्मण कुलों से भूमि लेकर अन्य कृषक लोगों को देने का प्रयत्न किया हो और उस पर ये ब्राह्मण कुल अप्रसन्न होकर संगठित रूप से पाली का त्याग करके चले गये हों। यह कारण इस लिये अधिक माना जा सकता है कि प्राचीन कालों में ब्राह्मण कृषि कर नहीं देते थे और प्रायः राजागण भी इनसे कोई कर नहीं लिया करते थे। पाली जैसे समृद्ध व्यवसायी नगर पर राज्य को व्यय अधिक करना पड़ता ही था और उसके बदले में नगर कुल भी

आय न हो तो यह अधिक समय तक सहनोय भी नही हो सकता था। इस स्थिति मे राज्य ने ब्राह्मण कुलो से जमीन ले-ले कर अन्य कर देने वाले कृपक कुलो को देना प्रारम्भ किया हो और इन कृपक ब्राह्मण कुलो ने अपने साथी वैश्य कुलो से इस हानि की पूर्त्ति मे सहानुभूति चाही हो और वे भी उनके पापरण के लिये सदैव का रीति से अधिक सहाय करने को तैयार न हुए या वल्कि उल्टे उनके पोपरण के भार को कम करने की सोचते रहे हों। इस प्रकार ब्राह्मण और राज्य तथा ब्राह्मण और वैश्यो मे तनाव वढ गया हो और उस पर ये ब्राह्मण कुल सघ वाव कर निकल चले हो, यह मानना सभव है। पल्लीवाल वैश्यो के त्याग का तो कोई प्रश्न उठता ही नही। इतना अवश्य सभव माना जा सकता है कि ब्राह्मण कुलो की सहानिभूति मे इन वैश्य कुलो मे से अधिक अथवा न्यून ने पाली का त्याग किया हो और अन्यत्र जाकर वसे हो। यह सभव भी है, कारण कि वैश्यो और ब्राह्मणो मे गाढ सम्वन्व था। दोनो मे यजमान और पुरोहित का सम्वध था। ब्राह्मण कुलो की अधिक जिम्मेदारी इन वैश्य कुलो पर थी। ब्राह्मणो के कृषि दीन होने पर वह जिम्मेदारी मात्रा मे और अधिक वढने वाली थी। अत' दोनों ने पाली का त्याग करना और अन्य राज्य क्षेत्रों मे जाकर निवास करना सामूहिक रुप से स्वीकार करके यह लोग पाली का त्याग करके चले गये हो। जो कुछ हो धर्म सकट जैसी तो कोई घटना नही हुई। राज्य प्रकोप तो फिर भी माना जा सकता है। परन्तु

वह भी भयंकर रूप से नहीं। मारवाड़ राज्य के उस समय के इस समृद्ध पाली नगर का अगर ऐसा भयंकर विध्वंस हुआ होता अथवा इस प्रकार पूर्णतः खाली कर दिया गया होता तो ऐसी घटना का कुछ तो उल्लेख जोधपुर राज्य के इतिहास में मिलता घटना बढ़ा चढ़ा कर कवित्तों में पिरोई गई है। पाली का त्याग करके ब्राह्मण दक्षिण पश्चिम दिशा में गये और वैश्य पूर्व उत्तर दिशा में यह ठीक भी है। पल्लीवाल वैश्य आज भी मारवाड़ के उत्तर पूर्व मे आये हुये अलवर जयपुर, भरतपुर ग्वालियर राज्यों तथा संयुक्त प्रान्त में अधिक बसे हुए हैं और पल्लीवाल ब्राह्मण उदयपुर, जैसलमेर बीकानेर राज्यों और उनके निकट वर्ती भागों मे। वैसे तो दोनों वर्गों के थोड़े-थोड़े घर तो राजस्थान की एवं मालवा मध्य भारत की सर्वत्र भूमियों में पाए जाते हैं जो धीरे-धीरे व्यापार कृषि धंधा आदि की दृष्टियों एवं अन्य सुविधाओं से आकर्षित हो-होकर आ बसे हैं। मेवाड़ में पल्लीवाल ब्राह्मणों को नन्दवाना बोहरा भी कहते हैं।

पाली और पल्लीवाल ज्ञाति का जैसा परस्पर सम्बंध पाया जाता है। वैसा ही पल्लीवाल पल्लिकीय गच्छ का भी इन दोनों के साथ पाया जाता है। पल्ली गच्छ की स्थापना पाली नगर मे भगवान महावीर के पट्ट पर १७ वें आचार्य जसो (यशो) देव सूरि द्वारा स १२१ वैशाख शु ३ को हुई। उक्त संवत् बीकानेर क बड़े उपाश्रय के ज्ञान भण्डार मे प्राप्त एक अप्रकाशित पल्लीवाल गच्छ पट्टावली में जो श्री नाहटा जी को प्राप्त हुई थी और

जिसकी प्रतिलिपि श्री आत्मानन्द अर्ध शताब्दी ग्रंथ मे श्री नाहटा जी ने अपने लेख 'पल्लीवाल गच्छ पट्टावली' मे दी है, मिलता है। उक्त सवत् कहाँ तक ठीक है, प्रमाणों के अभाव मे कुछ निश्चित रूप से नही कहा जा सकता। इतना अवश्य प्रमाणिक आधार पर लिखा जा सकता है कि पल्लीवाल गच्छ का अब तक प्राप्त प्राचीनतम मूर्त्ति लेख पाली में प्राप्त वि० स० ११४४, ११५१ और १२०१ है। उक्त लेखो मे पल्लिकीय प्रद्योतन सूरि का नाम स्पष्ट है। प्राचीनता और नाम साम्य के कारण पल्लीवाल गच्छ का पाली और पल्ली वाल ज्ञाति से गहरा सम्बन्ध माना जा सकता है, परन्तु यह मानना कि पल्लीवाल ज्ञाति पल्लीवाल गच्छीय आचार्य साधु मुनियो की ही अनुरागिनी अथवा इनको ही गुरु रूप से मानने वाली रही, ठीक नहीं। उपकेश गच्छाचार्य द्वारा प्रति बोधित उपकेश ओसवालो मे जैसे कई गच्छ परम्परा की मान्यतायें प्रचलित हैं, ठीक उसी प्रकार पल्लीवाल गच्छ द्वारा प्रतिबोधित पल्लीवाल ज्ञाति मे भी कई गच्छ मान्यताये पायी जाती हैं और यह पल्लीवाल ज्ञातिय पुरुषो द्वारा प्रतिष्ठित मूर्त्ति मदिर लेखो व प्रशस्तियो से भली भाँति स्पष्ट है। आदि मे तीनो मे घनिष्ट सबध था, यह वस्तुत मान्य है। पल्लीवाल गच्छाचार्यों द्वारा प्रतिष्ठित प्रतिमायें और मदिर अन्य जैन ज्ञातियो जैसे ओसवाल, श्रीमाल आदि के प्रकरणो, वृत्तो मे भी उल्लिखित प्राप्त होते हैं। अत पल्लीवाल गच्छ और पल्लीवाल ज्ञाति मे परस्पर आम्नाय रूढता एव व्यामोह का मानना अप्रमाणिक एव अनुचित हैं।

पल्लीवाल ज्ञाति की उत्पत्ति
और
विकाश एवं निवास

वर्तमान में जितनी ज्ञातियां हैं उनके नाम प्राय यथा स्थान प्रदेश पुर-नगर-ग्राम के पीछे पड़े हुए ही अधिक मिलते हैं। जिन मे बहुत ज्ञातियों के नाम तो प्राय: उक्त प्रकार ही प्र सद्धि में आये हैं। श्रीमालपुर के श्रीमाली खंडेला के खण्डेलवाल ओसियाँ के ओसवाल आदि बारह अथवा तेरह ज्ञातियों मे प्राय सर्वनाम ग्राम और प्रान्तो की प्रसिद्धि को लेकर ही चलते हैं। पाली से पल्लीज्ञाति की उत्पत्ति मानी जाती है। पाली और पल्लीवाल निर्बंध मे इन दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय में यथा प्राप्त एवं यथा संभव लिखा जा चुका है। कुछ विचारक जैन पल्लीवाल ज्ञाति और उसमें भी दिगम्बर पंडित पल्लीवाल ज्ञाति का सम्बंध रखकर पाली से पल्लीवाल ज्ञाति का निकास अथवा उसकी उत्पत्ति स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। परन्तु वे इसकी उत्पत्ति अन्य ज्ञातियो के समान कहाँ से स्वीकार करते हैं? इसका उनके पास कोई उत्तर अथवा आधार नहीं है। ऐसी स्थिति में पाली से ही पल्लीवाल ज्ञाति उत्पन्न हुई मानना अधिक समीचीन है। श्वेताम्बर ग्रथो मे तो पाली और पल्लीवाल गच्छ

एव जाति के प्रगाढ सम्बध को दिखाने वाले कई प्रमाण उपलब्ध हैं जो प्रस्तुत इस लघु इतिहास मे भी यत्र-तत्र आ गये है।

पाली की प्राचीनता के साथ २ पल्लीवाल ज्ञाति की 'पल्लीवाल' नाम से प्रसिद्धि होने की बात समानान्तर सिद्ध नही की जा सकती। पाली नगर का नाम पाली क्यों पडा ? कब पडा ? आदि बातो को प्रमाणो मे सिद्ध करना कठिन है 'पाली' का एक अर्थ तरल पदार्थ निकालने का, एक बर्तन विशेष जो पली, पला और पल्ली कहाते है। २ अर्थ है-ओढने, बिछाने अथवा अन्न, कपास की गाठ बाधने का चद्दर-पल्ली। ३-अर्थ है-पक्ष। ४अर्थ है-छोटा ग्राम। ५ अर्थ है-अनाज

नापने का एक प्रकार का पात्र जिमे जालोर, भीनमाल, जसवतपुरा और साचोर के प्रगणो मे पाली, पायली कहते हैं। आज भी वहा अन्न इसी पायली-माप से तो मापा जाता है जो मणो मे पूरी उतरती है। चार पायली का एक माणा। चार माणा की एक मई और इसी प्रकार आगे भी माप है। अनुमानत चार पायली अन्न का तोल लगभग साढे पाच सेर बगाली बैठना है। यह पाली अथवा पायली माप ही पाली के नाम का कारण बना हो तो कोई आश्चर्य की बात नही। पाली मे और उसके समीपवर्ती भागो मे अधिक बाजरी की कृषि होने के कारण इस तोल की ख्याति के पीछे 'पाली' नाम वर्तमान् पाली का पड गया हो, परन्तु यह भी अनुमान ही है। परन्तु इस मे तनिक सत्यता का भास होता है। पाली मे अन्न-प्रचुरता से होता था और उसको पाली अथवा

पायली से मापा जाता या अत पाली से मापने वाला अथवा पाली रखने वाला कृषक और व्यापारी पल्लीवाला-पालीवाला-पल्लीवाल-पल्लिकीय कहलाता हो और ऐसे पल्लीवालों की अधिक संख्या एवं बस्ती के पीछे यह नगर ही पाली नाम से विश्रुति में आया हो। ऐतिहासिक प्रमाणों के अभाव में मैं इन अनुमानों पर बल देकर नहीं कह सकता परन्तु पाली और पाली नामक माप की नाम साम्यता और पाली में पाली माप का प्राचीन समय से होता रहा प्रचार अवश्य विचारणीय है। जो कुछ हो—चाहे पल्ली—पालीवाल के पीछे नगर का नाम पाली पड़ा हो और चाहे नगर मे पाली (माप) का प्रयोग होने से नगर का नाम पाली पड़ा हो और पाली-पल्ली माप का प्रयोग करने वाले कृषक व्यापारी पल्लीवाल-पालीवाल कहाया हो—इन अटकलों से कोई विशेष प्रयोजन नहीं। विशेष संभव यही है कि यह छोटा ग्राम हो और पीछे बड़ा नगर बन गया हो।

प्रयोजन मात्र इतना ही है कि पाली से पल्लीवाल ज्ञाति का निकास मानना अधिक संगत प्रतीत होता है और यह प्रसंग अनेक कवित्त छन्द कथा बन श्रुतियों में आता है और प्राचीन इतिहास पुरातत्त्व के प्राप्त प्रमाणों पर जब तक कि अन्य स्थल के पक्ष में प्रबल प्रमाण न मिल जाय पाली ही पल्लीवाल ज्ञाति का उत्पत्ति-स्थान माना जाना चाहिए।

इसी पाली नगर से पल्लीवाल गच्छ की उत्पत्ति मानी जाती है। पल्लीवाल गच्छ की उत्पत्ति का अन्य स्थान अभी तक तो

किसी प्राचीन, अर्वाचीन विद्वान् ने नही सुझाया है। पाली को ही उसका उत्पत्ति-स्थान मान लिया गया है। पल्लीवाल गच्छ और पल्लीवाल ज्ञाति का मूल मे प्रतिवोधक और प्रतिवोधित का सम्वध रहा है। इस पर भी पल्लीवाल ज्ञाति का मूल उत्पत्ति-स्थान पाली ही ठहरता है। पल्लीवाल गच्छ विशुद्धत' श्वेताम्वर गच्छ है। पीछे से पल्लीवाल भिन्न गच्छ, सम्प्रदाय, मत अथवा वैष्णव धर्म अनुयायी वन गये हो, तो भी उनके पल्लीवाल नाम के प्रचलन मे उससे कोई अन्तर नही पड सकता।

पल्लीवाल ज्ञाति की उत्पत्ति भी अन्य जैन वैश्य ज्ञातियों के साथ-साथ ही हुई मानी जा सकती है। वैसे तो ओसवाल, पोरवाल और श्रीमाल ज्ञातियो की उत्पत्ति संवन्धी कुछ उल्लेख भ० महावीर के निर्वाण के पश्चात् प्रथम शताब्दि मे ही होना वतलाते है, परन्तु पल्लीवाल गच्छ पट्टावलि जो वीकानेर वडे उपाश्रय के वृहत ज्ञान भण्डार मे हस्त लिखित प्राप्त हुई है उनमे १७ वे पाट पर हुए श्री यशोदेव सूरि ने वि० सवत ३२६ वर्ष वैशाख सुदी ५ प्रल्हाद प्रतिवोधिता श्री पल्लीवाल गच्छ स्थापना लिखा है। जैन ज्ञातियो के अधिकतर जो लेख–प्रतिमा, ताम्र पत्र पुस्तके प्राप्त है। वे प्राय नवी और दसवी शताव्दी और अधिकतर उत्तरोत्तर शताब्दियो के साथ साथ सख्या मे अधिकाधिक पाये जाते हैं। अत' उनका विश्रुति मे आना विक्रम की आठवी शताव्दी और उनके तदनन्तर माना जाता है। इसी प्रकार पल्लीवाल प्राचीनतम लेख वारहवी शताव्दी का वि० स० ११४४ पाली मे प्राप्त हुआ है।

इस पर भी यह कहना ठीक नही है कि पल्लीवाल जाति की उत्पत्ति इसी के समीपवर्ती या इसी शताब्दी में ही हुई हो।

आधुनिक प्राय समस्त जैन जातियों का उद्भव राजस्थान में हुआ है। राजस्थान से ये फिर व्यक्ति, कुल सम के रूप मे व्यापार धंधा राजकीय निमन्त्रणों पर और राज्य परवर्तन, दुष्काल धर्म संकट एवं अर्थोपार्जन के कारणों पर स्थान परिवर्तित करती रही है और धीरे-धीरे विक्रम की बारहवी शताब्दी तक समस्त जैन जातियाँ अपने मूल स्थान से छोटी बड़ी संख्या में निकल कर कच्छ, काठियावाड़ सौराष्ट्र गुर्जर, मालवा, मध्य प्रदेश संयुक्त प्रदेश व्रज आदि भागो मे भी पहुँच गई है। जिसके प्रचुर प्रमाण मूर्ति लेखों से ग्रंथ प्रशस्तियों से एवं राज्यों के वर्णनों से ज्ञात होते हैं। पल्ली वाल जाति भी अन्य जैन जातियों की भाँति कच्छ, काठियावाड़ सौराष्ट्र और गुर्जर में बारहवी और तेरहवी शताब्दी तक और ग्वालियर जयपुर, भरतपुर, अलवर उदयपुर, कोटा करौली व्रज आवरा आदि विभागों के ग्राम नगरों में विक्रम की चौदहवी और पन्द्रहवी शताब्दी पर्यन्त कुछ-कुछ संख्या में और सोलहवी एवं सतरहवी शताब्दी मे भारी संख्या मे उपरोक्त स्थानों में व्यापार धंधा के पीछे पहुंची और यत्र तत्र बस गई। इसकी पुष्टि में इस लघु इतिहास में वर्णित पल्लीवाल ज्ञातीय बन्धुओं द्वारा उक्त स्थानों मे विनिर्मित जैन मंदिर ग्रन्थ प्रशस्तियां और प्रतिष्ठित मूर्तियां प्रमाणों के रूप में लिये जा सकते है।

पालो से निकल कर ज्यो-ज्यो कुल, व्यक्ति ग्रथवा सघ ग्रलग ग्रलग प्रान्तो मे, राज्यो मे जा-जा कर वसते गये, त्यो-त्यो वहा के निवासियो के प्रभाव से सम्पर्क व्यवहार से, मत परिवर्त्तित करते गये और ग्राज यह ज्ञाति जैन धर्म की सभी मत और सम्प्रदायो मे ही विभाजित नही, वरन कुछ पल्लीवाल वैश्य वैश्णव भी है। जैसा ग्रन्य प्रकरणो मे सिद्ध होता है। इस जाति के प्राचीनतम उल्लेख श्वेताम्वरीय हैं और वे श्वेताम्वर ग्र थो ज्ञान भण्डारो और मदिरो मे प्राप्त होते हैं।

मूल स्थान से सर्व प्रथम कौन निकला और कव निकला और वह कहा, जा कर वसा यह वतलाना ग्रत्यन्त कठिन है। फिर भी जो कुछ प्राप्त हुग्रा है वह निम्नवत् है।

यह सुनिश्चत है कि पालीवाल व्राह्मण कुल वहां निस्कर कृपि करते थे। इस प्रकार उनको राज्य को कोई कर नही देना पडता था। ग्रतिरिक्त इसके पल्लीवाल वैश्यो के ऊपर भी उनका निर्वाह का कुछ भार था ही। राज्य ने व्राह्मणो से कर लेने पर वल दिया और वैश्यो ने उसकी पूर्त्ति करना ग्रस्वीकार किया, वल्कि सदैव की जिम्मेदारी को उलटा घटाना चाहा और इस पर 'सहजरुष्ट' होने वाले स्वभाव के व्राह्मण ग्रपने सदियो के निवास पाली का एक दम त्याग करके चल पडे। यह घटना वि० १७ वी शताब्दी मे हुई प्रतीत होती है। पल्लीवाल व्राह्मण कुलों मे पाली का त्याग करके निकल जाने की कथा उनके वच्चे वच्चे की जिह्वा पर है। इसी प्रसग के घटना काल मे पल्लीवाल

वैश्यों को पाली का त्याग करके चले जाने के लिये विवश होना पड़ा हो और यह यों। पल्लीवाल ब्राह्मण कृषक कुलों ने वैश्य कुलों से सहाय मांगी हो अथवा वृत्ति में वृद्धि करने की कही हो और वैश्य कुलों ने दोनों प्रस्ताव अस्वीकार किये और इससे यह तनाव बढ़ चला हो। इससे भी अधिक विश्वस्त कारण यह प्रतीत होता है कि वैश्य कुलों ने अपने ऊपर चले आते ब्राह्मण कुलों के आर्थिक भार को कम करना चाहा हो और ब्राह्मण कुलों ने वह स्वीकार न किया हो। ठीक इसी समस्या के निकट में राज्य ने ब्राह्मण कुलों से कृषि योग्य भूमि छीनना प्रारंभ किया हो और वैश्य कुल यह सोचकर कि ब्राह्मण कुलों को उल्टा अब अधिक और देना पड़ेगा न्यून करना दूर रहा। उक्त घटना काल के कुछ ही पूर्व अथवा उसी समय अधिक अथवा सम्पूर्ण समाज के साथ पाली का त्याग करके निकल चले हों। इस आशय की एक कहानी पल्लीवाल वैश्य कुलों में प्रचलित भी है और वह परिणाम से सत्य भी प्रतीत होती है।

उस समय पाली जैन पल्लीवाल वैश्यों में धनपति साह का प्रमुख होना राय राव की पोथियों में वर्णित किया गया है। यह कहाँ तक प्रमाणिक है इस पर विचार करते हैं तो वह यों सिद्ध होता है कि राम परशाम्‍नीलाल और मोतीलाल के उत्तराधिकारियों के पास में पल्लीवाल जाति की विवरण पोथियाँ हैं। उनकी पोथी में श्रेष्ठि तुलाराम ने श्री महावीर की जय के लिये पल्लीवाल ज्ञातीय ४५ पैंतालीस गोत्रों को निमंत्रित

कर के साथ निकाला था, का वर्णन है। श्री महावीर जी के मन्दिर की स्थापना विक्रमीय १६ उन्नीसवी शताब्दी के सं० १८२६ के आस पास दीवान जोधराज ने की थी। अतः उक्त गाथ की पाथी *१६ उन्नीसवी शताब्दी की प्रथवा पश्चात् लिखी गई है। परन्तु उन्नीसवी शताब्दी में लिखा जाने वाला विवरण निकट की और निकट तम की शताब्दियों का चाहे वह जनश्रुतियों, दन्त कथाओं पर ही क्यों न लिखा गया हो नाम स्थान एवं कार्य-कारणों के उल्लेख में तो विश्वसनीय हो सकती है। इस दृष्टि से उक्त गाथ की उन्नीसवी-बीसवी शताब्दी में लिखी गई पुस्तक में अगर १७ सतरहवी शताब्दी की कोई महत्वपूर्ण घटना प्रसंग वर्णित है तो वह विश्वास करने के योग्य ही समझा जा सकता है।

दूसरा धनपति साह का पल्लीवाल वैश्यों में विक्रमीय सतरहवी शताब्दी में पाली का त्याग करने के कार्य को उठाना इस पर भी विश्वास योग्य ठहरता है कि इसी शताब्दी में पाली ब्राह्मणों ने पाली का त्याग किया था। दोनों में घनिष्ट एवं गाढ सम्बन्ध होने के कारण किसी तृतीय कारण से अथवा दोनों में उत्पन्न हुए कोई तनाव पर दोनो वर्णवाले पाली एक साथ अथवा कुछ आगे पीछे छोड चले हो, यह स्वभाविक है।

तुला राम ने ८५ गोत्रो को निमंत्रित किया था, परन्तु आये ६३ गोत्र ही थे। राय की पुस्तक में तुलाराम के पूर्वजो के नाम इस प्रकार (–) चिन्ह लगा कर सरल पक्ति में लिखे गये हैं कि पिता, पुत्र और भाई को अलग कर लेना सभव नही। गगा

राम खेमकरण और मासीराम भाई हो सकते हैं। तुभाराम खेमकरण का तृतीय पुत्र था। धनपति के दो पुत्र कुम्भा और सोहिल थे। धनपति प्रतिष्ठित श्रीमन्त एवं जाति का नेता था। पल्लीवाल वैश्यों को पालीवाल ब्राह्मणों को १४० टका। (उस समय के दो पैसा) और १४ सीधा सिद्धाहार जिसमें एक सेर आटा और उसी माप से दाल घृत, मसाला देना होता था।[१] यह दैनिक था अथवा सैविक पाक्षिक मासिक वार्षिक इस संबंध में कुछ ज्ञात नहीं हुआ। परन्तु जैसी राजस्थान में प्रथा है यह पाक्षिक होगा और अमावस्या और पूर्णिमा पर प्रत्येक मास दिया जाता होगा। यह लगान भारी थी। धनिपति ने समस्त पल्लीवाल ब्राह्मण कुलों को एकत्रित करके उक्त वृत्ति में कुछ न्यून करने का सुझाव रक्खा। पल्लीवाल ब्राह्मणों ने उक्त प्रस्ताव पर कुछ भी विचार करने से अस्वीकार किया और इस पर दोनों में भारी तनाव उत्पन्न हो गया। निदान धनपति साहू के नायकत्व में पल्लीवाल वैश्य समाज ने पाली का त्याग करके चला जाने का निश्चय किया और वे पाली का त्याग करके मेवाड़ अजमेर, जयपुर, ग्वालियर, मोरेना की ओर चले गये और धीरे-धीरे सर्वत्र राजस्थान मालवा मध्य-प्रदेश और संयुक्त प्रान्त में फैल गये।[२]

---

(१) संख्या १४० बतलाती है कि पल्लीवाल वैश्य घर १४० थे। और भाज की गणना से संकट ठहरता है।

(२) एक स्थान पर पाली का त्याग सं १९८१ में किया गया लिखा है।

पाली से पल्लीवाल वैश्य सघ चल कर सहाजिगपुर आया और साडोरा पर्यंत तो सगठित रूप से बढता रहा। साडोरा से विशेषत सघ सर्व दिशाओ मे विसर्जित होकर यथासुविधा जहाँ तहाँ वस गया। धनपति साह के पुत्र गुंजा और सोहिल साडोरा मे वसे।[3] गुजा के ४५ पैंतालीस और सोहिल के ७ सात पुत्र हुए। इन (५२) पुत्रो के नाम पर अधिकाश गोत्रो की स्थापना हुई कहा जाता है। पल्लीवाल वैश्यो मे इन वावन पुत्रो की स्मृति मे ५२ वावन लड्डू विवाहोत्सवो मे वेटे वालों को लड़की वालो की ओर से दिये जाते हैं।

पल्लीवाल वैश्यो ने पालीवाल ब्राह्मणो की लगान के कारण और पालीवाल ब्राह्मणो ने राज की भूमि लगान के कारण पाली का त्याग कर दिया और पाली कमजोर हो गई। पल्लीवाल वैश्य उत्तर पूर्व और ब्राह्मण दक्षिण पश्चिम की ओर गये। उत्तर पूर्व व्यापार धधा के योग्य स्थल होने से वैश्य व्यापार धधा और कुछ कृषि कार्य मे प्रवृत्त हुए और ब्राह्मण दक्षिण पश्चिम मे कृषि कार्य मे ही पूर्ववत् प्रवृत्त हुए। आज भी दोनो वर्ग उक्त प्रकार ही उक्त प्रान्तो मे ही वास कर रहे हैं। वैश्य तो पाली त्याग के समय से पूर्व भी गुर्जर, काठियावाड,

(३) कही सोहिल को पहले और गुजा को पीछे लिखा है।
नोट—जोधपुर राज्य के इतिहास मे इस भारी घटना का कोई उल्लेख नही है। राज्य भी यहाँ कारण भूत हो और अपयश को दृष्टि से उल्लेख न किया गया हो।

सौराष्ट्र मालवा मध्य प्रदेशों में न्यूनाधिक संख्या में पहुंच गये थे परन्तु पूर्णतः पाली का त्याग इस जाति ने वि की ग्यारहवीं शताब्दी में ही किया यह विश्वस्त है।

ऐसा लिखा एवं जानने को भी मिला है कि पल्लीवाल वैश्य केवल पूर्व उत्तर की ओर ही नहीं गये कुछ ब्राह्मणों के संग अथवा आगे पीछे पश्चिम की ओर जैसलमेर बाड़मेर और दक्षिण में कच्छ, काठियावाड़ से आगे भी गये। ये कुशल व्यापारी तो थे ही। जैसलमेर जैसे अनपढ़ असभ्य प्रदेश में इन्होंने तुरन्त अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। वहां जागीरदार भूमिपतियों को नकद रकम उधार देते और उनकी समस्त आय ये लेते थे। किसानों के ऊपर भी इन बनियों का प्रभाव पड़ा और वे भी इनके वशवर्ती हो गये। कहते हैं कि जैसलमेर के दीवान सालम सिंह को वैश्यों का यह बढ़ता हुआ प्रभाव एवं प्रभुत्व बुरा लगा और उसने इनका बढ़ता हुआ प्रभुत्व रोका ही नहीं लेकिन इनको जैसलमेर राज्य छोड़ देने तक के लिये उसने बाधित किया और निदान तंग आकर ये वहां से अपने अभिनव निर्मित मकानों को पुनः छोड़ कर बीकानेर, सिंध और पंजाब आदि प्रान्तों की ओर बढ़े और जहां तहां बसे। इन प्रान्तों में जहां-तहां ये पल्लीवाल वैश्य बस रहे हैं उनमें प्रायः अधिक उस समय से ही बसते आ रहे हैं। जैसलमेर व बीकानेर राज्य के कई छोटे बड़े ग्रामों में उन्नत मकान एवं खण्डहर उनकी स्मृति आज भी करा रहे हैं। ऐसा जानने को मिलता है कि पाली के अधिकारी राजा ने

पाली के श्रीमन्त वैश्यो ने यवन शत्रुओं के विरुद्ध युद्ध में अर्थ सहायता एवं जन सहाय मांगा। और यह स्वीकार न करने पर उनने वैश्यों को पाली एक दम त्याग करके चले जाने की आज्ञा दी। यह भ्रामक एवं मिथ्या विचार है। तेरहवी शताब्दी मे राव सीहा का पाली पर प्रभुत्व स्थापित हो चुका था। उसके वंशजों में से आज पर्यंत किसी एक नृप को भी यवन सत्ता के विरुद्ध लड़ना न पड़ा। तब यवन शक्ति से लड़ने के लिये सहाय मांगने का विचार उठना ही नहीं। राव सीहा की सत्ता के पूर्व पाली पर जाबालिपुर के राजा का अधिकार था। राव सीहा के पूर्व पाली त्याग का प्रकरण नहीं बना। तब किसी नृप की यह आज्ञा कि पाली त्याग कर चले जाओ उस समय की घटित वस्तु भी नहीं मानी जा सकती।

पल्लीवाल ज्ञाति का प्रसार और उसके गोत्र

तथा

रीति रिवाज

किसी भी समूची ज्ञाति का व्यवस्थित इतिहास लिखना स्थिति धर्म धंधा आदि की दृष्टियों से लिख देना अत्यन्त कठिन है और यह वांछनीय भी नहीं होता। जिनके जीवन में 'हास' की इति रही है अर्थात् जिन नरवरों ने सम्पूर्ण जीवन महान् संघर्ष झेल कर देश धर्म समाज अथवा पुर प्रान्त की सेवा की और अपने कुल को ऊपर उठा कर विभूत बनाया है उनका ही उल्लेख होता है ऐसे पुरुष ही इतिहास के पृष्ठ बनाते हैं। भारत में फिर केवल राजवंशों के अतिरिक्त अन्य वंश अवगणना को ही प्राप्त होते रहे हैं। और महाजन अथवा वैश्य वंश तो लगभग अधिकांश में अवगणित ही रहा है। केवल उन वैश्य कुलों का और उनमें भी उन पुरुषों का जो किसी राज कल की सेवा में रहा उससे प्रतिष्ठा प्राप्त की अथवा कोई तीर्थ या साहित्य की स्मरणीय सेवा की। कुछ-कुछ वर्णन अगर कहीं हो गया और मिल गया तो उनको इतिहास के पृष्ठों में व्यक्तिवत बैठा दिया जाता है। उनके साधारण पूर्वज और वंशजों का फिर कोई पता नहीं चलता। ऐसी विषम स्थिति में किसी भी

जाति का विस्तृत प्रकार सम्बन्ध विवरण तैयार करना असंभव भासी है, फिर भी प्रस्तुत इतिहास में पल्लीवाल जाति कहाँ से कहाँ गई, कहाँ बसी का कुछ लेखा दिया गया है। इस प्रकरण के प्रसार और गोत्रों को स्वयं स्थल से प्राप्त सामग्री के आधार पर जाना हुआ और अधिक वर्णन के करना है इतना देने का प्रयास किया है।

आज भी पल्लीवाल बंधु भारत के प्रायः सर्व भागों में पाये जाते हैं परन्तु १६ १७ शताब्दी में ये उत्तर पूर्व १. अगरौठी (जयपुर राज्य), २. रवाभरा (भरतपुर), ३. मेवात (अलवर राज्य), ४ माड़वाड़ (पहाड़ घोड़), ५ पाठेर (काठेर भरतपुर), ६ आगरा घाटी (आगरा प्रान्त), ७. डाग, ८ करौली (करौली राज्य), और ९ ग्वालियर (मध्य प्रदेश मुरेना आदि) इन ९ भागों में और दक्षिण पश्चिम के जेसलमेर-राज्य, बीकानेर राज्य तथा कच्छ, कठियावाड़ सौराष्ट्र के कोई-कोई पुर, नगरों में रहते थे। उदयपुर, अजमेर, जोधपुर, सिरोही के राज्य तो पाली के चतुर्दिक आ गये हैं। अतः इनका इन नगरों अथवा इन राज्यों में पाया जाना तो बहुत पहिले से था। सतरहवीं शताब्दी पश्चात् इन नगर और प्रान्तों में भी संख्या बढ़ी। छीपा पल्लीवाल अलीगढ़, फिरोजाबाद, कन्नौज, फर्रुखाबाद, हापड़, देहली, अतरौली, छनारी, कोडियागंज, पिडरावल, पहासु, सासनी, काजमाबाद में बसे हुए थे।

गोत्रों पर विचार करते समय यह ध्यान में आता है कि अन्य जैन वैश्यज्ञातियों के गोत्रों की स्थापना से इस ज्ञाति के गोत्र की स्थापना का ढंग भिन्न रहा है। अन्य ज्ञातियों में अनेक गोत्र सम्मिलित हुए और इस ज्ञाति में ज्ञाति के बन जाने के कई शताब्दियों पश्चात् गोत्रों मे विभाजन हुआ। धनपति साह के पुँजा के ५२ पुत्र और सोहिल के ७ पुत्र इन बावन पुत्रों से बावन गोत्र बने कहा जाता है परन्तु मुझे इसमें एक वस्तु देखकर शंका उत्पन्न होती है कि कई गोत्र ग्रामों के पीछे भी नाम विभक्त हुए हैं जैसे बडेरी ग्राम से बडेरिया सत्तावद से सत्तावदिया पीपौरे से पीपोरिया आदि। ज्ञाति में बावन गोत्र माने जाते हैं और वे भी गु जा और सोहिल के बावन पुत्रों से। तब ग्रामों के पीछे जो गोत्र पाये जाते हैं उनकी स्थिति क्या है। तात्पर्य यह है कि ज्ञाति के अधिक गोत्र गु जा और सोहिल के पुत्रों से और कुछ गोत्र ग्रामों के नामों से बने—मानना अधिक संगत है। नीचे बावन गोत्र की सूची दी जाती है। ग्रामों से परिचित पाठक स्वयं समझ सकेंगे कि किस गोत्र के नाम में किस ग्राम के नाम का समावेश है।

गुलाबराम की बीरई पुस्तक से ली गई गोत्र सूची रीति प्रभाकर से उद्धृत सूची तुलाराम की सब यात्रा की गोत्रसूची—इन तीनों को मिलाकर गोत्र सूची प्रस्तुत की है।

पल्लीवालों के ५२ गोत्र

सगेमुरिया, नगेमुरिया, नागेसुरिया यानी सलावदिगा,

१ २ ३

डगिया ममद, डगिया मारग डगियारकम,

४ ५ ६

जनूथरिया ईंट की थाप, जनूथरिया फीम की थाप, राजोरिया,

७ ८ ९

घोर ववार, वहेत्तरिया, भरकोनिया, वरवासिया, वारोलिया,

१० ११ १२ १३ १४

व्रडेरिया, अठवरमिया, नोलाठिया, पावटिया, लैदोरिया,

१५ १६ १७ १८ १९

गिद्दोरात्रकस, घाती, कोटिया, नौवो, लोहकरेरिया, सैगरवासिया,

२० २१ २२ २३ २४ २५

तिलवासिया, चादपुरिया, वारोलिया, दिवरिया, व्यानिया, वैद,

२६ २७ २८ २९ ३० ३१

कासामोरिया, निगोहिया, खैर, चकिया, विलनमासिया, डडुरिया,

३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७

नोहराज, गुढ हैलिया, भावरिया, कुरसोन्यिा, सोहवाल,

३८ ३९ ४० ४१ ४२

पचोरिया, वारीवाल, गुदिया, निहानिया, लपटकिया, दादुरिया,

४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८

मिन्गैरिया	मोवार,	माईमूड़ा	गुवालियर।
४१	१	५१	५२

वैसे तो समस्त पल्लीवाल ज्ञाति एक वर्ग हैं परन्तु विभिन्न भागों में राज्यों में विभाजित हो जाने के कारण और सहज यातायात के साधनों के प्रभाव और प्रान्त प्रदेशों की दूरी के कारण परस्पर का सम्बन्ध स्थगित हो गया और परिणाम यह आया कि धीपी पल्लीवाल मुरेना-मध्य प्रदेश के पल्लीवाल और शेष बड़े भाग के पल्लीवालों में भोजन-व्यवहार एवं कन्या-व्यवहार बन्द हो गये। दोनों ओर नवीन गात्रों की उत्पत्ति से अन्तर गहराई को पहुँच गया। कच्छ, काठियावाड़ सौराष्ट्र, गुर्जर प्रदेशों में बसे हुए पल्लीवाल तो सदा के लिये ही दूर हो गये और उनको अपने गोत्र भी स्मरण नहीं रहे।

धीपापल्लीवाल गोत्र	मुरेना-मध्य प्रदेश के पल्लीवाल गोत्र
१ मकबरपुरिया	१ कायरे
२ अमरैय्या	२ कासमेरिया
३ मौरसावादी	३ बेरोनिवास
४ कठमरया	४ सोहवाल
५ कठोरिया	५ बैर
६ करोड़िया	६ मुढ़िया
७ करोनिया	७ ग्वालियरे
८ कासमेरिया	८ चौमुख्या (चौबन्दार)

९ कोनेवाल
१० गिदौरया
११ चीनिया
१२ चौधरिया
१३ जिवरिया
१४ टेनगुरिया
१५ ठाकुरिया
डडूरिया
१७ दरवाजे वाल
१८ धनकाडिया
१९ नगेसुरिया
२० नारगावादी
२१ पटपस्या
२२ पहाडुआ
२३ फिरोजावादी
२४ भजोरिया
२५ मवाडिया
२६ वजोरिया
२७ वरवासिया
२८ वाकेवाल
२९ वारीलखु (सु)
३० वैदिया

९ चौवा
१० डडूरिया
११ दमेजरे
१२ दिवस्या
१३ धनवासी (धाती)
१४ धुरेनिया
१५ नगेसुरया
१६ निहानिया
१७ पचोरिया
१८ पाडे
१९ पावटिया
२० महेला
२१ माईमूडा
२२ रायसेनिया
२३ लखटकिया
२४ लोहकरेरिया
२५ वडेरिया
२६ वरवासिया
२७ वारीवाल
२८ वेंद भगोरिया
२९ व्यानिया
३० वजारे

१

११	सकटिया	११	समम
१२	सैगर बासिया	१२	समावदिया
१३	हुरकतिया	१३	सारम कम्या
		१४	सासे
		१५	सैगर बासिया

पल्लीवाल-महासमिति की बैठक जो वि॰ सं॰ ११८२ कार्तिक सु॰ १४ तदनुसार सन् २६/१७ नम्बर को मक्लेरा में हुई थी उसमें ४६ ग्राम नगरों के प्रतिनिधियों की सर्वसम्मति से मुरेना-मध्य भारत के पल्लीवाल बन्धुओं को भोजन एवं कन्या व्यवहार में सम्मिलित किया गया था। इसके पश्चात् मुरेना एवं मध्य भारत के पल्लीवाल बन्धुओं ने आगरे के प्रतिष्ठित सज्जन पंडित चिरंजीलाल के सभापतित्व में मुरेना में सम्मेलन करवाया और उसमें लगभग २ दो सौ ग्रामों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। भारी समारोह के मध्य भोजन एवं कन्या व्यवहार-कर्त्तव्य की पुनः पुष्टि का गई।[1] सन् १९३३ फिरोजाबाद के अधिवेशन मे जोपा पल्लीवालों के साथ भोजन-कन्या व्यवहार चालू करने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ था। धामिया और धामेश्वरी गोत्रीय

---

१ पल्लीवाल जैन आगरा सन् १९४१ अप्रैल।

सैलवार भी पल्लीवालो के साथ ही कन्या-व्यवहार करते थे।[२]

विभिन्न प्रान्त एव राज्यो मे विभाजित यह पल्लीवाल ज्ञाति भले दूर-दूर तक फैली हो, परन्तु जन सख्या मे मेरे विचार से वैश्य ज्ञातियो मे सब से छोटी जाति है। लगभग ३५० ग्रामो मे वसती है और जन सख्या मे लगभग ६००० नौ सहस्त्र कुल स्त्री-पुरुष-वाल-बच्चे मिलकर है। जन-सख्या का एक कोष्टक जो मास्टर कन्हैयालाल जी ने सन् १६२० मे प्रस्तुत किया था उसको यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।[3]

---

२ लगभग १५० वर्ष पूर्व दीवान रामलाल जी चौधरी पल्लीवाल का विवाह अलवर के दीवान लाला सालिगराम जी सैलवाल के यहा हुआ था। सैलवान और जैसवाल दोनो मे तो पूर्व से ही कन्या व्यवहार था ही। वैसे दोनो ज्ञातिया विशेषत जैन धर्मी थी ही। उपरोक्त विवाह से इन दोनो जातियो का विवाह सम्बन्ध पल्लीवालो मे भी प्रारम्भ हो गया।

३ तीनो दलो मे अनेक गोत्रो की एव धर्म की समानता है और इस गोत्रीय एव धर्म की समानता पर ही आधुनिक सुधारवादी पल्लीवाल बन्धु भोजन-कन्या-व्यवहार परस्पर चालू करने मे अनुकरणीय सुधार कर सके हैं।

पल्लीवाल ज्ञाति-जन गणना

सन् १९२० ई०

क्रम संख्या	प्रान्त नाम	ग्राम-पुर सं०	घर-संख्या	पुरुष	स्त्री	योग	विवाहित	अविवाहित	विवाहिता	अविवाहिता	विधुर	नौकरी	व्यापारी
१	अजमेर	×	२१	३७	१४	५१	५५	३६	३२	४१	८	१५	११
२	अलवर	४२	११६	५७१	५०२	१०७३	५२६	७०७	४७५	४१८	१६४	५५	१४१
३	आगरा	५४	२७५	५८७	५२१	११०८	४२७	६२१	५१८	३८७	१८३	६६	२७९
४	करौली	३	११	७०	६२	१३२	५२	८	५६	४८	२१	५	६४
५	कानपुर	×	१	४	४	८	७	१	७	१	×	×	१
६	ग्वालियर	१५	३२	६८	६१	१११	५६	७५	६२	४७	२२	२	३१

७	गाजीपुर	१	१	२	१	३	२	१	२	१	×	×	११
८	[illegible]	७३	२८९	८३७	७९१	१६२८	४७५	११५३	७३८	६५३	२३७	७१	२१८
९	नयानगर	×	१	८	९	१७	७	१०	१०	६	१	१	×
१०	फरुक्खा-बाद	×	१	१	२	३	१	२	२	१	×	१	×
११	भरतपुर	७५	२२९	६१०	५१२	११२२	३९६	७२६	४७५	४४७	२०१	४३	१८६
१२	मथुरा	२१	५०	१४४	११७	२६१	१११	१५०	९९	१०१	६१	९	४२
१३	सिरोही	१	५	१२	९	२१	१	२०	८	८	५	×	५
		१८८	१०९८	२९७१	२६२७	५५९८	१९७६	३६२२	२४३७	२२०५	९१५	३०१	७९८

इस कोष्टक में छीपापल्लीवालों की जो कन्नौज अलीगढ़ दिल्ली आदि कई नगर ग्रामों म बसे हैं की गणना नहीं है और इस जन गणना कोष्टक में जयपुर अलवर, भरतपुर स्थानों को छोड़कर शेष राजस्थान के उदयपुर राज्य प्रतापगढ़ डूंगरपुर जोधपुर, जैसलमेर के स्थानों में जन-गणना करते समय भ्रमण नहीं किया गया प्रतीत होता है। छीपा पल्लीवालों की गणना का विचार भी छोड़ दिया ज्ञात होता है। बीकानेर अस्पर्शित है। परन्तु इन राज्यों और अन्य इस ही प्रकार छूटे हुए भारत के भाग में कठिनता पल्लीवाल १ ०-१२ घर होंगे। मुख्यत तो धनी आबादी वाले भागों का उपरोक्त कोष्टक में अंकन आ चुका है। तात्पर्य यह निकलता है कि सन् १९६२ ई में पल्लीवाल जाति की जन गणना समस्त स्पर्शित-अस्पर्शित भागों के निवासियों को मिलाकर भी ९ ०-९५ होगी इससे अधिक नहीं। लगभग ५ वर्ष पहिले किसी धनाढ्य ने विवाह में घर पीछे एक बेला व कटोरी बाँटी थी जिसमें लड्डू भरकर गाँवों में भेजे गये थे उस समय ६ घरों की संख्या बैठी थी। अब खेद है कि संख्या इतने वर्षों में इतनी कम हो गई है।

---

१ गुर्जर-सौराष्ट्र के भागों मे पल्लीवाल बहुत कम संख्या में हैं और वे भी रेल आदि यातायात के साधनों और मीलों में बहुत दूर-दूर। व्यय के अधिक पड़ने के भय से इन बहुत स्थानों मे जनगणना करते समय भ्रमण नहीं किया गया प्रतीत होता है। छीपा पल्लीवालों की गणना का विचार भी छोड़ दिया गया प्रतीत होता है

रीति-रिवाज

१— पल्लीवालो के जहा मन्दिर हैं वहा भादवा मास मे पर्यूषरणपर्व (अठाई) वदी १३ से पचमी तक मानी जाती हैं।

२— पल्लीवालो के कई मन्दिरो से लगे हुए उपाश्रयो मे जतीजी रहते थे और वही धार्मिक क्रियायें कराते थे।

३— पल्लीवालो के मन्दिरो मे श्री महावीर प्रभु के निर्वाण का लड्डू कार्तिक कृष्णा अमावस्या की पिछली रात को अर्थात कार्तिक शुक्ला १ प्रतिपदा की भोर होने से पूर्व चढता है।

४—विवाह के अवसर पर मेलौनी होती है जिसके मुताविक सव विरादरी वालो से जो वारात मे शामिल होते हैं कुछ चन्दा मन्दिर के खर्च को व किसी पुण्य के काम के निमित्त उघाया जाता है। यह चन्दा घराती वराती दोनो जगहो के मनुष्यो से इकट्ठा किया जाता है। इसमे हर एक मनुष्य अपनी इच्छानुसार जो चाहे दे सकते हैं। वेटे वाला १।) रुपये से १०१) रुपये तक दे सकता है। वेटी वाला और उसके घराती भी अपनी इच्छानुसार भेंट करते हैं

५— लडकालडकी की सगाई मे चार वातो का वचाव किया जाता है। १निजगोत्र, २ लडका लडकी के मामा का गोत्र, ३ लडका लडकी के वाप के मामा का गोत्र, ४ लडका लड़की की माताके मामा का गोत्र। इन चारो गोत्रो मे कोई गोत्र किसी से मिले तो सगाई नही होती है और जव नाते और जन्म पत्री की राह से विधि मिल जाती है, तव सगाई होती है।

चौरासी न्यात

चौरासी न्यातों तथा उनके स्थानों के नामों का विवरण

सं०	नाम न्यात	स्थान से
१	श्रीमाल	भीनमाल
२.	श्री श्रीमाल	हस्तिनापुर
३	श्री खंड	श्रीनगर
४	श्रीगुरु	आबूना शीसाई
५.	श्रीगौड़	सिद्धपुर
६.	अगरवाल	अगरोहा
७.	अजमेरा	अजमेर
८.	अयोधिया	अयोध्या
९.	अड़ालिया	अड़ाणपुर
१०	अवधवाल	आंबेरे आबानगर
११	ओसवाल	ओसियाँ नगर
१२	कठाड़ा	काढू
१३	कटनेरा	कटनेर
१४	ककस्थन	बासकूड़ा
१५.	कपोला	नयकोट
१६.	कांकरिया	करौली
१७.	खरवा	खैरवा

१८.	खडापता	खंडवा
१६.	खेमवाल	खेमा नगर
२०.	खडेलवाल	खडेला नगर
८१.	गगराडा	गंगराड
२२	गाहिलवाल	गोहिलगढ
२३	गौलवाल	गौलगढ
२४	गोगवार	गोगा
२५	गीदोडिया	गीदोडदेवगढ
२६.	चकोड	रणथभ चकावा
२७	चतुरथ	चरणपुर
२८	चीतौडा	चित्तौरगढ
२६	चौरडिया	चावंडिया
३०	जायसवाल	जावल
३१.	जालौरा	सोवनगढ जालौर
३२,	जैमवाल	जेसलगढ
३३	जम्बूमरा	जम्बू नगर
३४	टीटौडा	टीटौण
३५,	टंटोरिया	टँटेरा नगर
३६	दूसर	ढाकसपुर
३७	दमौरा	दमोर
३८.	धवलकोप्टी	धौलपुर

३९	धाकड़	धाकगढ़
४	नासगरेसा	नरायणपुर
४१	नागर	नागरग्राम
४२	नेमा	हरिश्चन्द्रपुरी
४३	नरसिंघपुरा	नरसिंघापुर
४४	नवांभरा	नवसरपुर
४५	नागिन्द्रा	नागिन्द्र नगर
४६	नागचस्मा	सिरोही
४७	नाछेला	नाड़ोलाई
४८	नौटिया	नौसनगढ़
४९	पल्लीवाल	पाली
५	परवार	पारानगर
५१	पद्म	पद्म नगर
५२	पौकरा	पोकरणो
५३	पारवार	पारेवा
५४	पौसरा	पौसर नगर
५५	बघेरवाल	बघेरा
५६	बदनौरा	बदनौर
५७	बरमाका	बहापुर
५८	बिदिपावा	बिदिपाव
५९	बौगार	बिमासपुरी
६	भवनगे	भावनगर

६१. मूंगडवार	मूरपुर
६२. महेश्वरी	डीडवाडा
६३ मेडतवाल	मेडता
६४ माथुरिया	मथुरा
६५ मोड	सिद्धपुरपाल
६६. माडलिया	माडलगढ
६७. राजपुरा	राजपुर
६८ राजिया	राजगढ़
६९ लवेचू	लावा नगर
७० लाड	लावागढ
७१ हरसौरा	हरसौर
७२ हूमड	सादवाडा
७३ हलद	हलदा नगर
७४ हाकरिया	हाकगढ नरलवरा
७५ साभरा	साभर
७६ सडोइया	हिंगलादगड
७७. सरेडवाल	सादरी
७८. सोरठवाल	गिरनार सौराष्ट्र
७९. सेतपाल	सीतपुर
८० सौहितवाल	सौहित
८१. सुरन्द्रा	सुरेन्द्रपुर अवन्ती
८२ सोनैया	सोनगढ
८३ सोरडिया	शिवगिराणा

इतिहास कल्पद्रुम माहेश्री कुल शुद्ध दर्पण व जैन सम्प्रदाय शिक्षा

श्वेताम्बरी ८४ गच्छ

श्री वज्रसेन जी के बाद नागेन्द्र चन्द्र निवृत्ति और विद्याधर यह चार आचार्य बने। इनमें से प्रत्येक की इक्कीस २ सम्प्रदाय हुई। इस प्रकार चौरासी गच्छ हुए।

१ प्रोसवाल	१७. साचोरा
२ जीरावला	१८. कुचड़िया
३ बड़गच्छ	१९. सिद्धांतिया
४ पुनमिया	२० रामसेनीया
५. गंवेसरा	२१ आयमीक
६. कोरटा	२२. मलधार
७. मानपुरा	२३ भावराज
८. भरुअछा	२४ पल्लीवाल
९ उडवीया	२५ कोरंडवाल
१० पुनवीया	२६ मावेन्द्र
११ उवकाउमा	२७ धर्मघोष
१२. भिममाल	२८. नागोरी
१३ मुडासिया	२९. उच्चीतवारल
१४ वासाएमा	३० नाणवाल
१५. मच्छपाल	३१ सांडेरवाल
१६ बोयवाल	३२ मांडोवरा

३३ जागला
३४ छापरिया
३५ वारेसठा
३६ ढिवदनीक
३७. चित्रपान
३८ वेगडा
३९ वापड
४० विजाहरा
४१ कुवगपुरा
४२ काछेलिया
४३ सद्रोली
४४ महुदेवाकरा
४५. कपुरसीया
४६ पूर्णतल
४७ रेवइया
४८ सार्धपुनमीया
४९ नगर कोट्रिया
५० हिमारिया
५१. भटनेरा
५१ जीतहरा
५३ जमापन
५४ भीमसेन
५५. मातागढ़िया
५६. कवोंश्रा
५७ ३.वतरिया
५८ वाघेरा
५९. वाहेडिया
६०. सिद्धपुरा
६१ घोघाघरा
६२ नीगम
६३ सगनाती
६४ मगोडी
६५ ब्राह्मणिया
६६ जालोरा
६७ वोकडिया
६८. मुभाहरा
६९ चिमोडा
७० सुराणा
७१. खभाती
७२ वडोदरिया
७३ सोपारा
७४ माडलिया
७५ कोठी (सो)पुरा
७६. घु घका

७७ भंमणा	८१ गुधसिया
७८ पंचमसहीया	८२ बारेजा
७९ पामणपुरा	८३ मुरंडवाल
८० भंभारा	८४ नागद्रहा

जैन साहित्य संशोधक खंड ३ अंक १ से उद्धृत।

पालीवाल ब्राह्मण

वैसे तो कुछ कुछ सकेत पाली मे पल्लीवाल-ब्राह्मणो के निवास, पाली-त्याग और पल्लीवाल वैश्यो के साथ इनके सबध के विषय मे इस प्रस्तुत लघुवृत मे यत्र-तत्र आ चुके हैं। परन्तु जो कुछ इनके सम्बध मे अब तक ज्ञात हो सका है वह और ये मिलाकर एक स्वतत्र शीर्षक मे लिखूं तो अधिक ठीक होगा।

पालीवाल ब्राह्मण पाली मे अपनी ज्ञाति के एक लाख घर होना कहते हैं। यह प्रवाद भ्रामक है। पाली समृद्ध और बडा नगर अवश्य था, लेकिन केवल पल्लीवाल ब्राह्मणो के ही एक लाख घर थे तो अन्य जातियाँ जो वहाँ बसती थी, उन सर्व के मिलाकर कितने लाख घर पाली मे होगे और फिर पाली मे जब कई लाख घर बसते थे तो ऐसे पाली के सबध मे जोधपुर-राज्य के इतिहास मे उतना चढा-बढा वर्णन क्यों नही ? पल्लीवाल वैश्य १४०० सीधा और १४०० टक्का पालीवाल ब्राह्मणो को दिया करते थे। इस दृष्टि से पाली मे इनके भी लगभग १४००-१५०० ही घर होंगे और उनमे ७५००-८००० अथवा १०००० दस सहस्त्र आबाल वृद्ध होंगे।

पाली मे ये लोग विशेषत. कृषि करते थे और राज्य को कोई कर नही देते थे और राज्य भी इनसे कोई कर नही लेता था।

७७ पंभणा ८१ गुवासिया

७८ पंचवसहीया ८२ वारेजा

७९ पासणपुरा ८३ मुरंडगाम

८ पपारा ८४ भागड़सा

जैन साहित्य संशोधक खंड ३ अंक १ से उद्धृत।

इन्होने पाली का त्याग किया था कि पल्लीवाल कहाने वाला तो पाली मे फिर न बसेगा। इस प्रतिज्ञा के विरोध मे अभी पाली मे इनके घर वसते है। इसका कारण यह है कि जव वैश्य और ब्राह्मण दोनो पल्लीवाल ज्ञातियो ने पाली का त्याग सदा के लिये कर दिया तो यह सभव है और सहज समझ मे आने जैसी वस्तु है कि इन प्रभाव-शाली दो ज्ञातियो के सग सग इन पर निर्वाह करने वाली इनसे सबधित ज्ञातिया और कुलो ने भी अवश्य पाली का त्याग किया होगा। उसी समय से जहां जहां ये दोनो ज्ञातिया पाली त्याग कर गई, वसी, वहां वहां लोहार, सुनार खाती आदि कई ज्ञातियां बसी और वे भी पालीवाल लोहार, पालीवाल सुनार इस प्रकार ही कही जाती हैं'

पाली से जैसलमेर, वीकानेर और उदयपुर के राज्य कुछ ही अन्तर पर आ गये है फलत इन तीनो राज्यो मे पालीवाल ब्राह्मण अधिकतर वसे हुए हैं। उदयपुर राज्य मे नाथद्वारा और इसके आस-पास के प्रदेश मे पालीवाल ब्राह्मण अच्छी सख्या मे वसे हुए हैं। तात्पर्य यह है कि इन्होने, वैश्यो ने और कुछ अन्य ज्ञातियो ने जव पाली का त्याग कर दिया और पुन लौट कर कोई पाली की ओर मुडा तक नहीं, तो पाली की समृद्धता एक दम लुप्त हो गई। पाली नगर सून--सान सा हो गया। पाली के कारण जो मारवाड और राजस्थान का व्यापार तिब्वत अरव, अफ्रीका, यूरोप तक फैला हुआ था उसको एक भारी धक्का लगा। हो सकता है जोधपुर के नरेश ने इस धक्के का

इनकी संख्या अधिक होने से पाली की समस्त कृषियोग्य भूमि पर इनका ही अधिकार था। अन्य जातियों को भूमि नहीं मिल सकती थी। पाली समृद्ध एवं व्यापारी नगर होने से राज्य को उसकी सुरक्षा शासन-व्यवस्था के संबंध में भारी व्यय करना पड़ता था। निदान राज्य ने इन ब्राह्मणों के अधिकार में जो अधिक भूमि थी वह और जो इन्होंने बल प्रयोग से नियम विरुद्ध अधिकार में कर रखी थी वह तथा निस्संतान मरने वालों की जो भूमि थी वह-सब राज्य में लेना प्रारंभ किया तो यह लोग राज्य से एक दम रुष्ट होकर पाली त्याग करने पर उद्यत हो गये। उधर वैश्य भी सोचा और दक्षिणा के भार से अपने को हल्का करना चाहते थे। दोनों ओर से निराशा छमकती देखकर वि की सतरहवीं शताब्दी के अंतिम भाग में ये पाली का त्याग कर के निकल पड़े। दक्षिण पश्चिम के प्रान्तों में जा कर बसे। बीका नेर, जैसलमेर पश्चिम में और डूंगरपुर, उदयपुर बांसवाड़ा प्रतापगढ़ तथा रतलाम सैलाना सीतामऊ और धार-निमाड़ के राज्य प्रान्तों में ये फैल कर बसगये। मेवाड़ में ये लोग नन्दवाना कहलाते हैं। कुछ लोग धीरे धीरे कलकत्ता तक भी पहुँचे और वहाँ ये बोहरा कहे जाते है। पल्लीवाल वैश्यों ने भी इनके साथ और आगे पीछे निकट में पाली का त्याग किया उस सम्बंध में संबंधित प्रकरणों में कहा जा चुका है।

आज पाली में पालीवाल ब्राह्मणों के लगभग ३ पाँच सौ घर बस रहे हैं। इनका यहाँ मोहल्ला भी है। यह प्रतिज्ञा करके

कृषि भी कम करते हैं। ये तो कृषि करवाते है और रगेल कृषि से आधा अथवा तीजा चौथा भाग फसल का ले लेते थे। आज भी इस जाति के अधिकांश घर इस पद्धति पर ही कृषि करते और करवाते हैं।

पालीवाल ब्राह्मणो के १२ बारह गोत्र कहे जाते है, परन्तु अब केवल गर्ग, पाराशर, मुद्गलम, आत्रेय, उपमन्यस, वाशिष्ट और जात्रिम ही रह गये है। पाली मे पाराशर गोत्रीय ब्राह्मणो का अधिक प्रभाव था। इनके गोत्र जाजिया, पूनिद, घामट, भायल, ढूमा, पेथड, हरजाल, चरक, सादू कोरा, हरदोलया, वनया यह बारह थे। पालीवाल ब्राह्मण जनेऊ रखते हैं, यज्ञ करते हैं, मृत का दाह सस्कार करते हैं। ये रक्षा बधन का श्रावण १५ का त्योहार नही मनाते हैं। इसका कारण यह बतलाते है कि उस दिन इनको भारी विपत्ति का सामना करना पडा था और पाली का त्याग करना पडा था।

अनुभव होने पर पुनः कुछ विचार किया हो और पालीवाल ब्राह्मणों से व्रत अथवा प्रतिज्ञा भंग करने का आग्रह अनुरोध किया हो। ब्राह्मण 'स्वर्णतुष्टा' 'रुपेस्टा' भी तो कहे गये हैं। राजा फिर जोधपुर जैसे बड़े एवं समृद्ध राज्य के नरेश के आग्रह को मान देकर समीप के मार्गों में आकर बसे हुए ब्राह्मण पुनः पाली में आ कर बस गये हैं। तभी तो पाली में आज भी इन ब्राह्मणों के लग भग ५ घर आबाद हैं और वे अपने प्रत्यावर्तन के हेतु में उपरोक्त आशय जैसी ही बात बतलाते हैं।

पालीवाल ब्राह्मण मुख्य वैष्णव हैं। ये अधिकतर कृष्ण के उपासक हैं जहाँ ये होंगे वहाँ ठाकुर जी (कृष्ण जी) का मंदिर अवश्य होगा। ये लोग भिक्षा नहीं माँगते। कृषि करते हैं और कोई कोई व्यापार करते हैं। इनमें एक दम निर्धन कोई देखा नहीं जाता। गाँव में इनका अच्छा आदर रहता है। कुँआ खुदवाना वापिका बनाना और मन्दिर बनाना यह बहुत ऊंचा धर्म अथवा मानव सेवा का कार्य समझते हैं। परस्पर इनमें बड़ा मेल होता है। अपने निर्धन अथवा कर्महीन ज्ञाति बन्धु की सहायता करना ये अपना परम सौभाग्य मानते हैं। कृषक पाली-वाल ब्राह्मणों से राज्य भी प्रायः कर वसूल नहीं करते थे। इनके समृद्ध अथवा अर्थ की दृष्टि से कुछ कुछ ठीक होने का एक मुख्य कारण यह हो सकता है। इस पद्धति से ये सहज धीरे धीरे कुछ रकम बनाकर सकते थे और फिर व्यापार में भी भाग ले सकते थे। अतः ये स्वयं

जिनचन्द्र की स्त्री का नाम चाहिणी था। चाहिणी की कुक्षी मे एक पुत्री चाहिणी नामा और पाच पुत्र-क्रमश देवचन्द्र, नामधर, महीधर, वीर धवल और भीमदेव हुए। श्रेष्ठि जिनचंद्र प्रतिदिन धर्म-कार्यो मे ही रत रहता था। उसके उक्त चारो पुत्र और पुत्री सर्व वडे जिनेश्वर भक्त थे। ये 'तपा' विरुद के प्राप्त करने वाले श्री जगच्चन्द्रसूरि के शिष्य श्री देवभद्रगणि, विजय चन्द्रसूरि एव देवेन्द्र सूरि त्रिपुटी के अनन्य भक्त थे।

नायिकी के पुत्र धनेश्वर के दो स्त्रिया थी-वेतू और धनश्री। अरिसिह नामक इसके पुत्र था। प्रसिद्ध लाहड के लक्ष्मी श्री (लखमा) नामक स्त्री थी। लाहड ने कई धर्मकृत्य किये, जिनका परिचय आगे दिया जायगा। लाहड के कोई सन्तान नही थी।

जयदेव की स्त्री का नाम जाल्हणदेवी था। जाल्हणदेवी की कुक्षी मे क्रमश वीरदेव, देवकुमार और हालू नामक अयपुत्र रत्न हुए। इन तीनो की सुशीला स्त्रियां क्रमश विजय श्री, देवश्री और हर्पिणी नामा थी।

सहदेव की स्त्री सुहागदेवी की कुक्षी से प्रसिद्ध पेढा और गोसल दो पुत्र उत्पन्न हुए। पेढा की स्त्री खिन्वदेवी वरदीवदेवी अथवा कीलपी नामा थी। इनके क्रमश जेहड, हेमचद्र, कुमार-

---

१ अर्बुदप्राचीन जैन लेख सन्दोह-लेखाक ३५०, ३५५
जैन पुस्तक प्रशस्ति सग्रह पृ० २६ पृ० ३२
श्री प्रशस्ति सग्रह प्रथम भाग (ताड पत्रीय) ता० प० ५० पृ०४४.

श्रेष्ठि वीरदेव देवकुमार और हालू इन तीनो भ्राताओं ने अपने और अपनी माता जाल्हणदेवी के कल्याणार्थ श्री महावीर-स्वामी की प्रतिमा बनवाई। ४

श्रेष्ठि महदेव ने देवकुलिका सख्या ३८ दण्ड ध्वज-कलशादि सहित विनिर्मित करवा कर उपरोक्त तीनो प्रतिमायें उसमे सस्थापित करवाई। और भगवान सभवनाथ के पाचो कल्याणको का लेखपट्ट तैयार करवा कर लगवाया। ५

श्रेष्ठि धनेश्वर और लाहड ने अपने,अपनी माता नायकी और अपनी स्त्रियो के कल्याणार्थ श्री अभिनदन प्रतिमा बनवाई।६

श्रेष्ठि लाहड ने अपनी स्त्री लक्ष्मी के श्रेयार्थ श्री नेमिनाथ बिंब बनवाया। ७

जिनचन्द्र , धनेश्वर और लाहड इन तीनो ने अपनी मातामह वधू हरियाही (हरिणी) के श्रेयार्थ देवकुलिका दण्डकलशादियुतो सख्या ३९ विनिर्मित करवा कर उसमे सपरिकर प्रतिमायें उक्त अभिनदन, नेमिनाथ और शान्तिनाथ भगवान की सस्थापित की। भगवान अभिनदन स्वामी के पाचो कल्याणको का लेखपट्ट उत्कीर्णित करवा कर लगवाया। ८

---

(४) अ० प्रा० जै० लेखसदोह	लेखाङ्क	३४७
(५)		३५१
(६)		३५३
(७)		३५४
(८)		३५५,३५६.

नाम और सामन्त ये चार पुत्र थे। गोसल का विवाह गउरदे नामा कन्या से हुआ था। इनसे हरिचन्द्र और देमती नामा एक पुत्र और एक पुत्री थी।

श्रेष्ठि नेमड के कुटुम्ब में सदा धर्म का प्रभाव रहता था। समस्त कुटुम्ब जिनेश्वरदेव एवं धर्म परम्परा का परम भक्त था। दान, शील, तप एवं भावना धर्म के इस चार सिद्धान्तों पर समस्त कुल का जीवन बना हुआ था। प्रतिदिन कोई-न-कोई उल्लेखनीय धर्मकृत्य तथा साहित्य सेवा सम्बन्धी कार्य होते ही रहते थे। धर्म एवं साहित्य-सम्बन्धी कार्यों का उल्लेख निम्नवत् है —

धर्मकार्य

प्राग्वाटकुलशिरोमणि मंत्री भ्राता महामात्य वस्तुपाल एवं दण्डनायक तेजपाल द्वारा श्री अर्बुदगिरि के ऊपर देलवाड़ा ग्राम में श्री नेमिनाथचैत्य नामक लूणसिंह वसति में श्रेष्ठि नेमड के वंशजों ने दण्डकलशध्वजयुक्त देवकुलिका संख्या १८ और १९ वि. सं. १२९१ के मार्गमाल में विनिर्मित करवाई तथा उक्त दोनों देवकुलिकाओं में ६ प्रतिमाएं सपरिकर प्रत्येक कुलिका में तीन-तीन प्रतिमा नागेन्द्रगच्छीय श्री विजयसेनसूरि द्वारा वि. सं. १२९३ मार्गशीर्ष शुक्ला १ को प्रतिष्ठित करवाकर निम्नवत् विराजमान कीं।

श्रेष्ठि सहदेव ने अपने पुत्र पेथड़ और गोसल के श्रेयार्थ तथा जिनचन्द्र ने स्व एवं स्वमातृ के श्रेयार्थ श्री सम्भवनाथ बिम्ब बनवाया।

श्रेष्ठि देवचन्द्र ने अपनी माता चाहिणी के श्रेयार्थ श्री आदिनाथ बिम्ब करवाया।

---

१ अर्बुद प्राचीन जैनलेख सन्दोह लेखांक १२ १२५.
२ अ प्रा जै ले स लेखांक १२५.
३ " " १२५

श्रेष्ठि वीरदेव देवकुमार और हालू इन तीनो भ्राताओ ने अपने और अपनी माता जाल्हणदेवी के कल्याणार्थ श्री महावीर-स्वामी की प्रतिमा बनवाई। ४

श्रेष्ठि सहदेव ने देवकुलिका सख्या ३८ दण्ड ध्वज-कलशादि सहित विनिर्मित करवा कर उपरोक्त तीनो प्रतिमाये उसमे सस्थापित करवाई। और भगवान सभवनाथ के पाचो कल्याणको का लेखपट्ट तैयार करवा कर लगवाया। ५

श्रेष्ठि धनेश्वर और लाहड ने अपने,अपनी माता नायकी और अपनी स्त्रियो के कल्याणार्थ श्री अभिनदन प्रतिमा बनवाई।६

श्रेष्ठि लाहड ने अपनी स्त्री लक्ष्मी के श्रेयार्थ श्री नेमिनाथ बिब बनवाया। ७

जिनचन्द्र, धनेश्वर और लाहड इन तीनो ने अपनी माताऔ[१] वधू हरियाही (हर्षिणी) के श्रेयार्थ देवकुलिका दण्डकलशादियुतो सख्या ३९ विनिर्मित करवा कर उसमे सपरिकर प्रतिमायें उक्त अभिनदन, नेमिनाथ और शान्तिनाथ भगवान की सस्थापित की। भगवान अभिनदन स्वामी के पाचो कल्याणको का लेखपट्ट उत्कीर्णित करवा कर लगवाया। ८

---

(४) अ० प्रा० जै० लेखसदोह लेखाङ्क ३४७
(५) ३५१
(६) ३५३
(७) ३५४.
(८) ३५५,३५६

श्री शत्रुञ्जय तीर्थ गिरनारतीर्थ अर्बुदतीर्थ पाटण लाटा पल्ली (लारडोल), पालनपुर आदि भिन्न २ स्थानों में जो मैमद के वंशजों ने तीर्थ कार्य किए वह निम्न प्रकार हैं —

१ शत्रु जय—महा तेजपाल द्वारा विनिर्मित श्री नदीश्वर द्वीप नामक चैत्यालय की पश्चिम दिशा के मण्डप में दण्डकम आदि युक्त एक देवकुलिका बनवाई और श्री आदिनाथबिम्ब प्रतिष्ठित करवाया

२—शत्रु जय—महा तेजपाल द्वारा विनिर्मित श्री सत्य पुरीय महावीरस्वामी-जिनालय में एक जिन प्रतिमा और गवाक्ष।

३—शत्रु जय —एक अन्य देवकुलिका में दो गवाक्ष। एक पाषाण-जिन प्रतिमा और एक धातु -चौवीसी।

(४) शत्रु जय-तीर्थ के एक मन्दिर के गूढमण्डप के पूर्व द्वार में एक गवाक्ष उसमें दो जिन बिम्ब और गवाक्ष के ऊपर श्री आदिनाथ भ का एक बिम्ब।

(५) गिरनारतीर्थ-श्री नेमिनाथ के पादुकामण्डप में एक गवाक्ष और श्री नैमिनाथ-बिम्ब।

(६) गिरनारतीर्थ-महामात्य वस्तुपाल टूक में श्री आदि नाथ प्रतिमा के आगे के मण्डप में एक गवाक्ष और एक भगवान नेमिनाथ बिम्ब।

(७) जावालीपुर (जालौर-मारवाड)—श्री पार्श्वनाथ मन्दिर की भमती में श्री आदिनाथ प्रतिमा युत एक देवकुलिका।

(८) तारगातीर्थ—श्री अजितनाथ मन्दिर के गूढमण्डप में आदिनाथ प्रतिमायुक्त एक गवाक्ष।

(९) अणहिल्लपुर पत्तन-हस्तिवाव के निकट के श्री सुविधिनाथ मन्दिर का जीर्णोद्धार और उसमे भ० सुविधिनाथ का नवीन विम्व।

(१०) वीजापुर—एक जिनालय में दो देवकुलिका और उन दोनो मे भ० नेमिनाथ और भ० पार्श्वनाथ के अलग अलग विम्व।

(११) वीजापुर—उक्त जिनालय के मूलगर्भगृह मे दो कवली-खत्तक-गवाक्ष और उनमे एक मे आदिनाथ और एक मे मुनि सुव्रत विम्व।

(१२) लाटापल्ली—सम्राटकुमारपाल निर्मित श्री कुमार-विहार मे जीर्णोद्धारकार्य और श्री पार्श्वनाथ प्रतिमा के सन्मुख के मण्डप मे भ० पार्श्वनाथ विम्व और एक गवाक्ष।

(१३) पह्लादनपुर (पालणपुर) श्री पाल्हण विहार मे श्री चन्द्रप्रभस्वामी के मण्डप मे दो गवाक्ष।

(१४) पह्लादनपुर—उक्त विहार-जिनालय मे ही श्री नेमि-नाथ विम्व के आगे के मण्डप मे श्री महावीर प्रतिमा।

उपरोक्त सर्व तीर्थ, मन्दिर, नगर सम्वन्धी सर्व कार्य नेमड, जयदेव, सहदेव और उनके पुत्रो ने समुदाय रूप से करवायें है और नागेन्द्रगच्छीय श्री विजयसेन सूरि-जी ने प्रतिष्ठा कार्य किया

है। उक्त सकार्यों के करवाने में श्रेष्ठि साहब का नाम विशेषण उल्लिखित किया गया मिलता है।

(१५) आबालीपुर—श्री पार्श्वनाथ मंदिर की भमती में गवाक्ष।

(१६) माटापल्ली—श्री कुमार विहार-मन्दिर को भमती में दण्डकलशादि युक्त एक देवकुलिका और म श्री अजितनाथ की प्रतिमा।

(१७) माटापल्ली—उपरोक्त विहार में ही दो कायोत्सर्गस्थ प्रतिमायें—१ श्री शान्तिनाथ और २-श्री अजितनाथ।

(१८) वाल्य—अणहिल्लपुर पत्तन के निकट के ग्राम बारोप में स वस्तु शाला जिन मन्दिर गूढमण्डप और श्री आदिनाथ बिम्ब।

ये उपरोक्त कार्य श्रेष्ठिजिनचन्द्र की पत्नी चाहिणी देवी के पुत्र स देवचन्द्र ने अपने पिता माता एवं स्वश्रेयार्थ करवाये।

जैन ग्रन्था की प्रतियां लिखवाने में श्रेष्ठि साहब का उत्साह अधिक रहा है जैसा निम्न पंक्तियों से स्वत: आगम-सेवा स्पष्ट हो जाता है। आगम-सेवा सम्बन्धी अधिक प्रे रणा इस कुटुम्ब को तपागच्छीय श्री देवेन्द्र सूरि, विजयचन्द्रसूरि और उपाध्याय देवभद्रगणि के धर्मोपदेशो से अधिक प्राप्त होती रही है और उनके फलस्वरूप भिन्न-भिन्न समता में स्वतन्त्र रूप से और कभी-कभी अन्य श्रावक सज्जनों के

सम्मिलित सहकार कई ग्रंथो की प्रतियां लिखवाकर पौषधशाला, भण्डार एवं मुनियो को भेंट की है।

(१) 'श्री सिद्धानुशासन' की प्रति वि० सं० १२८७ में बीजापुर मे श्रेष्ठि लाहड़ ने अन्य श्रावक सा० रत्नपाल, श्रे० बील्हण और ठ० आसपाल के द्रव्य सहाय से लिखवाई।[१]

(२) 'देववन्दनक' आदि प्रकरण—वि० सं० १२९० माघ शु० १ गुरुवार को बीजापुर मे श्रेष्ठि महदेव के पुत्र सा पेटा (पेटा) और गोमल ने स्वमातृ सौभाग्य देवी के श्रेयार्थ प० असलेण द्वारा लिखवाई। लिखवाने मे श्रेष्ठि लाहड़ का सहयोग था।[२]

(३) श्री नंदि अध्ययनटीका (मलयगिरीय) वि० सं० १२९२ वै० शु० १३ को बीजापुर मे उपा० देवभद्रगणि, प० मलयकीर्ति और प० अजितप्रभगणी के उपदेश से श्रे०लाहड और अन्य श्रावक सा०रत्नपाल, ठा० विजयपाल, श्रे० बील्हण, मह० जिणदेव, ठ० आसपाल, श्र० गोल्हा, ठ० अरसिंह ने सम्मिलित द्रव्य-सहाय से मोक्षफल की प्राप्ति की शुभेच्छा से समस्त चतुर्विध संघ के पठनार्थ लिखवा कर समर्पित की।[३]

(४) श्री आवश्यक बृहद्वृत्ति—वि० सं० १२९४ पौष शु० १० मंगलवार को स्व एवं समस्त कुटुम्ब के श्रेयार्थ सा० लाहड ने लिखवाई।[४]

---

(१) प्र० सं० ता० प्र० ८७ (२) प्र० सं० ता० प्र० ६८, (३) ८४, (४) ५२,

(५) श्री त्रिषष्टि (पर्व २ ३)—वि सं १२६५ आश्विन कृ २ रविवार को बीजापुर में उपा • देवभद्रगणि, पं मलय कीर्ति प कुलचंद्र प देवकुमारमुनि नेमिकुमारमुनि आदि के सदुपदेश से श्रेष्ठि साहड और अन्य श्रेष्ठि ठ आसपाल ने बीसहण ने समस्त साधुगण श्रावकों के पठन वाचनार्थ एवं कल्याणार्थ प्रति लिखवाई। ५

(६) श्री पाक्षिक चूर्णिवृत्ति —वि स १२६६ वै सु• १ गुरुवार को बीजापुर में उपा विजयचंद्र के सदुपदेश से सा नेमड के तीन पुत्र सा राहड सा जयदेव और सा सहदेव ने अपने पुत्रों के सहित श्री चतुर्विध संघ के पठन-वाचनार्थ लिखवा कर स्वश्रेयार्थ अर्पित की। ६

(७) श्री भगवतीसूत्रवृत्ति—वि •स १२६ मार्ग सु ११ सोमवार को बीजापुर में श्री देवचन्द्रसूरि, श्री विजयचन्द्रसूरि के सदुपदेश से श्री साहड ने देवचन्द्र जिनचन्द्र धनेश्वर, सहदेव पेथा स खोमल आदि परिजनों के सहित चतुर्विध संघ के पठन वाचन के लिये लिखवाई। ७

(८) श्री धर्मानुशासन बृहद् त्ति—वि स १२६८ ई माह कृ ७ गुरुवार को बीजापुर में उक्त वृत्ति के प्रथम खण्ड को समस्त श्रावकों द्वारा लिखवाई। इसमें नेमड के वंशजों का परिचय

(५) ३७ २७, जम पुस्तक प्रशस्ति संग्रह म १७७ पृ १२१ (६) २५, (७) ५४

सहयोग रहा होगा।

(९) श्री शब्दानुशासन बृहद्वृत्ति— वि० स० १३०० मे बीजापुर मे श्रे० लाहड ने अन्य श्रावक सा० रत्नपाल, श्रे० वील्हण, सा० आसपाल के द्रव्य-सहाय से लिखवाई। [9]

(१०) श्री उपासकादिसूत्रवृत्ति-वि० स० १३०१ फा० कृ० १ शनिश्चर को बीजापुर मे श्री देवेन्द्रसूरि, विजयचन्द्रसूरि, उपा० देवभद्रगणि के सदुपदेश से सा० नेमड के तीनो पुत्रो सा० राहड, सा० जयदेव, सा० सहदेव ने अपने २ पुत्रो के सहित श्री चतुर्विध सघ के पठन वाचन के लिये स्वश्रेयार्थ लिखवा कर अर्पित की[10]

(११) श्री आचारागचूर्णि—वि० १३०३ ज्ये० शु० १२ को स्व एव समस्त स्वकुटुम्ब के श्रेयार्थ सा० लाहड ने लिखवाई। [11]

(१२) श्री ज्ञाता धर्मकथासूत्र (सवृत्ति)—वि० स० १३०७ मे स्व एव समस्त स्वकुटुम्ब के श्रेयार्थ श्रे० लाहडने लिखवाई।[12]

(१३) श्री व्यवहारसूत्र सवृत्ति (खण्ड २,३)— वि० स० १३०९ भाद्र० शु० १५ को श्रे०लाहड ने समस्त स्वकुटुम्ब के सहित स्व एव समस्त कुटुम्ब के श्रेयार्थ लिखवाई। [13]

उपर्युक्त धर्म कृत्यो एव साहित्य-सेवा कार्यो से सुस्पष्ट है कि मूलपुरुष वरदेव नागोर(राजस्थान) का निवासी था। उसने अथवा

(८) प्र० स० प्र० ६२' (९) ६३,(१०) ५५,(११) ५३,१२) ५१ (१३) २४, ५०

व्यय करके स्वधर्मी बंधुओ का भारी आदर-सत्कार किया था वह संघपति पद से अलंकृत हुआ था।

श्रे० लाहड नायिकी, राहड की द्वितीय भार्या, का पुत्र था। यह शास्त्र-श्रवण मे बड़ी रुचि रखता था और ग्रंथो की प्रतियां लिखवाने मे अपने द्रव्य का व्यय करना सफल मानता था। ऊपर के प्रत्येक तीर्थ सेवा एवं साहित्य-सेवा कार्य मे श्रे० लाहड का नाम अवश्य आया है। इससे स्पष्ट है कि वह उस समय के महान् जिनेश्वर भक्तो मे, ज्ञानोपासको मे, गुरुभक्तो मे अग्रणी था।

श्रेष्ठि नेमड़ के गौरवशाली वंश का वृक्ष

(आगे के पृष्ठ पर देखिये)

---

१ अ० प्रा० जैं० सं० सं० लेखाङ्क ३५०, ३५५

२ जैं० पु० प्र० सं० प्र० २६ पृ० ३२.

३ श्री प्रशस्ति संग्रह प्रथम भाग (ताडपत्रीय) ता० प्र० ५० पृ० ४४

तपागच्छीय श्रीमद विद्यानन्दसूरि एवं श्री धर्मघोषसूरि

इसके पूर्व पृष्ठो मे ही हम पल्लीवाल ज्ञातीय प्रसिद्ध नेमड और उसके वशजो का यथाप्राप्त वर्णन कर चुके है। श्रेष्ठि नेमड के पुत्र राहड के पुत्र के पुत्र जिनचन्द्र की चाहिणी नामा धर्म परायणा सुशीला स्त्री से एक कन्या एव पाच पुत्र हुए थे। चौथा और पाचवा पुत्र वीरधवल और भीमदेव थे। नेमड का समस्त परिवार दृढ जैनधर्मी, धर्म कर्म परायण, गुरुभक्त एव सस्कार पवित्र था। यह नेमड के इतिहास से सिद्ध हो जाता है।

ऐसे जिन शासन सेवक नेमड के कुल मे इन दो-वीरधवल और भीमदेव ने ससार की असारता का विचार करके भव सुधारनेकी शुभ भावनाओ केउदय से आकर्षित होकर तपागच्छीय देवभद्रसूरि, विजय चन्द्रसूरि और देवेन्द्रसूरि की आम्नाय मे वि० स० १३०२ मे उज्जैन नामक प्रसिद्ध एव ऐतिहासिक नगरी मे भागवती दीक्षा ग्रहण की और श्री वीर धवल मुनि विद्यानन्द और श्री भीमदेव धर्मकीर्ति नाम से क्रमश विश्रुत हुए।

विद्यानन्दसूरि-दोनो भ्राताओ ने गुरु सेवा मे रह कर कठिन सयम साध कर उत्तम चारित्र प्राप्त किया एव शास्त्राभ्यास करके प्रशसनीय विद्वत्ता प्राप्त की। विद्यानन्दसूरि ने 'विद्यानन्द' नामक

वरदेव (वरहुडिया)
आसदेव
लक्ष्मीधर
नेमड़ आभड़ माणिक सलखण थिरदेव गुणधर वामदेव सुवर्णा
राहड़ (लक्ष्मी-नायिका) जयदेव (जाल्हणदेवी) सहदेव (सुहागदेवी)
खेढ़ा गोसल
जिनचन्द्र धूसड़ धनेश्वर लाहड़ अभय
(चाहिणी) + (खेतू धनश्री) (लक्ष्मी) + (हरिणी)
वीरदेव देवकुमार हाला
(विजयश्री) (देवश्री) (कीलणी) (गुणदेवी)
अरिसिंह
जेहड़ हेमचंद्र कुमारपाल पासदेव
हरिचंद्र देमती
चाहिणी पुत्री देवचन्द्र नामधर महीधर वीरधवल भीमदेव
(विद्यानन्दसूरि) (धर्मघोषसूरि)
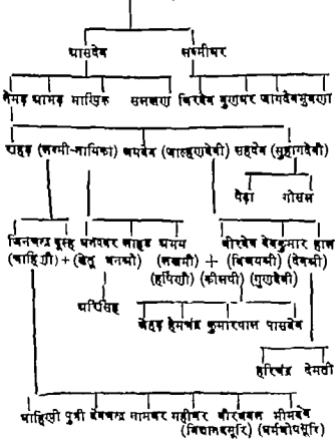
फिर उज्जैन में किसी प्रतिष्ठित जैन धर्म विरोधी मन्त्री का गर्वित शास्त्रार्थ में परास्त करके उसका मानमर्दन किया था और जैन धर्म का भारी प्रभाव प्रसारित किया था। ऐसे कई चमत्कार पूर्ण उल्लेख आपके सम्बन्ध में प्राप्त होते हैं।

माण्डवपुर अथवा माण्डवगढ़ नगर का निवासी उपकेश-ज्ञातीय प्रसिद्ध पेथड़ शाह आपका परम भक्त था और इसी पेथड़ ने आपके सदुपदेशों से प्रेरणा पा कर कई बार तत्त्वावधानता में बड़े बड़े धर्म कार्य-तीर्थ यात्रा संघसम्मान, तीर्थ मंदिर साहित्य सम्बन्धी सेवाओं के भारी भारी व्यय वाले कार्य किये थे। पेथड़ और उसका वंश आपका सदा अनुरागी आज्ञावर्ती ही रहा। यह पेथड़ के इतिहास से स्पष्ट सिद्ध होता है। माण्डवगढ़ में आने के पूर्व पेथड़ विद्यापुर-बीजापुर में रहता था। एक वर्ष आप श्री ने बीजापुर में चातुर्मास किया। आपके व्याख्यानों एवं आपकी गंभीर विद्वता और महान् चारित्र का पेथड़ पर अतिशय प्रभाव पड़ा और फलतः वह आपका परम भक्त हो गया। जब पेथड़ ने अनन्त धन उपार्जित कर लिया और कुछ कारणों से बीजापुर का त्याग करके माण्डवगढ़ में आकर बस गया था तब से उसने आपकी प्रेरणा एवं उपदेशों से जो धर्म और साहित्य की सेवायें की हैं वे जैन इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अति गौरव के साथ स्मरण की जाती हैं। पेथड़ ने आप के सदुपदेशों से मालवा, गुर्जर राजस्थान के सुदूर एवं भिन्न २ ऐतिहासिक एवं प्रसिद्ध नगर तीर्थ राजधानियों

व्याकरण बनाया। श्रीदेवेन्द्रसूरि द्वारा रचित नव्य कर्म ग्रन्थों का श्री धर्मघोषसूरि (धर्मकीर्ति) के साथ रह कर सम्पादन किया। विद्यानन्द व्याकरण एवं नव्य-कर्म ग्रन्थों का सम्पादन ये दो कार्य ही इनकी उद्भट विद्वता का स्पष्ट परिचय कराने को पर्याप्त है। वि. स. १३२३(१) (नवविन १३ ४) में इन दोनों भ्राताओं के तप, संयम एवं शास्त्राभ्यास विद्वत्तादि से प्रसन्न होकर श्री विद्यानन्द मुनि को सूरि पद और धर्मकीर्ति को उपाध्याय पद प्रदान किया गया। वि. स. १३२७ में नव्य कर्म ग्रंथ-कर्ता श्री देवेन्द्र सूरि का मालवा में स्वर्गवास हुआ। उस दिन से ठीक तेरह दिवस पश्चात् श्री विद्यानन्द सूरि भी स्वर्गवासी हुए। और उपाध्याय धर्मकीर्ति धर्मघोषसूरि नाम से पट्ट पर विराजे। धर्मघोष सूरि-य आचार्य चौदहवी शताब्दी के महान् प्रभावक व्याख्यानकार आचार्यों में से थे। सम्राट राजा सामन्त सभापति नगर श्रेष्ठ एवं विद्वान् गण इनका अत्यन्त आदर करते थे। अणहिल्लपुर पत्तन के गुर्जर सम्राटों पर, मालवा के मालकों पर इनका अच्छा प्रभाव था और उनमें गाढ़ मैत्री थी। गुर्जर मालव आदि धर्म एवं साहित्य के प्रसिद्ध क्षेत्रों में इनका बड़ा सम्मान था। इन्होंने देव पत्तन में चपदि नामक यक्ष को प्रतिबोध देकर उसको दृढ़ जैन धर्मी अधिष्ठायक बनाया था। उज्जैन में मोहन वंशी से भ्रमित प्राने एक शिष्य को सत्रवस से स्वस्थ किया था। एक समय

(१) प्र स ४८, पृ ४३ २ पृ ८८
(२) देखिये 'मेवाड़ और उसके वनजों के धर्म कार्य

३—कायस्थिति, ४ भवस्थितिम्तवन

५—चतुर्विशति पर जिनस्तव २४.

६—शास्ताशर्मेत्ति नाम का आदि स्तोत्र

७—देवेन्द्ररनिशम् नाम का श्लेपस्तोत्र

८—युययुवा इति श्लेसस्तुतय

९—जयऋपभेत्ति आदि स्तुत्यादय

इस प्रकार साहित्य एव धर्म की प्रभावना, प्रसिद्धि करते हुए आपका स्वर्गवास वि० स० १३५७ मे हुआ। प्राचीन जैनाचार्यों मे विद्वत्ता एव धर्म-प्रचार-प्रनार की दृष्टियो से आपका स्थान बहुत ऊचा है।

यति परम्परा

पल्लीवालो के मन्दिरो मे विद्वान यतियों की परम्परा भी हुई जो अधिकनर विजयगच्छ मे से हुई। उन मे से कुछ यतियो की नामावलि इस प्रकार है —

श्री मुलतानचन्द्र जी महाराज-वसुआ मे
श्री मूलचन्द्र जी महाराज- माते मे
श्री रामचन्द्र जी महाराज - करौली मे
श्री मेवाराम जी महाराज - अलवर मे
श्री गोविन्दचद्र जी ,, - हिंडौन मे
श्री घनश्यामदासजी ,, - आगरा (धूलियागज मोहल्ले मे)
श्री मुरलीधर जी ,, - वैर मे
श्री मुरलीधर जी " - मिढाकुर मे कठ्यारी मे इन्ही का अधिकार था

में ८४ जिन प्रासाद विनिर्मित करवाये और अनन्त द्रव्य व्यय करके उनका दण्ड-स्वर्ण कलशादि ध्वजा-पताकाओं से प्रतिष्ठित करवाये। सात प्रसिद्ध स्थानों में ज्ञान भण्डार संस्थापित किये। एक वर्ष उसने आपसे ग्यारह (११) अंगों का श्रवण प्रारम्भ किया था जब पांचवा अंग 'भगवती' का श्रवण प्रारम्भ हुआ वह प्रत्येक गोयम पर एक स्वर्ण-मोहर चढ़ाता चला गया। इस प्रकार उसने इस प्रसंग पर ३६ • छत्तीस सहस्र स्वर्ण मोहर चढ़ाई थी। आपके उपदेश एवं सम्मति-आदेश से उसने उक्त विपुल धनराशि की शास्त्रों की प्रतियां लिखवा कर भृगुकच्छादि स्थानों मे संस्थापित करवाने मे व्यय की।

पेथड का पुत्र झांझण भी पिता के सदृशही आपका अनुरागी था। उसने भी आपके उपदेश से विपुल द्रव्य धर्म के सात क्षेत्रों पर समय-समय पर व्यय किया। आपकी निश्रा में संघ यात्रायें की अनेक स्थानों मे छोटे-बड़े जैन मंदिर बनवाये।

आपश्री उच्च कोटि के विद्वान् भी थे। देवेन्द्रसूरि रचित नव्य कर्म ग्रंथो का आपने संशोधन किया था। उनके द्वारा रचित स्वोपज्ञ टीका का भी आपने संशोधन किया। आपने कई नवीन ग्रंथ लिखे जिनकी यथा प्राप्तसूची निम्नप्रकार है :—

१—धर्मरत्नाकर भाष्यवृत्ति २ सुप्रभमेतिस्तव

जै साहित्य का संक्षिप्त इतिहास परिच्छेद ३८ और ३८२

जै गुर्जर कवि भाग २. पृ ७११ ७१७

३—कायस्थिति, ४ भवस्थितिस्तवन

५—चतुर्विंशति पर जिनस्तव २४.

६—शास्ताशर्मेति नाम का आदि स्तोत्र

७—देवेन्द्ररनिशम् नाम का श्लेषस्तोत्र

८—युययुवा इति श्लेसस्तुतय

९—जयऋषभेति आदि स्तुत्यादय

इस प्रकार साहित्य एव धर्म की प्रभावना, प्रसिद्धि करते हुए आपका स्वर्गवास वि० स० १३५७ मे हुआ। प्राचीन जैनाचार्यो मे विद्वत्ता एव धर्म-प्रचार-प्रसार की दृष्टियो से आपका स्थान बहुत ऊंचा है।

यति परम्परा

पल्लीवालो के मन्दिरों मे विद्वान यतियो की परम्परा भी हुई जो अधिकतर विजयगच्छ मे से हुई। उन मे से कुछ यतियो की नामावलि इस प्रकार है —

श्री मुलतानचन्द्र जी महाराज-वसुआ मे

श्री मूलचन्द्र जी महाराज- साते मे

श्री रामचन्द्र जी महाराज - करौली मे

श्री मेवाराम जी महाराज - अलवर मे

श्री गोविन्दचद्र जी ,, - हिंडौन मे

श्री घनश्यामदासजी ,, - आगरा (घूलियागज मोहल्ले मे)

श्री मुरलीघर जी ,, - वैर मे

श्री मुरलीधर जी " - मिढाकुर मे कठयारी मे इन्ही का अधिकार था

श्रीपूज्यजी महाराज डीग में
श्री हुकमचन्द्र जी ,, भरतपुर में
श्रीचन्द्र जी ,, भरतपुर में
श्री कमलनमल जी बयाना में

भरतपुर में जहाँ पर श्वेताम्बर पल्लीवाल मन्दिर है वह भी बती मोहल्ला के नाम से ही प्रसिद्ध है।

पल्लीवालों के कुछ रत्न

श्रेष्ठि श्रीपाल और उनका वंश

तेरहवी शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षो मे भृगुकच्छ मे पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि सोही रहता था। वह मुक्तात्मा, श्रावकाग्रणी, ज्ञानी, शान्त प्रकृति और महान् तेजस्वी था। उसकी स्त्री सुहवादेवी निर्मल बुद्धिमती थी। उनके पासणाग नाम का एक ही पुत्र था। पासणाग की धर्मपरायणा स्त्री पऊश्री थी। इन के तीन पुत्र साजण, राणक और आहड तथा दो पुत्री पद्मो और जसल थी। राणक बालवय मे ही जिनेश्वर का स्मरण करता हुआ स्वर्गगति को प्राप्त हो गया था।

साजण निर्मलात्मा, सत्यवक्ता एव शीलवान् था। सहजमती नाम की उसकी पतिव्रता पत्नी थी। इनके रतघा नाम की एक पुत्री और मोहण, साल्हण नाम के दो पुत्र थे।

आहड की पत्नी का नाम चाँदू था, जो सचमुच कुल की उज्वला चन्द्रिका थी। इनके पाच सन्तानें हुई-आशा, श्रीपाल, धाधक, पदमसिह नाम के चार पुत्र और ललतू नामा एक पुत्री।

आशा की स्त्री आशादेवी थी। जैत्रसिहादि इनके पुत्र थे। श्रीपाल की पत्नी का नाम वील्हुका था और वील्हा नाम का इनके बुद्धिमान पुत्र था। धाधक की स्त्री रुक्मिणी थी। पद्मसिह की स्त्री का नाम लक्ष्मी था और रत्नादि इनके पुत्र थे। ललतू धर्म

धर्मानुरक्ता थी। उसके वास्तू नाम की एक कन्या थी। पद्मसिंह की कन्या कर्पूरी ने और वास्तू ने गणिनी श्रीकीर्ति श्री के पास से साध्वी-दीक्षा ग्रहण की और क्रमशः भावसुन्दरी भवन सुन्दरी साध्वी नाम से प्रसिद्ध हुई।

धर्मात्मा मोहविमत परोपकार परायण गुरुभक्त श्रेष्ठि श्रीपाल ने कुमप्रभगुरु के उपदेश को श्रवण करके स्वमाता-पिता के 'श्रेयार्थ अजितनाथ च र रत्न' पुस्तक को वि स ११ ३ कार्तिक शुक्ला १ रविवार को श्री भृगुकच्छ म ही ठा वसुधर से लिखवाया।

श्रेष्ठि श्रीपाल का वंशवृक्ष

साही (सुहवादेवी)
|
पासणाग (पउमी)
|
साबण (सहजमती) राणक माहड (वाडू) पद्मी वसल

साबण (सहजमती) → रतनपा, मोहण, सामहण
माहड (वाडू) → आसा (आसादेवी), श्रीपाल (श्रीलहका), धावक [रुक्मिणी], पद्मसिंह [लक्ष्मी], वाग्दू
आसा → चैत्रसिंह
श्रीपाल → श्रीलहा
धावक / पद्मसिंह → रत्न, कपूरी
वाग्दू → वास्तू

जै पु प्र सं प्र ११ पृ १४
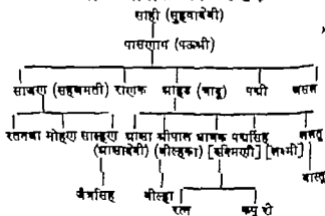
पल्लीवाल ज्ञातीय स्त्रीकुल भूषण श्राविका सूल्हणदेवी और उसका परिवार

वि० की तेरहवी शताब्दी मे पवित्रात्मा वीकल नामक पल्ली-वालज्ञातियश्रेष्ठ रहता था। पवित्रकर्मा रत्नदेवी उसकी पत्नी थी। श्राविका सूल्हणदेवी इनकी प्यारी पुत्री थी। सूल्हणदेवी देव पूजा गुरु-सुश्रुषा एव धर्मकार्य मे नित्य व्यस्त रहा करती थी। उसका विवाह वज्रसिह नामक पल्लीवाल ज्ञातिय एक सुन्दर एव बुद्धिमान युवक के साथ हुआ था। वज्रसिह का कुल परिचय निम्नवत है —

पल्लीवाल ज्ञातिय योगदेव नामक एक सद्गुणी श्रावक वि० बारहवी-तेरहवी शताब्दी मे हो गया है। योगदेव के आमदेव और वीरदेव दो पुत्र थे।

वीरदेव के तीन पुत्र थे-कपर्दी, माक और साढा। साढा का पुत्र आम्रकुमार था, आम्रकुमार की पत्नी का नाम जयन्ती था। आम्रकुमार के पासड नाम का पुत्र और घाई तथा रूपी नामा पुत्रियाँ हुई। पासड की पत्नी पातू नामा थी। पातू की रत्नगर्भा कुक्षी से जगतसिह, वज्रसिह और मदनसिह नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। जगतसिह की स्त्री माल्हणदेवी और वज्रसिह की पत्नी उपरोक्त सूल्हणदेवी थी।

सूल्हणदेवी श्री जयदेव सूरि की परम भक्ता थी। श्रीदेवसूरि
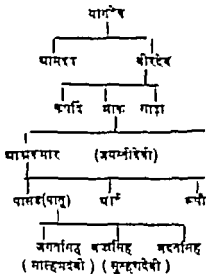
पल्लीवालज्ञातिय श्राविका सांतू और उसका पितृ परिवार

अनुमानत वि० तेरहवी शताब्दी मे पल्लीवालज्ञातीय सद्गुणी धर्मात्मा श्रीचन्द्र नामक श्रावक रहता था। उसकी स्त्री माड नामा अत्यन्त धर्मपरायण और देव,गुरु की परम भक्ता थी। इन के साभड और सामत नामक दो महागुणी पुत्र एव श्रीमती और सान्तू नामा दो पुत्रिया थी। श्रीमती बालवय से ही धर्मानुरागिनी थी। उसने श्रीजयसिंहसूरि के पास मे दीक्षा ग्रहण की। उसकी वहिन सातू ने 'आचारागसूत्र' प्रति लिखवाकर अपनी वहिन श्री-मती गणिनी को भेंट की और श्रीमती गणिनी ने उक्त प्रतिको श्री धर्मघोषसूरि को वाचनार्थ अर्पित की। [१]

पल्लीवालज्ञातीय साधु गणदेव

प्राचीन कालमे पल्लीवालज्ञातीय श्रे० पूना के पुत्र बोहित्थ के पुत्रसुधार्मिक श्रावक गणदेव ने त्रिषष्ठिशलाका पुरुष चरित के तृतीय खण्ड को लिखवा कर श्री स्तम्भनतीर्थ की पौषधशाला मे वाचनार्थ पठनार्थ अर्पित किया। [२]

पल्लवालज्ञातीय ठक्कुर धंध संतानीय

प्राचीन कालमे वीरपुर नामक अति धनी नगर मे पल्लीवाल

ज्ञातीय महा महिमाशाली श्रीमंत ठक्कुर पंच नामक हो गया है। वह बुद्धिमान् सर्वजन सम्मान्य था। रासलदेवी नामा उसकी उदार हृदया धर्मपत्नी थी। इनके किसी वंशज ने सार्धशतकवृत्ति की प्रति लिखवाई। उक्त प्रति में प्रशस्ति का अधिक भाग नष्ट हो गया है अतः लिखाने वाले का पूर्ण परिचय अनुपलब्ध रह जाता है।[१]

पल्लीवालज्ञातीय श्राविका लीलादेवी

वि सं १३२६ श्रावण सु० २ सोमवार को जब कि अब नलकपुर में अर्जुनदेव का राज्य था और श्रीमल्लदेव महामात्य थे। उस समय उक्त दिवस को स्तम्भतीर्थ निवासिनी पल्लीवाल ज्ञातीय सेठ लीलादेवी ने स्वश्रेयार्थ वर्धमान स्वामी चरित्र की प्रति लिखवाई।

—०००—

(१) जै० पु प्र स प्र ४५ पृ ३१

(२) ... १ पृ ६५

(३) १ पृ०२४

(४) २२०पृ १२८

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि लाखण और उसका परिवार

विक्रमीय तेरहवी शताब्दी के मध्य मे स्तभनपुर मे पल्लीवालज्ञातिय श्रेष्ठि साढदेव रहता था।।उसकी स्त्री सादू महा शीलवती स्त्री थी। साढदेव अत्यन्त विनयी, जिनेश्वरभक्त और अतिकीर्तिशाली था। साढदेव के देसल नाम का लघु भ्राता था जिसके पद्मी नाम की विवेकी पत्नी थी। देसल भी अपने ज्येष्ठ भ्राता की भाति सत्यशीलवान् था।

साढदेव के जाजाक, जसपाल नामक दो पुत्र और जानुका नामा एक पुत्री थी। जाजाक परम गुणी, निर्मल कीर्तिवत एव जिनेश्वर देव का अनन्य भक्त था। वैसी ही शील-गुणगर्मा धर्म परायणा, नित्यसुकर्मरता दानपुण्य तत्परा पतिपरायणा उसकी जयतु नामा स्त्री थी। इसके लाखण नामक एक ही पुत्र था जो अपने माता-पिता के सदृश ही पुण्यशाली, सुनीतिवान्, कुशल, क्षमाशील और महान् यशस्वी था।

जसपाल भी बुद्धिमान था। दानशीला सतुका नामा उसकी पत्नी थी। रत्नसिह और धनसिह नाम के इनके दो पुत्र थे।

जानुका जिसको जैन पुस्तक प्रशस्ति सग्रह मे 'नाउका' करके

ज्ञातीय महा महिमाशाली श्रीमंत ठक्कुर धंध नामक हो गया है। वह बुद्धिमान् सर्वजन सम्मान्य था। रासलदेवी माया उनकी उदार हृदया धर्मपत्नी थी। इनके किसी वंशज ने सार्द्धशतकवृत्ति की प्रति लिखवाई। उक्त प्रति में प्रशस्ति का अधिक भाग नष्ट हो गया है अतः लिखाने वाले का पूर्ण परिचय अनुपलब्ध रह जाता है।[३]

पल्लीवालज्ञातीय श्राविका सीलादेवी

वि० सं० १३२६ श्रावण सु० २ सोमवार को जब कि धव लक्कपुर में अर्जुनदेव का राज्य था और श्रीमल्लदेव महामात्य थे। उस समय उक्त दिवस को स्तम्भतीर्थ निवासिनी पल्लीवाल ज्ञातीय महा० सीलादेवी ने स्वश्रेयार्थ 'वर्धमान स्वामी चरित्र'की प्रति लिखवाई।[४]

—०—

(१) जै० पु० प्र० सं० प्र० ५५पृ० ५१
(२) " " १ ५पृ० ६५
(३) " " १ ३पृ० ६४
(४) " " १२७ पृ० १२८

हरिभद्रसूरिकृत "समरादित्य कथा" जैन कथा साहित्य में अत्यन्त विश्रुत कथा है। उसमें धर्म के मुख्य-मुख्य तत्त्व, सिद्धान्तों का अनुभवसिद्ध दर्शन उपलब्ध होता है। शाम्भरसिक श्रेष्ठि लापण ने अपने पिता जाजाक और माता जयतुदेवी के पुण्यार्थ उक्त कथा की प्रति वि० स० १२६६ में श्री रत्नप्रभसूरि के आदेश से लिखवाई और भावना भाई कि सर्वजगत् का कल्याण हो, सर्व-प्राणी परोपकारशील बनें, दोषों का विनाश हो और सर्वत्र सब सुखी हो। इन भावनाओं के साथ उक्त प्रति का व्याख्यान गुरु श्री रत्नप्रभसूरि से सर्व संघ के लाभार्थ करवाया।
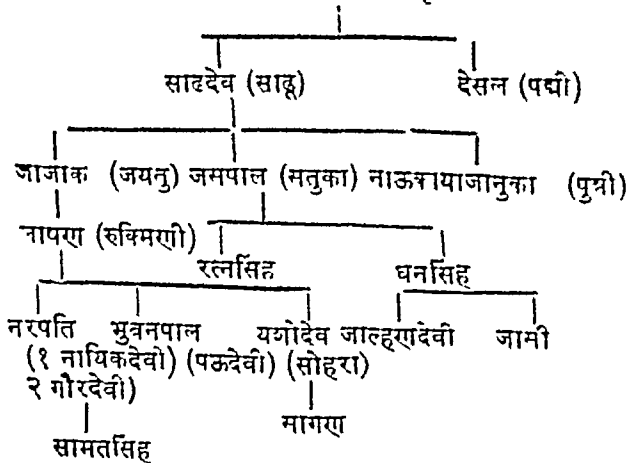
लिखा गया है अपनी अम्नाय में साध्वी बन गई थी और उसने उत्तम संयम पाल कर गुरुणीपद प्राप्त किया था।

नारायण की स्त्री का नाम रुक्मिणी था। रुक्मिणी दान देने में नित्य तत्पर रहती थी। दीनों के प्रति वह बड़ी दया रखती थी। इनके नरपति भुवनपाल और यशोदेव नाम के तीन पुत्र हुए थे। ये तीनों पुत्र तीर्थ गुरु और धर्म की महान् सेवामें करके प्रति प्रसिद्धि को प्राप्त हुए थे। बाल्हणदेवी और बाली नाम की दो पुत्रियां थी। वे दोनों पुत्रियां भी सद्धर्मकर्म निपुणा थी।

नरपति के नायिकदेवी और गौरदेवी नाम की दो स्त्रियां थी। गौरदेवी से उसको सामतसिंह नाम का एक पुत्र प्राप्त हुआ था।

भुवनपाल की स्त्री पार्वदेवी थी जो पृथ्वी मण्डल में अपने शीलरत्न के लिये विख्यात थी।

यशोदेव की पत्नी का नाम सौहगा था। इनके सांवण नामक प्रतिभावान् एक पुत्र था।

नारायण के नाना का नाम राजपाल नानी का नाम राणीदेवी और मामा राणिग और चूटड़ि मामा थे। नारायण तीर्थयात्रा का प्रेमी कुल प्रतिपालक सज्जनों का सदा हित करने वाला संसार की क्षणभंगुरता का समझने वाला सद्ज्ञानी और शास्त्रों के प्रति सदा विनय सम्मान रखने वाला नित्य सुगुरु के दर्शन करनेवाला समाधि ध्यान का ध्याने वाला एक दृढ़ जैन धर्मी श्रावक था।

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि साल्हा
और
उसका प्रसिद्ध कुल

विक्रमीय तेरहवी शताब्दी के अर्ध भाग मे स्तम्भनपुर मे श्रेष्ठि आभू नामक पल्लीवाल ज्ञातीय रहता था। उसके वीरदेव नाम का एक पुत्र था। वीरदेव के दो पुत्र महणसिंह और वीजा (विजयसिंह) हुए।

ज्येष्ठ पुत्र महणसिंह का विवाह महणदेवी से हुआ। इनके राणिग, वइरा और पूना (पूनमचन्द्र) तीन पुत्र हुए। राणिग का पुत्र झाझण था। झाझण के चार पुत्र थे सलषा, विज (य) पाल, निरया और जेमल। सलषा के खीमसिंह, विजयपाल के जयसिंह और नरसिंह और तृतीय पुत्र निरिया के, उसकी नागलदेवी नामा स्त्री से लखमसिंह, रामसिंह और गोवल तीन पुत्र रत्न हुए।

वीरदेव के कनिष्ठ पुत्र वीजा की स्त्री श्रीदेवी नामा से कुमारपाल भीम और मदन नाम के तीन पुत्र उत्पन्न हुए। कुमारपाल का वश नही चला। सभव है वह अविवाहित अथवा बालवय मे ही स्वर्ग सिधार गया हो। भीम की स्त्री कर्पूरदेवी थी। मदन का विवाह सरस्वती नामक कन्या से हुआ था और उसके देपाल-नामक पुत्र था।

पल्लीवालज्ञातिय श्र० तेजपाल

वि० स १२९५ माघ सु ११ रविवार को स्तम्भतीर्थ मे महामण्डलेश्वर वीसलदेव के राज्य—काल में श्रीविजयसिंह दण्डनायक के प्रशासन मे सण्डेरगच्छीय यति आसचन्द्र के शिष्य प गुणाकर के अनुरागी श्रावक सौवर्णिक पल्लीवाल ज्ञातीय ठा विजयसिंह पत्नी ठ सन्तपणदेवी के पुत्र आस (राज) और तेजपाल ने आत्मश्रेयार्थ श्री योग शास्त्र (१ प्र०) ठ रत्नसिंह से लिखवाकर अर्पित किया ।०

—

अ पु प्र स प्र २० पृ २१
प्र० स पृ० १६ प्र० २१
प्र स पृ ८३ प्र ११५

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि साल्हा
और
उसका प्रसिद्ध कुल

विक्रमीय तेरहवी शताब्दी के अर्ध भाग मे स्तम्भनपुर म श्रेष्ठि आभू नामक पल्लीवाल ज्ञातीय रहता था। उसके वीरदेव नाम का एक पुत्र था। वीरदेव के दो पुत्र महणसिंह और वीजा (विजयसिंह) हुए।

ज्येष्ठ पुत्र महणसिंह का विवाह महणदेवी से हुआ। इनके राणिग, वडरा और पूना (पूनमचन्द्र) तीन पुत्र हुए। राणिग का पुत्र झाझण था। झाझण के चार पुत्र थे सलपा, विज (य) पाल, निरया और जेमल। सलपा के खीमसिंह, विजयपाल के जयसिंह और नरसिंह और तृतीय पुत्र निरिया के, उसकी नागलदेवी नामा स्त्री से लखमसिंह, रामसिंह और गोवल तीन पुत्र रत्न हुए।

वीरदेव के कनिष्ठ पुत्र वीजा की स्त्री श्रीदेवी नामा से कुमारपाल भीम और मदन नाम के तीन पुत्र उत्पन्न हुए। कुमारपाल का वंश नही चला। संभव है वह अविवाहित अथवा बाल-वय मे ही स्वर्ग सिधार गया हो। भीम की स्त्री कर्पूरदेवी थी। मदन का विवाह सरस्वती नामक कन्या से हुआ था और उसके देपाल नामक पुत्र था।

भीम के चार पुत्र थे—पद्म साहण साम (मं) त और सूरा। पद्म का पुत्र धीधा और धीधा का पुत्र पूना (पूनमचन्द्र) था। साहण के पुत्र का नाम नहीं लिखा गया है परन्तु उसके कडुआ नामक पौत्र था। सूरा के सुहवनामा स्त्री थी। इनके प्रथिमसिंह और पाल्हणसिंह दो पुत्र हुए। पाल्हणसिंह की पाल्हणदेवी से भीम और भाव दो पुत्र हुए थे। प्रथिमसिंह का परिवार विशाल था। उसके पाच पुत्र लगभग डेढ़ दर्जन पौत्र-प्रपौत्र थे।

प्रथिमसिंह की स्त्री का नाम प्रीमलदेवी था। प्रथिमसिंह अग्रणी वणिक था। उसकी स्त्री भी पुण्यशालिनी और प्रम परायणा थी। इनके सोम रत्नसिंह साल्हा और डूंगर नाम के पाच पुत्र हुए।

सोम सौम्यप्रकृति और महान् गुणवान था। उसके सावमदेवी स्त्री थी। नारायण वाछा मोषा और राघव नामक चार पुत्र थे।

रत्न महान् दानी था-जिसने अपने दानरूपी शीतल जल के अनुष्ण प्रवाह से दारिद्रताप से सतप्त पृथ्वी को शीतल बना दिया था। उसने शत्रु जयादि तीर्थों की सघयात्रायें करके संघपति के गौरवशाली पद को प्राप्त किया था। ऐसा महान् दानी एवं धर्मात्मा रत्न के रत्नदेवी नामा सुशीला स्त्री से गुणवान् तीन पुत्र धन सायर और सहदेव थे। रत्न का अपने लघु भ्राता सिंह पर अधिक स्नेह था। धर्म कार्य एवं सघयात्रा में सिंह

सदा उसके सग रहा ।

मिह सुधीर, प्रभूतगुणी, दृढप्रतिज्ञ, गुरु और जिनेश्वर देव का परमोपाशक था। उसने वि० म० १४२० मे श्री जयानदसूरि और गुरु देवसुन्दरसूरि का महान् सूरि पदोत्सव किया था। सोपलदेवी, दुल्हादेवी, और पूजी नामा उसकी तोन स्त्रिया थी। दुल्हादेवी के आसघर और पूजी के नागराज नामक एक-एक पुत्र था।

प्रशस्ति प्रधान पुरुष साल्हा था। साल्हा की स्त्री पुण्यवती हीरादेवी थी। इनके सात पुत्र थे—देवराज, शिवराज, हेमराज, खीमराज, भोजराज, गुणराज और सातवा वनराज। साल्हा ने श्री शत्रु जयतीर्थ की यात्रा की थी। सिंह के वडे भ्राता रत्न के पुत्र धनदेव और सहदेव ने प्रभावशाली सिंह के आदेश से वि० स० १४४१ मे श्री ज्ञानसागरसूरि का सूरिपदोत्सव किया तथा निरया के पुत्र लखमसिंह, रामसिंह और गोवल ने वि० स० १४४२ मे अशेष-दूर-दूर के स्वधर्मी वधुओ को निमन्त्रित करके श्रीं कुलमण्डन श्री गुणरत्नसूरि का सूरिपदोत्सव किया।

श्रेष्ठि साल्हा की पत्नी हीरादेवी जैसी सुशीला, निर्मलवुद्धि थी। वैसे ही धर्मात्मा उसके पिता लूढा और माता लापण देवी थी।

श्रेष्ठि साल्हा का वश वृक्ष इस प्रकार है

महणसिंह (महणदेवी)
कुमारपाल
भीम
मदन (सरस्वती देवी)
पूना
साहस
सामंत
सूरा
निरया (नागलदेवी)
नरसिंह
रामसिंह
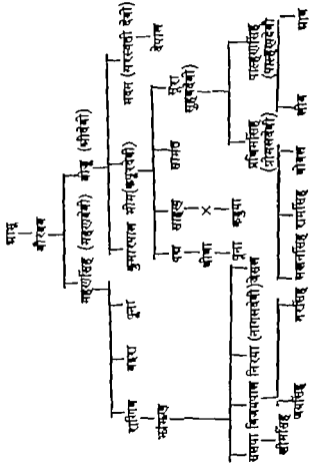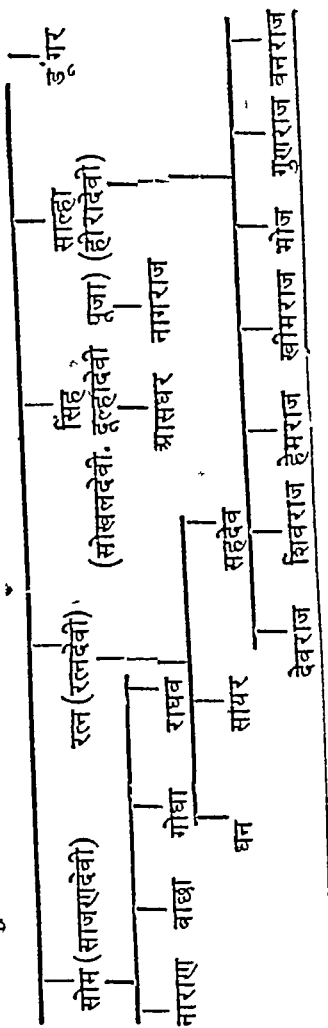
१ जै० पु० प्र० स० प्र० ४० पृ० ४२

२ प्र० स० प्र० १०२ पृ० ६४

पत्तन के सघवीपाडा के ज्ञान भडार मे 'पंचाशकवृत्ति' के अन्त मे यह प्रशस्ति अपूर्ण लिखित है।

कारण कि पुस्तक का वह पत्र जिसमे उक्त प्रशस्ति का शेष अश था, नष्ट होगया, प्राप्त है।

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि लापण और बारय के परिवार

वि० तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी के संधि काल में बाग्भट्ट बाड़मेर (मारवाड़ राजस्थान) में पल्लीवाल ज्ञातीय श्रावक लापण रहता था। उसके पाहुण राहुल और वीरदेव नाम के तीन पुत्र थे।

थे पाहु की स्त्री रूपिणी थी। इनके आम्रमण और गुणदेव दो पुत्र थे। वीरदेव की स्त्री का नाम वीरमती था। वीरमती की कुमारावस्था का नाम मोल्ही था। वीरमती के गुणपाल पुत्र था जिसकी गउरदेवी नामा स्त्री थी।

उक्त मोल्ही [वीरमती] के माता-पिता हम्मीरपत्तन के रहने वाले थे। मोल्ही के पिता का नाम सास्हड़ और माता का नाम सुहवदेवी था। थे सास्हड़ के पिता बारय थे। सास्हड़ के कडुया मोल्ही और उदा नामक तीन सन्तान थी। उदा का पुत्र हीलण था। कडुया के दो स्त्रियां थी-कपूरदेवी और कर्मदेवी कपूरदेवी से एक पुत्र पुण्यपाल और एक पुत्री धनीतसा नामा हुई। कर्मदेवी के बाधलदेवी नाम की एक पुत्री थी।

वि सं १३२७ मे बाड़मेर के श्री महावीर जिनालय में

श्रेष्ठि होलण, कडूया और श्राविकामोल्ही ने अपने भ्राता उदा के श्रेयार्थ श्री पार्श्वनाथ-विम्व करवाया। तथा भीमपल्ली* मे धर्म देशना श्रवण करके श्राविका कपूरदेवी ने स्वश्रेयार्थ 'शतपदी' नामक पुस्तक की प्रति वि० स० १३२८ आषाढ मास के शुक्ल पक्ष मे पत्तन मे ठ० वयजापुत्र ठ० सामतसिह से लिखवा कर वाचनार्थ अर्पित की।
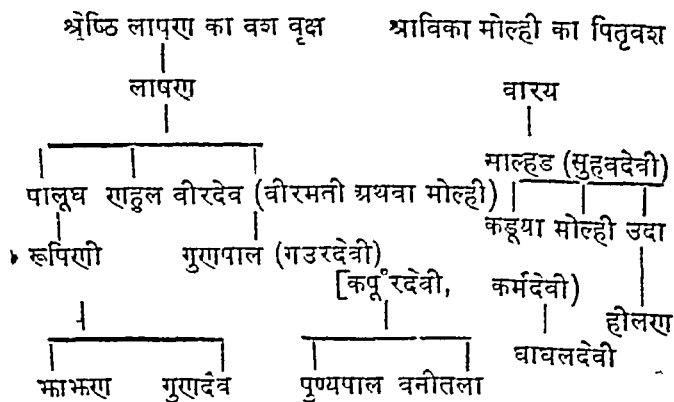
१ प्र० स० प्र० १६३ पृ० ६४

२ जै० पु० प्र० स० प्र० १११ पृ० ६७-६८

* भीमपल्ली वर्त्तमान् मे भीलडी नामक ग्राम जोडीसा केम्प से १६ मील पश्चिम मे है।

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रे० जसदू और उसका विशाल परिवार

वि० की १५वी शताब्दी में पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि जसदू हो गया है। वह महा यशस्वी सौभाग्यशाली और परम सुखी था। उसकी सुशीला कर्तव्य परायण पतिव्रता स्त्री सोमना नामा कुसमुगों की खान ही थी। इनके पांच पुत्र और तीन पुत्रियाँ हुई। पुत्र क्रमश: पूर्णचन्द्र यशश्चन्द्र श्रामड़ नाहड़ और वास्हण थे और पुत्रियाँ शीलमती सहजू और रत्नी नामा थी। यह यशोभद्रसूरि के अनुरागी थे।

पूर्णचन्द्र के कल्हण आल्हण रत्ना और राजपाल नामा चार पुत्र थे। कल्हण का पुत्र मलय आल्हण का अरिसिंह और रत्ना का पुत्र गुणी सुबर्णधारी तिहुणपाल था।

यशश्चन्द्र के जगदेव और बरदेव नामक दो पुत्र थे। श्रामड भी मानतुगसूरि का परम भक्त था। उसके अभयश्री नामा स्त्री थी। अभयश्री की कुक्षी से पाँच पाण्डवों के सदृश प्रसिद्ध पाँच पुत्र पद्मसिंह, वीरचन्द्र आसल पूनदेव और देवल थे।

श्री माणिक्यचन्द्राचार्य विरचित पार्श्वनाथ चरित्र पुस्तक की प्रशस्ति से उक्त परिचय प्राप्त होता है। उक्त पुस्तक की प्रशस्ति अपूर्ण प्राप्त हुई है। उक्त पुस्तक को जसदू की सन्तान ने लिखा अथवा लिखवाया था।

श्रेष्ठि जसदू का वंश वृत्त

जै० प० प्र० स० प्र० ५६ पृ० ५६

पल्लीवाल ज्ञातीय श्रे० जसदू और उसका विशाल परिवार

वि० की १२वीं शताब्दी में पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि जसदू हो गया है। यह महा यशस्वी सौभाग्यशाली और परम सुखी था। उसकी सुशीला कर्त्तव्य परायण पतिव्रता स्त्री सोमता नामा सुभगुणा की खान ही थी। इसके पांच पुत्र और तीन पुत्रियाँ हुई। पुत्र क्रमश: पूर्णचन्द्र यशचन्द्र आमड़ माहड़ और वास्हण थे और पुत्रिया शीलमती सहजू और रत्नी नामा थी। यह यशोभद्रसूरि के अनुरागी थे।

पूर्णचन्द्र के कल्हण आस्हण रत्ना और राजपाल नामा चार पुत्र थे। कल्हण का पुत्र अजय आस्हण का अरिसिंह और रत्ना का पुत्र सुगुणी सुवर्णराशी तिहुणपाल था।

यशचन्द्र के जगदेव और वरदेव नामक दो पुत्र थे। आमड श्री मानतुंगसूरि का परम भक्त था। उसके अभयश्री नामा स्त्री थी। अभयश्री की कुक्षी से पाँच पाण्डवों के सदृश प्रसिद्ध पांच पुत्र पद्मसिंह, वीरचन्द आसल मूलदेव और देवल थे।

श्री माणिक्यचन्द्राचार्य विरचित पार्श्वनाथ चरित्र पुस्तक की प्रशस्ति से उक्त परिचय प्राप्त होता है। उक्त पुस्तक की प्रशस्ति अपूर्ण प्राप्त हुई है। उक्त पुस्तक को जसदू की सन्तान ने लिखा अथवा लिखवाया था।

नाम की तीन पुत्रिया थी। आसचन्द्र की पत्नी जयतलदेवी थी और अमरसिंह आदि इनके पुत्र थे। चपलता के मल्लसिंह नामक पुत्र था।

घाघल की पत्नी घाघलदेवी थी। इनके सोम नाम का पुत्र था। सोम की स्त्री सहजलदेवी थी।

इस प्रकार कुमरदेवी पुत्र, पौत्र प्रपौत्र एव वधू, प्रवधूओ के सुख सभोग से महा भाग्यशालिनी स्त्री थी। धर्म एव समाज के प्रति भी उसके वैसे ही सेवा एव उदार भाव थे। जिनप्रभसूरि के उपदेश से कुमरदेवी ने चतुर्थ प्रतिमा (व्रत विशेष) ग्रहण किया तथा औपपातिक-राजप्रश्नीय सूत्रद्वय पुस्तक लिखवाई और स्वश्रेयार्थ आगमगच्छीय श्रीसिंहसूरि के सूरि, उपाध्याय एव साधुओ के व्याख्यानार्थ उसको अर्पित की।

जै० पु० प्र० स० प्र० ६०. प्र० ६०
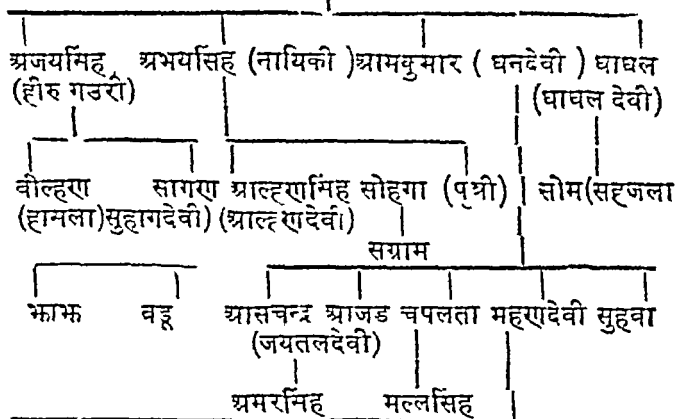
पाल्लीवाल ज्ञातीय श्राविका कुमरदेवी और उसका वृहद परिवार

। वि० की बारहवी शताब्दी में पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि नरसिंह और उसकी गुणशीला पत्नी कुमरदेवी नामा रहते थे। इनके क्रमश: अजयसिंह अभयसिंह आमकुमार और महा धैर्यवंत धांधल नामक चार पुत्र थे।

अजयसिंह की पत्नी हीरूदेवी और गउरीदेवी नामा दो स्त्रियाँ थी। हीरूदेवी के वोल्हण और सांगण दो पुत्र हुए। वोल्हण की स्त्री का नाम हांसला था। हांसला की कुक्षी से आंबड और बड़ दो पुत्र थे। सांगण का विवाह सुहागदेवी नामा कन्या से हुआ था।

अभयसिंह की पत्नी नायिकी थी। नायिकी के पुत्र आल्हण-सिंह और पुनो सोढ़णा नामक दो पुत्र पुत्री हुए। आल्हणसिंह की पत्नी का नाम आल्हणदेवी था। पुत्री सोढ़णा के संग्राम नामक पुत्र था।

आमकुमार की पत्नी का नाम अमरदेवी था। इनके आसचन्द्र और आजड नामक दो पुत्र और चंपलता महणदेवी और सुहवा

इस कुल की ख्याति श्रेष्ठि सुन्दरलाल के समय मे और अधिक बढी। महाराजा जयसिंहपाल ने श्रेष्ठि सुन्दरलाल को उनकी सेवाओ मे प्रसन्न होकर एक ग्राम जागीर मे प्रदान किया, परन्तु बुद्धिमान् श्रेष्ठि ने जागीर लेना स्वीकार नही किया। इतिहास बोलता है—जिस २ जैन ने जागीर ली वह अन्ततोगत्वा जैनत्व से दूर ही नही हुआ वरन बडे नरेशो के अहर्निश सम्पर्क-भी सहवास से पथ भ्रष्ट होकर जैन नही रहा।

सेठ वंश

आज भी इस कुल मे लगभग २०० स्त्री-पुरुष बाल-बच्चे हैं। इस कुल का करौली मे एक बडा मोहल्ला बन गया है। उस समय का एक सम्मिलित मकान इस कुल की समृद्धता, व्यापार-विस्तार का आज भी विशद परिचय दे रहा है। यह सात मजिला है। आगे और पीछे दो मोहल्लो मे खुलता है। देखने से अनुमान किया जा सकता है कि आज उसके बनाने मे २-३ लाख रुपयो का व्यय सम्भव है। स्वय करौली नगर मे इस कुल के व्यक्तियो की १८ अठारह दुकानें चलती थी। सब से बडी फर्म (पेढी) का नाम खूबराम हरसुखराम था। उपरोक्त पुरुषो के अतिरिक्त इस कुल मे निम्न व्यक्ति भी कुछ प्रसिद्ध हुए हैं।

श्रे० बालमुकुन्द और हरदेवसिंह—खूबराम और हरसुख-राम के पश्चात् ये कुशल एव बुद्धिमान व्यापारी हुए। इन्होने अपनी कुशलता से व्यापार को खूब बढाया।

पल्लीवाल ज्ञातीय सेठ हरसुखराम

इनके पूर्वजों में स्यावस में पल्लीवाल ज्ञातीय श्री महासिंह रहते थे। उनके पुत्र मौजीराम और चूनाराम थे। मौजीराम के पुत्र हरसुखराम मोड़िया स्यावस जिला अमाना से फतेहपुर (जि सवाई-माधोपुर) आकर बसे थे। करौली नरेश हरबक्सपाल एक बार फतेहपुर गये। करौली में उन दिनों कोई श्रीमन्त साहूकार नहीं रहता था। राज्य को जब कभी द्रव्य की आवश्यकता पड़ती तो इधर-उधर कहीं दूर से द्रव्य का प्रबन्ध बड़े कष्ट से करना पड़ता था। करौली नरेश ने श्रेष्ठि हरसुखराम को करौली में निवास करने के लिये कहा और कई कर क्षमा कर देने तथा राज्य की ओर से सम्मान देने का आश्वासन दिया। श्रेष्ठि मौजीराम के पुत्र हरसुखराम इस वंश के प्रथम पुरुष थे जो करौली में लगभग १५ वर्ष पूर्व आकर बसे थे। करौली राज्य का कस्टम तोषाखाना जमादार खाना एवं खजाना श्रेष्ठि हरसुखराम के आधीन था। आवश्यकता के समय राज्य को द्रव्य-सहायता करने के उपलक्ष में जो सम्मान मिला तब से राज्य-विलयकाल तक इस कुल को न्यूनाधिक अंशों में अनवरत बने रहे। हरसुखराम के छोटे काका चूनाराम थे।

इन कुल की ख्याति श्रेष्ठि सुन्दरलाल के समय मे और अधिक बढी। महाराजा जयसिंहपाल ने श्रेष्ठि सुन्दरलाल को उनकी सेवाओ से प्रसन्न होकर एक ग्राम जागीर मे प्रदान किया, परन्तु बुद्धिमान् श्रेष्ठि ने जागीर लेना स्वीकार नही किया। इतिहास बोलता है—जिस २ जैन ने जागीर ली वह अन्ततोगत्वा जैनत्व से दूर ही नही हुआ वरन बडे नरेशो के अहर्निश सम्पर्क-भी सहवास से पथ भ्रष्ट होकर जैन नही रहा।

सेठ वंश

आज भी इस कुल मे लगभग २०० स्त्री-पुरुष बाल-बच्चे हैं। इस कुल का करौली मे एक बडा मोहल्ला बन गया है। उस समय का एक सम्मिलित मकान इस कुल की समृद्धता, व्यापार-विस्तार का आज भी विशद परिचय दे रहा है। यह सात मंजिला है। आगे और पीछे दो मोहल्लो मे खुलता है। देखने से अनुमान किया जा सकता है कि आज उसके बनाने मे २–३ लाख रुपयो का व्यय सम्भव है। स्वय करौली नगर मे इस कुल के व्यक्तियो की १८ अठारह दुकाने चलती थी। सब से बडी फर्म (पेढी) का नाम खूबराम हरसुखराम था। उपरोक्त पुरुषो के अतिरिक्त इस कुल मे निम्न व्यक्ति भी कुछ प्रसिद्ध हुए हैं।

श्रे० बालमुकुन्द और हरदेवसिंह—खूबराम और हरसुख-राम के पश्चात् ये कुशल एव बुद्धिमान व्यापारी हुए। इन्होने अपनी कुशलता से व्यापार को खूब बढाया।

४ छीतरमल और बंशीधर—राज्य के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से थे। छीतरमल जी ने एक बड़ा सुन्दर बाग लगवाया था जो आज भी विद्यमान है। इस बाग में छीतरमल जी की छतरी बनी हुई है। यह छतरी 'बाग वाला बाबा' के नाम से विख्यात है। इस कुल के लोग उसकी आज भी पूजा करते हैं।

५ जवाहरलाल जी—प हरदेवसिंह के पुत्र हीरालाल जवाहर लाल और चिम्मनलाल जी थे। हीरालाल जी के गोंदा लाल जी बड़े योग्य पुत्र हुए। हीरालाल जी अफीम बहुत खाते थे। सर्प तक का विष उन पर असर नहीं कर सकता था। श्री जवाहरलालजी और सुन्दरलालजी में कुछ कारणों पर वैमनस्य उत्पन्न हो गया और तभी से इस कुल में दो दल उत्पन्न होकर लाभ और व्यापार में हानि प्रारम्भ हुई।

पल्लीवाल ज्ञातीय दीवान वुद्धसिंह

श्रेष्ठि मोतीराम वुद्धसिंह दोनो वडे प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं। महाराजा मानिकपाल के समय वुद्धसिंह चार सहस्त्र रुपयो के वार्षिक वेतन पर राज्य के दीवान वने और एक सहस्त्र रुपयो के वार्षिक वेतन पर मोतीराम नौकर हुए। दोनो की नियुक्ति एक ही साथ वि०स० १८३२ आषाढ कृष्णा एकम को हुई थी। दीवान वुद्धसिंह को दीवान को मिलने वाली समस्त सुविधायें जैसे वैठने के लिये पालकी, सेवा मे रहने के लिये चाकर, मुसद्दी, घुड़सवार और पैदल सिपाही आदि मिले और तालुका सवलगढ के गाँव मौजा खेरला आय रु० २०००) और मौजा भाकी रु० १४००) वार्षिक वेतन के रूप मे दिये गये। वि० स० १८३३ ज्येष्ठ कृ०१ को महाराजा मानिकपाल ने दीवान वुद्धसिंह को इनके परिवार के व्यय निमित्त मौजा वल्लूपुरा और प्रदान किया। वि० स० १८३४ आषाढ शु० ७ को दीवान मोतीराम वुद्धसिंह को महाराज सवाई पृथ्वीसिंह ने जयपुर मे हवेली वनाने की और व्यापार धंधा करने की आज्ञा प्रदान की तथा इन पर लगने वाले कई कर जैसे

रुदावल मे इनके विशाल भवन आज भी विद्यमान है और फतेहपुर के ठाकुर का इनकी जायदाद पर अधिकार है।

माया राहदारी आदि माफ किये। उसकी पुष्टि में महाराजा सवाई जगतसिंह ने कई कर माफ किये और सवाई-जयपुर,गढ सवाई-जयपुर, सागानेर, कागुर्डे आवादीनी रागी सोमरी, मालपुरा टोडा रायसिंह मोवा बौराहोडा चाटसू निवाई भगवतगढ सवाई माधोपुर, बझार उदेई, बामणवास हिण्डोण टोडाभीम पावटा पिडामणी बाडाची चोसा बाहुरी,-पहाड़ी कामा पोट भारमोम मगपुरा श्रीमाधोपुर, रामगढ, अमरसेन पुरुनावास चोबनेर, उजीरपुर, मसारणा टोंक गाजीकोयानी बैराठ निमराणपुर में व्यापार धंधा करने की आज्ञा पौष सु १ स १८३४ को प्रदान की। महाराव मानिकपाल ने भी उपरोक्त वि सं १८३४ माघ कृ० ५ की दीवान मोतीराम बुर्धसिंह को करौली प्रमुख में दुकान,हवेली बनाने की तथा व्यापारधंधा करने की आज्ञा प्रदान की। आज भी सिवारचंद हवेली मय कचहरी के बनी हुई मौजूद है।

महाराव मानिकपाल ने वि सं १८४ में आषाढ कृ १ को दीवान बुर्धसिंह का वार्षिक वेतन रु० चार सहस्त्र का पुन आज्ञापत्र प्रचारित किया था। इससे यह सचित होता है कि वेतन के रूप में जो गाँव दिये हुए थे वे ले लिये गये हों और रोकड़ वेतन राज्य के कोष से दिया जाने लगा हो।

नोट-रियासती युग में अन्य रियासतों के लोग अन्य रियासती नगर, कस्बा राजधानियों में हाट हवेली नहीं बना सकते थे व्यापार

दीवान वुद्धसिह ने करौली मे जैन मदिर वनवाया और वडी धूम-धाम से उनका वि० स० १९४२ पौप० कृ०३ रविवार को प्रतिष्ठा कार्य सम्पन्न किया। उक्त मदिर की देखरेख ,सेवा,पूजा का कार्य यति श्री नानकचद्र जी (जिनके पूर्वजो को महाराजा गोपालसिह ने वि० स० १७८६ मे करौली लाकर वसाया था और उनको राजवश मे पडिनाई करने तथा जन्मपत्रिकायें वनाने का कार्य पीढी-दर-पीढी करते रहने का अमोघ अधिकार आज्ञा-पत्र द्वारा दिया था।) को अर्पित किया तथा मदिर के नीचे की चार दूकानें भेट की।

धन्वा नही कर सकते थे जव तक कि उस नगर, कस्वा अथवा राजधानी का राजा उनको ऐसा करने की आज्ञा नही दे देता था।

रियासती काल मे भेंट, वेगार, मापक, डांड विरार चौकी, पर्ण, आदि कई कर वैश्यो को देने पडते थे।

दीवान मोरीलालजी

इस कुटुम्ब में इस समय दीवान मोरीलाल जी हैं जिनका जन्म सं १९४९ माघ सुक्ला १ सोमवार को हुआ था। शिक्षा करौली में पाई थी। करौली में सर्राफि की दुकान की। उसके बाद सं १९७१ में कलकत्ता में छपी के कारखाने में सेठो के यहां मुनीम हुए और वहां से रंगून (बर्मा) की दुकान पर भेजे गये। कलकत्ता में स २ तक कार्य किया। इस समय इनके

लग सबके अपने निवास स्थान करौली में ही कार्य कर रहे हैं।

वंशावली पल्लीवाल दीवान श्रीमान बुद्धसिंह जी

(श्रेष्ठि मोतीराम दीवान करौली के गौरवशाली वंश का वृक्ष)
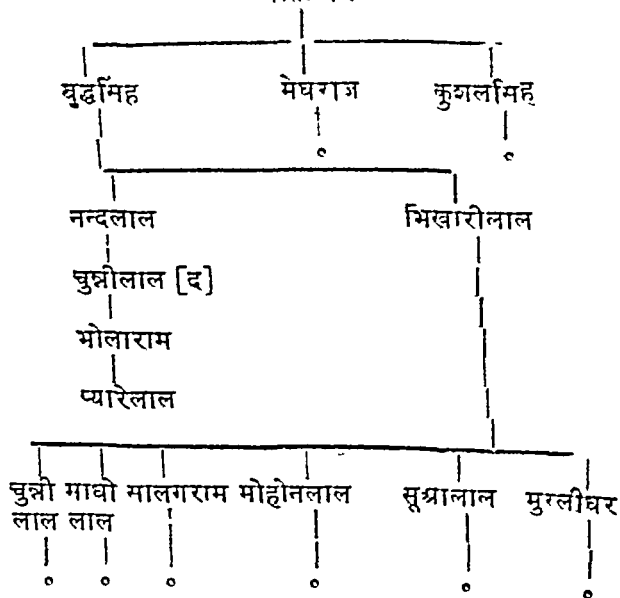
दीवान मौरीलालजी

इस कुटम्ब में इस समय दीवान मौरी लाल जी हैं जिनका जन्म स. १९४१ माघ शुक्ला १ सोमवार को हुआ था। शिक्षा करौली में पाई थी। करौली में सर्राफि की दूकान की। उसके बाद सं १९७२ में कलकत्ता में लक्ष्मी के कारखाने में सेठों के यहाँ मुनीम हुए और वहाँ से रंगून (बर्मा) की दूकान पर भेज गये। कलकत्ता में सं २ तक कार्य किया। इस समय इनके तीन लड़के अपने निवास स्थान करौली में ही कार्य कर रहे हैं।

पल्लीवाल ज्ञातीय दीवान जोधराज
एवं
प्रसिद्ध तीर्थ महावीर जी

चौधरी जोधराज जी भरतपुर-राज्य के दीवान थे। इनका नाम पल्लीवाल ज्ञातीय मे ही नही, श्री महावीर तीर्थ क्षेत्र के निर्माता होने के कारण समस्त जैन समाज मे आदर के साथ स्मरण किया जाता है। इनके सम्बन्ध मे मात्र इतना ही परिचय मिलता है कि इनकी बनाई हुई तीन प्रतिमायें जो वि० स० १८७६ माघ कृ० ७ गुरुवार की प्रतिष्ठित हैं और जिनकी प्रतिष्ठा श्वेताम्बराचार्य महानन्दसूरि ने की है. प्राप्त होती हैं। एक मथुरा के अद्भुत-संग्रहालय मे, दूसरी भरतपुर के जती मोहल्ले के पल्लीवाल जैन श्वे० मन्दिर में मूलनायक के स्थान पर और तीसरी श्री महावीर जी क्षेत्र मे। श्री महावीर क्षेत्र के निर्माण और उससे दीवान जोधराज के सम्बन्ध के विषय मे गोरखपुर से प्रकाशित प्रसिद्ध पत्र 'कल्याण' वर्ष ३१ सख्या १ तीर्थाङ्क में प० श्री कैलाशचन्द्र शास्त्री ने लिखा है कि 'एक दिन भरतपुर-राज्य के दीवान पल्लीवाल ज्ञातीय जोधराज जी किसी राजकीय मामले पकडे जाकर उधर से निकले। उन्होंने चान्दन गाँव मे भूमि निकाली हुई अत्यन्त सुन्दर एव प्रभावक श्री महावीर प्रतिमा-

के दर्शन करके यह प्रतिज्ञा की कि अगर मैं मृत्यु दण्ड से बच गया तो मन्दिर बनवा कर उक्त प्रतिमा को बड़ी धूम-धाम से प्रतिष्ठित करूंगा। सुयोग एवं महाभाग्य से दीवान जी पर तीन बार तोप चलाई गई और तीनों बार सौभाग्य से दीवान जी बाल २ बच गये। तब उन्होंने उक्त प्रतिज्ञा के पालन में चांदन गांव में जिनालय का निर्माण करवाया और उसमें उपरोक्त महावीरजी की प्रतिमा को प्रतिष्ठित करवा कर संस्थापित किया।

श्री महावीर जिनालय चांदन गांव तहसील हिंडौन राज्य जयपुर में भरतपुर—माधोपुर के बीच स्टेशन महावीर जी को रतलाम—कोटा मथुरा रेलवे लाईन से तीन मील के अन्तर पर आ गया है। करौली भी यहां से अधिक दूरी पर नहीं है। हिंडौन और करौली में और आस पास गावों में जैन और उन पर भी पल्लीवाल ज्ञातीय घर अच्छी सख्या में आज भी विद्यमान हैं। इस तीर्थ में प्रति वर्ष वैशाख सुदी पड़वा और चैत्री पूर्णिमा को भारी मेला लगता है और श्वेताम्बरी दिगम्बरी दोनों अच्छी सख्या में उपस्थित होते हैं। बसे प्रसिद्ध तीर्थ होने के कारण दूर २ से जैनी प्रतिदिन आते ही रहते हैं। करीब ४ वर्षों से तीर्थ श्वेताम्बर है या दिगम्बर है—इस प्रश्न को लेकर दोनों पक्षों में मुकद्दमा बाजी चल रही है। परिणाम जो कुछ हो। इस तीर्थ के दर्शन करने के लिए जैनेतर भी बड़े हर्ष और आनन्द से आते हैं। मीना गूजर आदि सर्व ज्ञातियां भी उक्त प्रतिमा को पूजती हैं।

दीवान जोधराज ने डीग मे व कमंपुरा मे भी जैन मन्दिर बनवाया था। ये हरमागा नगर के रहने वाले थे। इनका गोत्र पल्लीवाल डगिया चौधरी था। इनका जन्म वि० स० १७९० का० शु० ५ तदनुसार सन् १७३३ नवम्बर १४ सोमवार को हुआ

जन्म लग्न
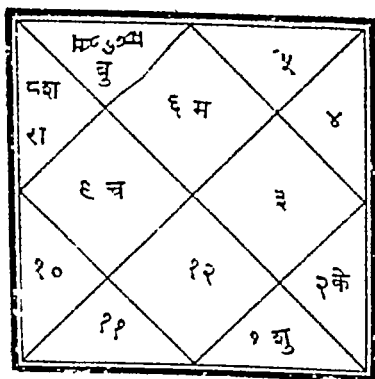
था। महाराजा केशरीसिह के राज्यकाल मे इन्होने उक्त प्रतिमाओ की प्रतिष्ठा करवाई थी, जो मथुरा के अजायब गृह मे सुरक्षित प्रतिमा से सिद्ध होता है। प्रतिमा पर यह लेख है —

'सवत् १८२६ वर्षे मिती माघ वदी ७ गुरुवार डीग नगर महाराजे केसरिसिह राजा, विजय (गच्छे) महा भट्टारक श्री पूज्य महानन्द सागर सूरिभिरते दपदत्त (देशात) डगिया पल्लीवाल वश गोत्र हरमाणा नगर वासिन चौधरी जोधराजेन प्रतिष्ठा कारापिताया।'

दूध झाड़ कर हर्षित हुआ और घर आ गया। एक रात्रि को उसको स्वप्न हुआ कि —भगवान महावीर की प्रतिमा बनकर तैयार हो गई है इसको बाहर निकाल। चमार ने स्वप्न के आधार पर उक्त स्थान को खोदा और वहां से उक्त वीर प्रतिमा प्रकट हुई। चमार ने उसका निकास कर भूमि शुद्ध करके वहीं विराजमान करदी। इस घटना के कुछ समय पश्चात् ही दीवान जोधराज ने उस प्रभावशाली प्रतिमा के दर्शन किये और मृत्यु दण्ड से बच जाने पर मन्दिर बनवाकर उस संस्थापित करने की शपथ ली थी। उक्त चमार कुल का तीर्थ में अब तक भी कुछ सम्बन्ध चला आता-बतलाया जाता है। चढ़ावा का कुछ अंश उक्त कुल को दिया जाता है।

मूर्ति के निकसन की कथा इस प्रकार है —

जहां मन्दिर बना हुआ है उस स्थान के कुछ समीप ही एक चमार की गौ नित्य दूध झार कर आती थी। गौ से लगातार कई दिन दूध न मिलने पर कारण की खोज में चमार ने देखा कि उसकी गौ उक्त स्थान पर दूध झार रही है। चमार इसको

पल्लीवालज्ञातीय संघवी तुलाराम

उन्नीसवी शताब्दी में पल्लीवाल ज्ञातीय तुलाराम श्रेष्ठि एक अत्यंत धर्मश्रद्धालु श्रीमन्त सज्जन हो गया है। यह श्रेष्ठि खेमकरण का कनिष्ठ पुत्र था। कपूरचंद और हरिदास उसके दो बडे भ्राता थे। यह चादन गाँव अथवा इसके निकट के ही किसी ग्राम में रहता था। उसने अपने ज्ञाति के पैंतालीस गोत्रो के कुटुम्बो को निमंत्रित करके श्री महावीर जी तीर्थ के लिये संघ निकाला। इस संघ यात्रा मे गोत्र ४५ मे से ३३ तेतीस गोत्रो के कुटुम्ब सम्मिलित हुए थे, उन तैतीस गोत्रो के नाम निम्नवत् हैं, —

१ वडेरिया, २. वरवासिया, ३ कोटिया, ४ खैर ५ पचोरिया, ६ जनूथरिया, ७ थारोलिया, ८ सिदोसावकस९. मडीवाल गिदोरिया, १० नगेसुरिया, ११ सगेसुरिया, १२ डगिया, १३ निहानिया, १४ व्यानिया, १५. खोहवाल, १६ भावरिया, १७ डडूरिया, १८ थारीवाल १९. गुदिया, २० विलनमासिया, २१. दिवरिया, २२ वहेत्तरिया, २३ वैद्य भोगिरिया, २४ चकिया, २५ लोहकरेरिया, २६. डडूरिया २७ कुरसोलिया, २८. दादुरिया, २९ नागेसुरिया, ३० नोलाठिया, ३१ जोलाठिया, ३२ राजोरिया, ३३. भडकोलिया।

तुलाराम ने आमन्त्रित स्वज्ञातीय बन्धुओं का भारी सम्मान-

सत्कार किया और तीर्थ में पूजा चढ़ावा आदि विषयों में सराह नीय रूपनाह से द्रव्य व्यय किया। यह संघ यात्रा समस्त पल्लीवाल जाति की एक प्रतिनिधि सभा भी कही जा सकती है, जिसमें जाति के वा तिहाई गोत्रों ने अपनी उपस्थिति दी थी। इस यात्रा का वर्णन राव-रायों की पोथियों में बहुत ही ऊंचे स्वर में मिलता है। सेठ तुलाराम हरिदास (राम) ने राव अचरा राम भाटा को ७२ बहुतर कर्ण कुण्डल जिनको प्रान्तीय भाषा में मुरदा-मुरवा कहा जाता है दान में दिये थे और तभी से तुलाराम का गोत्र बहुतरिया कहलाने लगा। इससे पूर्व यह कुल मंडेसवाल गोत्रीय कहलाता था।

रायपरमादीलाल की पोथी में तुलाराम के पूर्वजों को इस क्रम से एवं इस भांति लिखा है। साहू श्रीपति—छियालक्ष्मी—कीका परसा—सोधु—हरी मोहन—चैनदास — धर्म दास गिरधर—गंगाराम—मयाराम—खेमकरण—बासीराम।

गंगाराम
- लालमन
- नैनीराम

खेमकरण
- कपूरचंद
- हरिदास
- तुलाराम

बासीराम
- चुन्नीचंद
- सुन्नमल

चैनदास
- जयदास
- मोहन
- सुन्दर
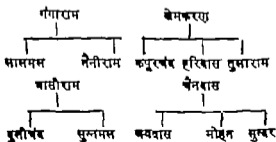
कविवर श्री दौलतराम जी

बीसवी शताब्दी के जैन एव जैनेतर कवियो मे से कविवर दौलतराम जी आध्यात्मिक एव दार्शनिक कवियो मे अग्रिम पक्ति के कवि हो गये हैं। इनका जन्म वि० स० १८५० और ५५ के मध्य हुआ, बतलाया गया है। सन् १८५८ के गदर मे इनको भी कुछ कष्टो का सामना करना पडा था। अपने परिवार को सुरक्षा की दृष्टि मे लेकर भागते हुए इनकी जन्म पत्रिका कही गिर पडी अथवा गुम हो गई। उक्त जन्म-समय इनके ज्येष्ठ पुत्र टीकाराम जी से पूछ कर लिखा गया है ऐसा श्रीमती सरोजनी देवी द्वारा सपादित 'दौलत विलास' नामक इनकी कविता-रचनाओ के सग्रह से ज्ञात हुआ है। इनके पिता पल्लीवाल ज्ञातीय लाला टोडरमलजी गगीरीवाल ग्राम सासनी परगना हाथरस, मे रहते थे। लोग इनके कुल को फतेहपुरिया भी कहते थे। लालाटोडरमलजी के एक भाई और थे और उनका नाम लाला चुन्नीलाल था। दोनो भ्राता हाथरस मे कपडे की दूकान करते थे। कविवर दौलतराम का विवाह अलीगढ निवासी लालाचिन्तामणि की सुपुत्री से हुआ था। कविवर कुशाग्र बुद्धि, शान्तस्वभावी, निर्लोभी, दयालु व न्यायशील प्रकृति के थे। इनका समुचित शिक्षण हाथरस मे ही हुआ। कुशाग्रबुद्धि होने के कारण इन्होंने व्यवहारिक ज्ञान के साथ ही सस्कृत भाषा एव जैन ग्रथो का अच्छा अध्ययन भी कर

लिया था। अध्ययन प्रेम इनका अद्भुत था। अध्ययन के साथ ? यह अपने पिता एवं काका की दुकान सबधी कार्यों में भी छोटी वय से सहायता करने लग गये थे। ये छींटें छापा करते थे। छींटें भी छापते जाते थे और ग्रन्थ भी पढ़ते जाते थे। हाथरस से यह अलीगढ़ आकर व्यापार करने लगे थे। लाम कहते थे कि यह मसी पत्र में छींटें भी छापते जाते थे और साथ ही गोमटसार आदि ग्रन्थों का अध्ययन-वाचन भी करते जाते थे। ऐसा सुना जाता है कि बुद्धि इनकी इतनी तीव्र थी कि ये एक बार में ? १ श्लोक कण्ठस्थ कर लेते थे। हाथरस समीपस्थ की जैन समाज में य अपनी कुशाग्र बुद्धि अध्ययन शोलता धर्मरुचि एव अनेक अन्य सद्गुणों के कारण बहुत अधिक लोकप्रिय प्रसिद्ध हो गये थे।

वि सं १८८२-८३ में मथुरा निवासी राजा लक्ष्मणदासजी जैन सी आई ई के पिता अ फ्तिवर्य मनीराम जी और पंडित चपाराम जी हाथरस आये वहां उन्होंने कविवर की अत्यन्त प्रसिद्धि सुनी तथा मन्दिर में उनको गोमटसार का वस्तीनतापूर्वक अध्ययन करते देख कर वे अत्यन्त प्रसन्न हुए। वे आप को मथुरा ले गये परन्तु वहां आप अधिक काल पर्यन्त नहीं ठहरे। पुन: सासनी अथवा लश्कर (ग्वालियर) मे आकर रहने लगे। इनके पुत्र टीकाराम जी इनकी मृत्यु के समय एवं पश्चात् भी लश्कर में व्यापार-धंधा करते रहे हैं। इनके टीकारामजी से छोटा एक पुत्र और था। वह भवुषय में ही अपनी प्यारी पत्नी एवं एक पुत्री को छोड़ कर स्वर्ग सिधार गया था। आपको अपने कनिष्ठ

पुत्र की मृत्यु का बडा दुःख हुआ था। ससार मे आप वैसे तो पूर्व मे ही रूठे हुए रहते ही थे, लघुपुत्र की मृत्यु से आपकी वैराग्य भावनाओ मे और उदासपन बढा। आप के द्वारा रचित पद्यो मे ससार की असारता, मानव के दुःख-सुखो का चित्रण, उनसे निवारण पाने का प्रयास, मोक्ष की चाहना, जगत के मोहमयी सम्बध की आलोचना आदि वैराग्य, उदासीन, विरक्त भावनाओ का सचोट चित्रण है। आप की रचनाये सरल, सुबोध भाषा मे ऐसी आकर्षक व, प्रभावक है कि भक्ति रस के हिन्दी-अजैन कवि सूर, कबीर सा० की कविताओ मे जैसा आनन्द आता है वैसा ही इनकी कविताओ को पढकर भी पढनेवाला उनमे खो सा जाता है।

आप अपनी आयु के अन्तिम दिवसो मे दिल्ली आकर रहने लगे थे। परन्तु आप के पुत्र टीकाराम जी लश्कर मे ही रहकर व्यापार करते थे। इससे यह ज्ञात होता है कि आप अकेले ही दिल्ली आकर रहने लगे थे। दिल्ली मे आपने अपना समस्त समय तत्त्वचिन्तन, आत्मचिन्तन, शास्त्राभ्यास मे ही व्यतीत किया। धर्म के तत्त्वो का मथन करके आपने वि० स० १८९१ मे छहढाला की रचना की। यह ग्रथ आध्यात्मिक दृष्टि से उच्च कोटि का कविता सग्रह ग्रथ है। आपको अपने स्वदेह से तनिक भी मोह नही था। आपने अपनी समस्त शारीरिक शक्तियो का लाभ शास्त्रानुशीलन मे ही व्ययशील रक्खा था। 'छह ढाला, मे मने-च्छाओ, चतुर्गति, अक्षयसुख की प्राप्ति, ज्ञान-दर्शन, चारित्र इन त्रय

रत्नों पर मार्मिक तात्त्विक अनुभूतिपूर्ण रचनायें हैं। पञ्चाला के अतिरिक्त आपने अनेक मुक्तक रचनाओं का निर्माण किया है। उनमें से अधिकांश का संग्रह उक्त "दौलत विलास" नामक संग्रह पुस्तक में हो गया है।

दिल्ली में वि. सं. १९२३ २४ में आपने देह त्याग किया था ऐसा सुना जाता है कि अपनी मृत्यु दिवस के एक सप्ताह पूर्व आपने अपने शरीर त्याग का ठीक २ समय अपने परिवार को बतला दिया था और बतलाये हुए ठीक समय पर जो अगहन मास की अमावस्या का मध्याह्न था आपने शरीर-त्याग किया। एक विचित्र बात उल्लेखनीय आप ही में यह हुई कि 'गोमटसार' का अध्ययन जो आप कई दिनों वर्षों से करते आरहे थे वह पूर्ण हुआ। जिस दिन आपने अपनी मृत्यु का समय घोषित किया उसी दिन से आप एक सन्यासी की भाँति रहने लगे। अहर्निश धर्म-ध्यान में रत रहते थे और नमस्कार महामंत्र का जाप-स्मरण करते हुए ही आपने देह-त्याग किया।

कविवर दौलतराम भारत के महान् आध्यात्मिक उच्च कोटि के कवियों में हो गये हैं। लगभग ७ वर्ष की वय में उन्होंने देह त्याग किया था। आप बचपन से ही कविता करने लग गये थे। पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि ७ वर्ष के वय में (जिसमें वर्ष २ के पश्चात् भी लें तो भी) आयु के ५ वर्ष जैसे थोड़े काल में उन्होंने कितनी रचनायें की होंगी।

वि. सं. १९१ में आपने सम्मेदशिखर तीर्थ की यात्रा भी की थी।

मास्टर कन्हैयालाल एम० ए० और उनका वंश

विक्रमीय बीसवी शताब्दी के प्रारभ मे बरारा नामक ग्राम मे लाला भेरूलाल जी मलावदिया गोत्रीय पल्लीवाल रहते थे। इनकी स्त्री का नाम कुन्दादेवी था। श्रेष्ठी भेरूलाल जी बडे धर्मनिष्ठ, दयालु एव सदाचारी थे। कुन्दादेवी भी साध्वी स्त्री थी। इनके क्रमश तीनपुत्र निहालचन्द्र वि० स० १९१७, मे भेदिलाल वि० स० १९२१ और कन्हैलाल हुए। कन्हैयालाल का जन्म वि० स० १९२५ तदनुसार मास सितम्बर सन् १८६९ मे बरारे मे ही हुआ। श्रेष्ठि भेरूलाल रुई, किराणा का व्यापार करते थे। एक वर्ष यह नाव मे रुई भरकर नदी पार करके गाजीपुर ले जा रहे थे। अकस्मात् नाव में अग्नि लग गई और समस्त रुई जल गई। ये कठिनता से

अपने प्राण बचा पाये परन्तु गई जमने न। इनका दुःख इतना हुआ कि फिर इनका स्वास्थ्य पनपा ही नहीं। इसी सम्बन्ध में उन का भयंकर दमा रोग हो गया। कई भांति के उपचार किये परन्तु यह दमा इनके प्राणों का ग्राहक बना। पचपन (५५) वर्ष की आयु में ही ये स्वर्ग सिधार गये।

पिता की मृत्यु के पश्चात् घर का भार बाबू निहालचंद पर पड़ा। बाबू निहालचंद पिता की जीवितावस्था ही में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर चुके थे। उन दिनों में मैट्रिक-उत्तीर्ण व्यक्ति का भी बड़ा सम्मान था और सरकारी नौकरी सहज मिल जाती थी। इन्होंने कानूनगोई की भी परीक्षा दी थी। यह बड़े उदार, दयालु एवं सज्जन प्रकृति के थे। अपने दोनों भाइयों को बड़ा प्यार करते थे। इनके दो पुत्र—कुमेरचंद और सुरेशचंद तथा दो कन्यायें सत्यवती और कलावती नाम की चार संतान हुई थी। दोनों पुत्रों का जन्म क्रमशः वि. सं. १९४ व १९५ में हुआ था। सरकारी नौकरी इन्होंने पूरे १ तीस वर्ष की थी। इनको लकवा हो गया और ३-४ दिवस अस्वस्थ रह कर इन्होंने देह त्याग किया। इन्होंने अपने पुत्रों और भाइयों को सुशिक्षित बनाने में तन मन धन तीनों का पूरा २ व्यय किया।

मेहरलाल का जन्म आषाढ़ शु. १४ को वि. सं. १९२१ में हुआ था। आपका शिक्षण बराड़ा में ही हुआ। सं. १९३४ में पंभूठी ग्राम में आपका विवाह हुआ। इसके पश्चात् आप दुकान करने लगे। दुकान में आपको टोटा सहन

करना पड़ा। इसलिए वैराग्य त्याग कर आपने आगरा मे धंधा चालू किया, परन्तु आगरा मे भी आप को लाभ प्राप्त नही हुआ। फिर आप जयपुर और जयपुर से अजमेर आ गये, जहाँ लाला कन्हैयालाल जी नौकरी कर रहे थे। अजमेर की दुकान मे अच्छा लाभ प्राप्त हुआ और आर्थिक स्थिति पहले से कहीं अधिक अच्छी हो गई। सन् १९२३ मे इस दूकान का बंटवारा तीनो भ्राताओ मे हुआ और प्रत्येक को अच्छी धन राशि प्राप्त हुई। यह दुकान भैरोंलाल कपूरचन्द्र के नाम से चलती थी।

श्री फुगेन्द्रचन्द्र जी

ज्ञानचन्द ने निहालचन्द ज्ञानचन्द के नाम से कपड़े की दूकान खोली। आपके दो पुत्र परमचन्द और अमरचन्द हैं।

मास्टर कन्हैयालालजी के दो पुत्र विष्णुकुमार और प्रकाशचन्द हैं। इन्होंने 'चन्द्रा स्टोर्स' स्थापित किया यह दूकान आज अजमेर के चाँदी नगर रोड पर बड़ी प्रसिद्ध दूकान है और बड़े बड़े श्रीमन्त एवं प्रतिष्ठित राजा-रईस इसी दूकान से कपड़ा खरीदते हैं।

मा० कन्हैयालाल का जन्म बगरो में वि० संवत् १९२२ तद्नुसार सन् १८६५ के सितम्बर मास में हुआ था। आप बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि और होनहार थे। बगरो का शिक्षण समाप्त कर के आगरा भेज दिये गये और वहाँ इन्होंने सदा क्रम वि० स० १९४० से वि० स० १९५० तद्नुसार ई० सन १८८३ से १८९३ पर्यन्त दस वर्षों में कक्षा १ से एम० ए० तक की उच्च शिक्षा प्राप्त की। बाद में आपने एल० टी० की परीक्षा भी दे दी थी। वि० सं० १९४१ में अठारह वर्ष की आयु में आपका विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ था।

आप का जन्म पल्लीवालज्ञाति में हुआ जो संख्या में अल्पस्य थी और फिर दूर२ लगभग तीन सौ ग्राम नगरों में विभाजित थी साथ ही यह ज्ञाति ऐसे खापों में विभक्त थी कि उनमें परस्पर भोजन-कन्या व्यवहार तक बन्द थे। यह युग आर्य समाज के क्रान्तिकारी आन्दोलन का समय था। आपके ऊपर आर्य-समाज के सुधारक विचारों का गंभीर प्रभाव पड़ा। आपने और अन्य

आगरा के निकटवर्ती ग्रामों में रहने वाले भिन्न प्रान्तों के पल्लीवाल विद्यार्थियों ने सन् १८६२ के १२ दिसम्बर को "पल्लीवाल धर्मवर्धनी क्लब" नाम की सभा सम्थापित की और उसकी प्रथम बैठक बराग में बुलाई। लगातार इसकी कई बैठकों, अधिवेशन करके आपने और अन्य ऐसे ही शिक्षित एवं कर्मठ समाज सेवियों ने समाज में जागृति की लहर उत्पन्न कर दी। बैठकों और अधिवेशनों में भाग लेने के लिये दूर के प्रान्त व नगरों से पल्लीवाल प्रतिनिधि आने लगे। निदान वि०स० १९७७ ज्येष्ठ कृ०७ को बराग के अधिवेशन में पल्लीवाल जैन कान्फरेन्स की स्थापना की गई और आगामी वर्ष के लिये आप ही सभापति चुने गये। दूसरे ही वर्ष आप के सतत प्रयास एवं नीति पूर्ण प्रयत्नों से मुरैना के पल्लीवालों के साथ भोजन व कन्या व्यवहार होना तय हुआ और सन् १९३२ के फिरोजाबाद के सम्मेलन में छीपा पल्लीवालों को भी मिला लेने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। इस प्रकार समस्त पल्लीवाल ज्ञातीय में जो यह संगठन हुआ सचमुच उसके निर्माण में, अनुकूल वातावरण बनाने में आपका अदम्य उत्साह, उन्नत विचार, अथक श्रम बहुत अंशों में कारण भूत है। आपके समय में तो आपका समाज में भारी सम्मान रहा ही था परन्तु इतिहास के पृष्ठों में भी ज्ञातीय सुधारकों में आप का प्रथम स्थान रहेगा।

आपने पल्लीवालज्ञाति इतिहास तैयार करने का भी विचार किया था, परन्तु कई एक सामाजिक सुधारों, व्यावसायिक झंझटों में

व्यस्त रहने के कारण आप उसको पूर्ण रूप न दे सके। फिर भी आपने यत्र तत्र बिखरी हुई ऐतिहासिक सामग्री का संकलन किया जिसका इस प्रस्तुत लघु इतिहास में सराहनीय उपयोग किया गया है।

आपने जैसे जाति की सेवा की वैसे ही आपने कुल को भी सम्पन्न बनाया। ज्येष्ठ भ्राता निहालचंद जी के स्वर्गवास के पश्चात् आपने उनके पुत्रों को पुत्रतुल्य समझा तथा अपने द्वितीय व भ्राता को सहमत बुलाकर अपनी सम्मति-सूचना से व्यापार में योग-सहयोग किया जिसका परिणाम यह हुआ कि तीनों भ्राताओं के कुल अच्छे समृद्ध और गुणी बने। आप बरारा स्कूल मदरसा के अवैतनिक प्रधानाध्यापक रहे थे।

विवाह संस्कार के १६ १७ वर्ष पश्चात् आपके दो सुपुत्र विजयचन्द्र और प्रकाशचन्द्र हुए जिनका जन्म क्रमशः वि० सं० १९६ और १९९२ में हुआ।

जन्मभूमि ग्राम बरारा से भी आपका सदा प्रेम रहा। बरारा में आपने बन्धासमिति नाम की सभा स्थापित की थी। इस सभा की कई बैठकों में ही आप पर यह प्रेरणा प्राप्त हुई कि पल्लीवाल जातीय कुल एवं वंश में प्रचलित रीति-रस्मों की (जन्म से मृत्यु पर्यन्त होने वालों की) एक सूची के रूप में 'पल्लीवाल रीतिप्रभाकर' पुस्तक प्रकाशित की जाय। इस पुस्तक का द्वितीय संस्करण परिवर्धन संशोधन के साथ आपने और मास्टर मंगलसेन ने तैयार किया

था। यह पुस्तक आज तक रीति- रश्मो के पालन-व्यवहार के उपयोग मे आती है।

पल्लीवाल ज्ञाति आपकी सदा चिरऋणी रहेगी। इसमे कोई सन्देह नही। आपका वश आपके मद् प्रयत्न और मार्ग-दर्शन से जो उन्नति कर सका वह आपके नाम को कभी भी विस्मृत नही कर सकेगा। आप-माता पिता के भी परम भक्त थे। पिता की सेवा तो आप अधिक नही कर सके, क्यो कि वे ५५ वर्ष की आयु मे ही देह त्याग कर चुके, परन्तु आपकी माता ९० (नब्बे) वर्ष की आयु भोगकर मृत्यु को प्राप्त हुई थी। आपने अपनी माता की एक सुपुत्रतुल्य सेवा करके शुभाशीर्वाद प्राप्त किये और उन्ही आशीर्वाद से आपका जीवन महान् यशस्वी और उपयोगी बना।

सर्व श्री बालकराम, निहालचन्द्र, बुलाकीराम, नारायणलाल, लल्लू राम और बाबू छोटेलाल इसी कुल के सुशिक्षित, समाज प्रेमी एवं उत्साही व्यक्ति थे। धर्म वर्धनी क्लब की स्थापना के समय ये सर्वसज्जन आगरा मे अध्ययन कर रहे थे और क्लब की स्थापना मे इनका- प्रमुख सहयोग एव श्रम था। बरारा के इस शिक्षित कुल ने पल्लीवालज्ञाति को तन, मन, धन, से स्मरणीय सेवायें की हैं।

वंशवृक्ष
कपूरचन्द्र
श्यामचन्द्र
हरिश्चन्द्र
रमेशचन्द्र
सुरेशचन्द्र
सत्यवती
कलावती
विष्णुचन्द्र
प्रकाशचन्द्र
पद्मचन्द्र
अमरचन्द्र
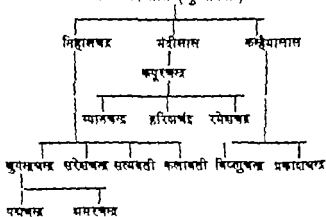
श्री मिट्ठनलालजी कोठारी

भरतपुर के श्री मिट्ठनलालजी कोठारी पल्लीवाल का जन्म सवत् १९४७ भाद्रपद शुक्ला ११ बुद्धवार तदनुसार दिनाङ्क २६ सितम्वर सन १८९० के दिन पहरसर ग्राम (जिला भरतपुर) मे हुआ। आपके पिता का नाम श्री मूलचन्दजी और माताजी का नाम श्री वनवन्तीवाई था। जव आपकी आयु ९ वर्ष की थी तव आप भरतपुर के लाला चिरजीलालजी पल्लीवाल श्वेताम्वर जैन के दत्तक रूप मे आये। वाल्यकाल मे विद्याध्ययन करते रहे। सन १९०८ की २४ दिसम्वर को आपके पिता श्री चिरजीलालजी का स्वर्गवास हो गया। पिता के स्वर्गवासी हो जाने पर उनके रिक्त स्थान पर महकमे ड्योढीयान भरतपुर मे राज्य ने इनको जगह दे दी। माननीया मा जी साहव श्री गिरिराज कौर जी० सी० आई०, जो उस समय के महाराज भरतपुर श्री किशनसिंहजी वहादुर की माता थी, इनकी सेवाओ से वहुत प्रसन्न थी और इन पर उनका पूर्ण विश्वास था। उन्होने अपने दफ्तर कोठार मे इनको कोठारी वना दिया, तभी से आप मिट्ठनलाल कोठारी के नाम से विख्यात हुए।

श्री मिट्ठनलालजी कोठारी

राज्य की नौकरी करते हुए भी आप सामाजिक धार्मिक क्षेत्र में सदा भाग लेकर काम करते रहे हैं। पल्लीवाल समाज और जैन धर्म की उन्नति के लिए समय-समय पर आप तन मन धन से सेवा करते आ रहे हैं।

पल्लीवाल जैन श्वेताम्बर मन्दिर भरतपुर की व्यवस्था पहिले बहुत खराब थी। मन्दिर की ऐसी दशा देखकर श्री मिट्ठनलालजी कोठारी ने उसका प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया।

ग्राज उस मन्दिर की दशा बहुत अच्छी है। आपके ही प्रयास से पल्लीवाल जैन कान्फ्रेंस की स्थापना हुई और उसी के द्वारा आपने पल्लीवाल जन गणना और कई पल्लीवाल जैन मन्दिरो का जीर्णोद्धार आदि कार्य भी कराये।

भरतपुर के श्री महावीर भवन को सुन्दर ढङ्ग से बनाने का श्रेय भी आपको ही है।

आपने सन १९३५ मे कुछ पल्लीवाल भाइयों के साथ तीर्थाधिराज श्री सिद्धाचलजी और गिरिनारजी की यात्रा की। इसके पश्चात सन् १९५६ ई० मे एक यात्री सघ लेकर आप मोटर बस द्वारा पूर्व देशीय जैन तीर्थों की यात्रार्थ गये जिसका विवरण १ सितम्बर १९५६ के 'श्वेताम्बर जैन' अखबार में छप चुका है।

श्री मिट्ठनलालजी कोठारी के पूर्वजो मे श्री नारायनदासजी के पौत्र और श्री दयारामजी के पुत्र दीवान मोतीरामजी बहुत प्रख्यात व्यक्ति हुए। जिनको महाराज साहब श्री रजीतसिंह भरतपुर नरेश ने एक पट्टा आसीज वदी १ सम्वत १८६१ को लिख कर दिया था कि भरतपुर राज की ओर से गोवर्धन मे दीवान मोतीरामजी प्रवन्ध करेंगे और उनके पास मुसद्दी एक जमादार सिपाही ४८ व घोडा घुड सवार वगैर रहेगे और उनकी तनख्वाह खर्चा वगैर सव राज्य से उनके पास भेज दिया जाया करेगा। जिनका शाजरा निम्न प्रकार है, इस शजरे के वर्तमान कुटुम्ब मे प्रख्यात व्यक्ति श्री मिट्ठनलालजी कोठारी हैं।

श्री नारायणदास
श्री मोतीराम
सीताराम
गिरधारी
मंसाराम
रामप्रसाद
कन्हैयालाल
मोहकमसिंह
बंशीधर
महावीर प्रसाद

डा० बेनीप्रसाद, एम० ए० पी० एच० डी०

आपका जन्म २६ फरवरी १८९५ में एक साधारण परिवार में हुआ था।

जीवन का अधिकांश भाग प्रयाग में व्यतीत हुआ। कुछ वर्ष कानपुर में भी रहना हुआ। पढ़ने में तीक्ष्ण बुद्धि होने से प्रत्येक कक्षा में प्रथम आते रहे और पारितोषिक प्राप्त करते रहे।

इलाहाबाद विश्व विद्यालय से इतिहास में एम० ए० प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया, जब कि उस समय प्रथम श्रेणी इस विषय में विरले ही छात्रों को मिलती थी। इनके प्रोफेसर डा० रशबुक विलियम्ज ने इनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की और कहा कि इतना मेधावी छात्र उनको अपने जीवन काल में दूसरा नहीं मिला है।

एम० ए० के अध्ययन के साथ-साथ दो वर्ष इतिहास में ही रिसर्च स्कालर रहे और विश्व विद्यालय से छात्र वृत्ति पाते रहे। फिर इलाहाबाद विश्व विद्यालय में इतिहास के प्राध्यापक (लेक्चरार) नियुक्त हुए और शीघ्र ही वहीं रीडर हो गये।

दो बार लन्दन गये और वहाँ शोध कार्य से उन्होंने पी०एच० डी० तथा डी० एच० सी० की उपाधियाँ प्राप्त की।

भारत आकर शीघ्र ही इलाहाबाद विश्व विद्यालय में राजनीति के प्रोफेसर नियुक्त हो गये।

इतिहास तथा राजनीति के अतिरिक्त यह अंग्रेजी हिन्दी और संस्कृत के भी ऊँचे विद्वान थे। डाक्टरेट के लिए थीसिज के अतिरिक्त उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखी जिनमे अंग्रेजी में 'जहाँगीर का इतिहास' सबसे प्रसिद्ध है। अब इसका हिन्दी अनुवाद भी हो गया है।

एक बार यह इण्डियन पालिटिकल साइन्स कान्फरेंस के अध्यक्ष भी निर्वाचित हुए। अध्यक्षीय पद से इनका भाषण अत्यंत सारगर्भित हुआ था।

महात्मा गांधी ने भी एक बार इन से देश के संविधान का मसौदा निर्माण करने के सम्बन्ध में परामर्श किया था।

विश्व विद्यालय में इनकी योग्यता की ख्याति के कारण ही देश के प्रत्येक सूबे के बहुत से छात्र राजनीति पढ़ने के लिए आते थे। इनकी विद्वता की ख्याति केवल देश में ही नहीं थी वरन् अन्तर्राष्ट्रीय थी और संसार के बड़े-बड़े विश्व विद्यालय के प्रोफेसरों से इनका काफी सपर्क रहता था और वे इनका अत्यधिक सम्मान करते थे।

इनका चरित्र बड़ा ऊँचा था। स्वभाव बड़ा कोमल था। प्रथम बार ही इनके सम्पर्क मे आने पर मनुष्य अत्यन्त प्रभावित हो जाता था। आप ८ अप्रैल १९५५ ई० को जिनेन्द्रदेव का स्मरण करते हुए स्वर्गवासी हो गये।

इनके एक मात्र पुत्र श्री मोहनलाल इलाहाबाद विश्व विद्यालय मे इतिहास के आचार्य हैं। वह भी बडे योग्य और विद्वान् है। उनके छोटे भाई मेजर तारा चन्द क्राइस्ट चर्च कालेज कानपुर मे अर्थ शास्त्र के आचार्य रहे। वह अभी हाल मे ही रिटायर हुए है।

श्री गुलाबचन्द जी जैन बी० ए०

आजकल आप पंजाब सरकार में एक उच्च पद पर नियुक्त हैं। आप का जन्म मथुरा (उ० प्र०) जिला के एक गाँव मदेम में हुआ। आपके पितामह कालूराम जी उस समय पल्लीवाल जैन जाति के एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। घर में जमींदारी थी जिस का कार्य संचालन आपके पूज्य पिता मट्टूराम जी के हाथों में था आपके पिता दो भाई थे उनमें से ज्येष्ठ भाई श्री मुरलीधर जी जो कि गाँव के पटवारी थे इस परिवार के सबसे अधिक माननीय

और योग्य व्यक्ति रहे है। यह परिवार अब भी मदम गांव मे सुशोभित है। जमींदारी का काम इस समय आप के सगे भाई श्री चन्द्रभान जी व उनके सुपुत्र श्री लखमीचन्द जी के हाथो मे है। आपके कनिष्ठ भ्राता श्री भगवती प्रसाद जी भी पटवारी के पद पर काफी समय रह कर अब गांव मे ही जमींदारी के काम मे हाथ बंटा रहे है। इस परिवार मे शिक्षा का वडा प्रचार है।

ग्रामीण पाठशाला मे प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के बाद आप अध्ययन के लिए अजमेर (राजस्थान) चले गये। वहां राजपूताना बोर्ड की मिडिल परीक्षा मे सर्व प्रथम रहे। कालेज की यूनीवर्सिटी परीक्षाओ मे भी आप ऊँचे स्थानो पर उत्तीर्ण होते रहे और छात्रवृत्ति प्राप्त करते रहे। कालेज जीवन के बाद प्रतियोगिता मे सफल होने पर आप गवर्नमेन्ट सर्विस मे प्रविष्ट हुए। अपनी योग्यता व कार्य कुशलता के एकमात्र सहारे से आप पजाब सरकार मे Estblishment and accounts officer प्लानिंग आफीसर तथा असिस्टेण्ड सेक्रेटरी के पद पर समय २ पर रहे और अन्त मे आपको सेक्रेटरी पजाब सरकार पद Resourses, and Retrenchment Committee रिसोर्सेज व रिट्रैञ्चमैंट कमेटी के पद पर नियुक्त करके प्रान्तीय सरकार ने आपको मान दिया और एक वडी जिम्मेदारी का काम सौंपा, जिसे आप अपनी योग्यता से भली प्रकार सुचारु रूप से चला रहे हैं। आपके एक भतीजे श्री अमीरचन्दजी बी० ए० के सुपुत्र श्री चन्द्रभान जी आजकल पजाब सरकार मे डि० सुप्रि० के पद पर नियुक्त हैं।

श्री कुन्दनलालजी एम ए एल टी प्रभाकर

(इतिहास व राजनीति)

वंश परिचय—आप अनूसरिया गोत्रीय पल्लीवाल जैन हैं। आपका जन्म १५ अगस्त १९१९ का है। आपके पितामह का नाम श्री रामचन्द्रजी तथा पिता का नाम श्री भरोसीलाल जी था। माता श्री

कस्तूरी बाई विद्यमान है। श्री बद्रीप्रसादजी श्री प्रकाशचन्दजी और श्री शिखरचन्द जी नामक ३ लघुभ्राता तथा ७ बहिने है।

निवास स्थान—आपकी जन्म भूमि आगरा है पहले इनके पितामह आगरा जिले के मिढ़ाकुर ग्राम मे रहते थे फिर वहा से आगरे आकर व्यापार किया।

शिक्षा—आपने प्रथम आगरे की पल्लीवाल पाठशाला धूलिया गज मे शिक्षा पाई तदनन्तर शिक्षा अध्ययन के हेतु भरतपुर मे अपने बहनोई श्री मदनलाल जी पुत्र श्री मिट्ठनलालजी कोठारी के यहां रहकर हाई स्कूल की परीक्षा दी और प्रथम श्रेणी मे उत्तीर्ण हुए। आगे राज्य सेवा मे रहते हुए M A और L T पास किया।

राज्य सेवा—हाई स्कूल परीक्षा पूर्ण होते ही आप २७-३-१९३६ से अध्यापक हुए। बडी योग्यता से अध्यापन करते हुए वर्तमान मे आप प्रधान अध्यापक राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बसेडी (धौलपुर) जिला भरतपुर मे पदासीन हैं।

अन्य विवरण—आप भिन्न-भिन्न संस्थाओ के सदस्य व पदाधिकारी रहकर सामाजिक सेवा भी करते रहते है।

सुमेरचंद
नारायणलाल
गिर्राजप्रसाद
फूलचंद
प्रकाशचंद
टीकमचंद
भीकमचंद
भगोतीलाल
सुरेशचंद
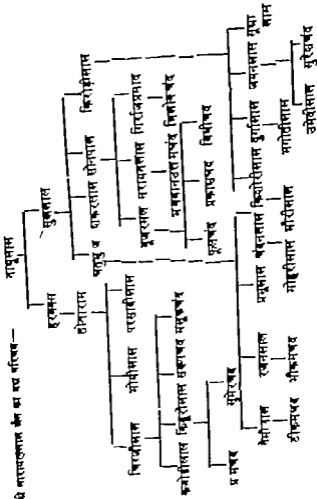
श्री नारायणलाल जी

यह सम्वत १९८९ मे जयपुर शहर मे रहकर व्यापार कार्य करते है आपकी धर्म कार्यों के प्रति अच्छी श्रद्धा है । सदैव धार्मिक कार्यों मे अगुआ रहते हैं।

पिछली तालिका मे दिया यह परिवार जयपुर जिले की तहसील हिन्डौन के वरगमा ग्राम मे एक प्रसिद्ध परिवार माना जाता है। एक ही हवेली मे दस कुटुम्ब के लगभग २०० स्त्री पुरुष निवास करते है। किसी समय यह सब सम्मिलित रहते थे। इनका कार्य क्षेत्र

श्री नारायणलाल जैन का वंश परिचय—
नाथूलाल
सुखलाल
किरोड़ीलाल
नरायनलाल
गिरिजाप्रसाद
निरंजीलाल
भोमीलाल
परसादीलाल
फूलचंद
प्रकाशचंद
सुमेरचंद
रतनलाल
किशोरीलाल
टीकमचंद
भीकमचंद
उमेदीलाल
सुरेशचंद
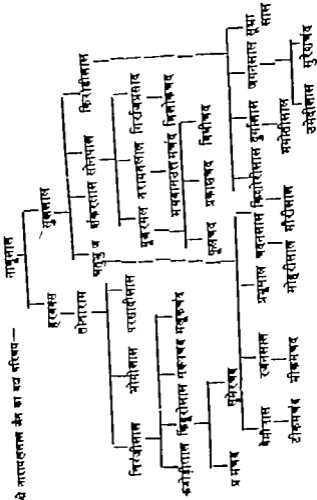
श्री प्यारेलाल जैन चौधरी हरसाने वाले

आप श्वेताम्बर पल्लीवाल जैन समाज मे अलवर जिले के ग्राम हरसाने मे प्रसिद्ध धनीमानी सज्जन हैं। आपका जन्म कार्तिक वदी १ शुक्रवार सम्वत १९४९ मे हुआ था। आपके पूज्य पिताजी का शुभ नाम श्री मोतीलाल था। जिनका स्वर्गवास ८० वर्ष की अवस्था मे समाधि पूर्वक धर्म ध्यान करते हुए हुआ था। श्री प्यारेलाल जी की धर्म भावना वहुत ही वढी हुई है। आपने समय-समय पर दान देकर अपनी दान वीरता का परिचय दिया है।

१ हरसाने मे गाधी विद्यालय के लिये २८ वीघा जमीन मय पुख्ता कुआ तथा रु० १०५१) दान दिये।

२ हरसाना ग्राम के श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर पल्लीवाल को ३ मकान भेट स्वरूप प्रदान किये हैं।

३ वडौदा मेव मे जैन रथ यात्रा के समय १८००) की रकम वोली मे दी थी।

४ श्री गाधी विद्यालय हरसाने को समय-समय पर और भी दान दे चुके हैं।

इसके अतिरिक्त आप समय-समय पर अन्य शुभ कार्यों मे

अधिकतर व्यौपार रहा है और राज्य मे भी पटवार व गिरदावर रहे हैं। यह ग्राम प्रसिद्ध क्षेत्र श्री महावीरजी से १ मील के फासले पर है। इनके परिवार में भी महावीर स्वामीजी की भक्ति अधिक चली आ रही है। वर्तमान मे श्री नरायनलाल जी अपने पिता श्री सोनपालजी के बड़े भ्राता श्री शानरसालजी के दत्तक पुत्र के रूप मे विद्यमान है।

श्री प्यारेलाल जैन चौधरी हरसाने वाले

आप श्वेताम्बर पल्लीवाल जैन समाज मे अलवर जिले के ग्राम हरसाने मे प्रसिद्ध धनीमानी सज्जन है। आपका जन्म कार्तिक वदी १ शुक्रवार सम्वत् १६४६ म हुआ था। आपके पूज्य पिताजी का शुभ नाम श्री मोतीलाल था। जिनका स्वर्गवास ८० वर्ष की अवस्था मे समाधि पूर्वक धर्म ध्यान करते हुए हुआ था। श्री प्यारेलाल जी की धर्म भावना बहुत ही बढी हुई है। आपने समय-समय पर दान देकर अपनी दान वीरता का परिचय दिया है।

१ हरसाने मे गाधी विद्यालय के लिये २८ बीघा जमीन मय पुख्ता कुआ तथा रु० १०५१) दान दिये।

२ हरसाना ग्राम के श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर पल्लीवाल को ३ मकान भेट स्वरूप प्रदान किये हैं।

३ बडौदा मेव मे जैन रथ यात्रा के समय १८००) की रकम बोली मे दी थी।

४ श्री गाधी विद्यालय हरसाने को समय-समय पर और भी दान दे चुके हैं।

इसके अतिरिक्त आप समय-समय पर अन्य शुभ कार्यों मे

भी दान देते रहते हैं। हाल में आपने भरतपुर में श्री महावीर भवन में एक पुख्ता दूकान का निर्माण कराया है जिसमें २   ) के लगभग रकम लगाई है।

आगरा सन्मति ज्ञान पीठ के भी आप सदस्य हैं।

धार्मिक कामों में आप धन से ही नहीं तन मन और धन तीनों लगा कर यथाशक्ति अपनी सेवायें अर्पित करते ही रहते हैं।

श्री केहरीसिंह जी भरतपुर

श्री केहरीसिंह जी जैन श्वेताम्बर पल्लीवाल समाज मे एक प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं। आपका परिवार अबभी भरतपुर के प्रसिद्ध घरानो मे गिना जाता है। आपकी वशावलि इस प्रकार है —

- श्री केहरीसिंह
  - श्री बालकिशन
    - श्री हरदेवसिंह
    - श्री मुरलीधर
      - श्री लक्ष्मीनारायन
        - श्री हजारीलाल
      - श्री माधोलाल
        - दत्तक पुत्र श्री रमनलाल
          - श्रीसुभापचद
          - श्रीप्रमोदकुमार
          - श्री अशोककुमार
          - श्रीसुबोधकुमार
    - श्री तुलसीराम
  - श्री लक्खूराम
    - श्री सब्बूराम
      - श्री रतनलाल
      - श्री सालगराम
        - श्री चन्द्रभान
          - श्रीसुरेशचद
          - श्रीदिनेशचद
          - श्रीमहेशचद
      - श्री हरप्रसाद
  - श्री सोहनलाल
    - श्री वंशीधर
      - श्री पदमसिंह
      - श्री गोरधनसिंह
    - श्री भोलासिंह
      - श्री गिरवरसिंह
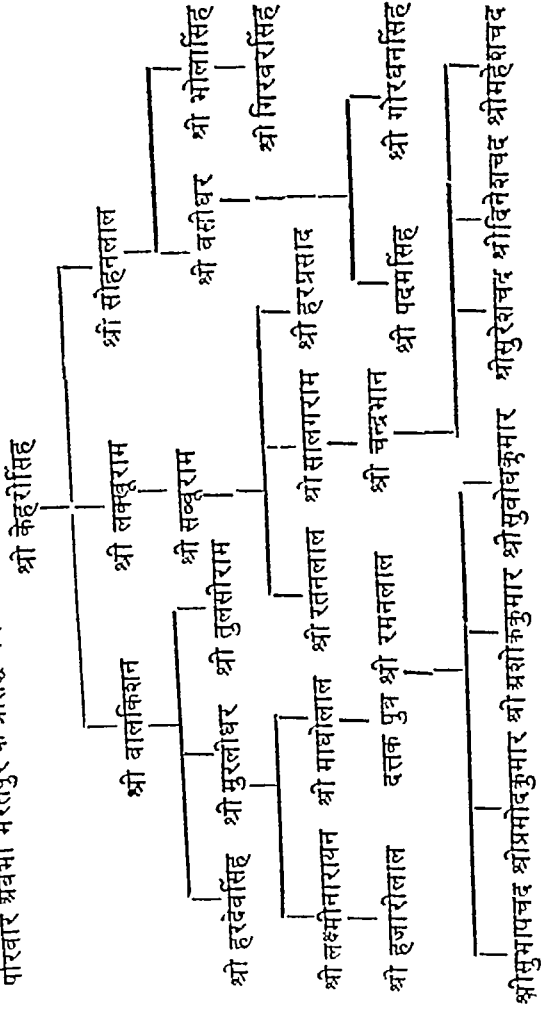
उपरोक्त वंशावलि में श्री शालगराम जी के पुत्र श्री चन्द्रभान जी और श्री माधोलाल जी के दत्तक पुत्र श्री रमनलाल जी इस परिवार के मुख्य व्यक्ति हैं। आपलोगों ने अपने परिवार के श्री पदमसिंह श्री गोवर्धनसिंह और श्री गिरधरसिंह के स्वर्गवास पर उनकी स्मृति में एक पुख्ता मकान जो कीमत में आठ हजार का था देकर उस द्रव्य को भरतपुर के अटी मोहल्ला स्थित श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर में मूलनायक श्री मुनिसुव्रत स्वामी की संगमरमर की वेदी में तथा महावीर भवन में एक धर्मशाला बनवाने में लगाया है।

श्री कुन्दनलाल जी काश्मीरिया

संक्षिप्त परिचय

श्री कुन्दनलाल जी काश्मीरिया—आपका जन्म एक प्रतिष्ठित परिवार मे विक्रम स० १९७५ मे हुआ था। आपके पिता मह का नाम श्री नारायणलालजी और पिता श्री दीपचन्द जी थे, जो कि इस परिवार के दीपक के ही तुल्य थे। इनका स्वभाव वहुत ही सरल व सर्वप्रिय था। इस परिवार का आदि निवास स्थान नौठा ग्राम तह० नदवई मे था और वाद मे इस परिवार के पूर्वज ग्राम खेडी तह० नदवई भरतपुर स्टेट मे आये। इसलिये

यह परिवार बेड़ी नौठा वालों के नाम से प्रसिद्ध है। आपकी जाति पल्लीवाल जैन" तथा गोत्र काश्मीरिया है। समस्त परिवार श्वेताम्बर जैन धर्म का अनुयायी है। साधु मुनिराजों की सेवा में पूरा परिवार अधिक श्रद्धावान है। आपके भ्राता चिम्मन लाल जी हैं। जिनकी जैन धर्म में अटूट श्रद्धा है। धर्म मे विशेष लगन होने के नाते से एवं जैन धर्म के कठिन नियमों का पालन करने के कारण आपको भगत जी के नाम से पुकारा जाता है। आपने सन् १६३७ में मैट्रिक की परीक्षा पास की और जनवरी सन् १६४२ में स्टेट की राजकीय सेवा में एकौन्टेंट जनरल के कार्यालय में प्रवेश किया। वर्तमान में आप यातायात विभाग जयपुर में औडीटर के पद पर है। समाज सेवा में सच्चे सेवा भावी तथा जैन धर्म के नियमों का पालन करने में पूर्णतया कटिबद्ध है— प्रात तथा साय दोनों समय सामायिक करने की लगन रखते है, और साधु मुनियों की सेवा में भी अपने को कृत कृत्य मानते है।

पल्लीवाल ज्ञाति की धर्म क्षेत्र में सेवायें

जैन ज्ञाति की मुख्य सेवायें धर्म और साहित्य के क्षेत्र मे भारत की इतर ज्ञातियो के समक्ष विशिष्ट रही है। कोई ज्ञाति राज करने मे, कोई युद्ध करने मे कोई कारबार चलाने मे, कोई पुरोहितपन मे रही, परन्तु जैन ज्ञातियां मुख्यत धर्म सेवा और साहित्य सेवा के क्षेत्रों मे दत्तचित्त रही। व्यापार व्यवसाय, कृषि आदि धधा करके अपने लाभ एव बचत को उपरोक्त क्षेत्रो मे व्यय करती रही। जैनो के समक्ष सात क्षेत्रो की सेवा करना उनका परम कर्त्तव्य रहता है। उनमे मुख्य क्षेत्र धर्म और ज्ञान हैं। इसी कर्त्तव्य परायणता का फल है कि जैन धर्म थोडी सख्या में अनुयायी रखता हुआ भी भारत मे गौरव भरी स्पर्द्धा रखता है। जैन मन्दिर, जैन तीर्थ तथा अन्य जैन धर्म-स्थान भारत के किसी भी वडी मे वडी सख्या मे रखने वाले धर्म के आनुयाइयो के धर्म स्थानो में शिल्प, वैभव मूल्य स्थल-वैशिष्ट्य मे यत किंचित भी कम नहीं है तथा जैन ज्ञानभण्डार भी अपनी विविध विषयकता, प्रभाविकता, प्राचीनता, एतिहासिक एव पुरातत्त्व विषयक सामग्री और धर्मग्रथो की मौलिकता मे भारत मे ही नही, दुनिया के प्रत्येक जागरूक राष्ट्र के समक्ष अपने साहित्य की समृद्धता सिद्ध कर चुके हैं। धर्म और ज्ञान की ये सेवायें हमारे पुण्शाली पूर्वजो की एक मात्र धर्म निष्ठा

और साहित्य प्रेम की परिचायिका है। इन पूर्वजों में समस्त जैन ज्ञानियों में उत्तम पुरुष रहे हैं। किसी के कम तो किसी के संख्या में अधिक। पल्लीवाल ज्ञाति एक लघु ज्ञाति है। फिर भी इस लघु इतिहास से स्पष्ट हो जाता है कि इस ज्ञाति में उत्तम पुरुषों ने शत्रुंजय तीर्थ गिरनार तीर्थ समेत शिखर तीर्थ के लिये संघ निकाले। शिल्प कार्य भी करवाये। अर्बुद तीर्थ पर विपुल द्रव्य व्यय किया। श्री महावीर जी तीर्थ की स्थापना की और अनेक छोटे बड़े नगर और ग्रामों में मंदिर बनवाये। प्रतिष्ठायें करवाईं और अनेक जिन बिम्बों की स्थापना की।

श्री नाकोड़ा तीर्थ—आज जहाँ भी नाकोड़ा तीर्थ है वहाँ वीरमपुर नाम का नगर था। नाकोड़ा तीर्थाधिराज प्रतिमा वि सं १४२९ नाकोर नामक नगर से जो वीरमपुर से २ मील दूर था वहाँ की नदी के कालीद्रह से प्राप्त १२ जिन बिम्बा के सहित लाकर नवनिर्मित मंदिर में विराजमान की गई थी। चूंकि प्रतिमा श्वसित नाकोर नगर की कालीद्रह से लायी गई थी अतः वीरमपुर का नाम ही बदल कर नाकोर तीर्थ के पीछे मामानी 'नाकोड़ा' प्रसिद्ध हो गया। यह नाकोड़ा तीर्थ मारवाड़ विभाग के मालानी परगना में बालो तरा रेल्वे स्टेशन से दक्षिण ६ मील के अन्तर पर है। यहाँ तीन भव्य मंदिर हैं-एक भ पार्श्वनाथ द्वितीय भ ऋषभदेव और तृतीय भ शांतिनाथ मंदिर के नाम से है। प्रथम मंदिर श्री संघ

द्वारा, द्वितीय लच्छी बाई नामक श्राविका द्वारा और तृतीय श्री मालाशाह सकलेचा द्वारा बना। लच्छी बाई और मालाशाह दोनो भ्राता भगिनी थे। ये दोनो मदिर वि० की सोलहवी शताब्दी के द्वितीय अर्ध भाग मे बने हैं।

नाकोडा तीर्थ सम्बन्धी कई प्रतिमा लेख एव प्रशस्ति लेख प्रकाशित हो चुके हैं। प्रकाशित करने वाले विद्वानो मे आचार्य श्रीमद विजययतीन्द्र सूरिजी द्वारा प्रकाशित 'श्री यतीन्द्र विहार दिग्दर्शन भाग दो मे इस तीर्थ का सलेख विस्तृत विवरण छपा है। कुछ लेख श्री पल्लीवाल गच्छीय आचार्य यशोदेव सूरि और पल्लीवाल सघ से सबन्धित हैं। ये लेख वि० स० १६३७, १६७८, १६८१, १६८२ हैं। इन लेखो से स्पष्ट विदित होता है। कि श्री नाकोडा तीर्थ पर पल्लीवाल गच्छ और पल्लीवाल ज्ञाति दोनो का अधिक प्रभाव रहा है। यहां तक ध्वनित होता है कि वीरमपुर मे पल्लीवाल सघ अधिक घरो की सख्या मे था और नगर मे उसका वर्चस्व था।

श्री यशोदेवसूरि की विद्यमानता मे वि० स० १६६७ मे सघ ने भूमिगृह बनवाया। वि० स० १६७८ मे सघ ने रगमण्डप का वतुष्क करवाया वि० स० १६८१ मे पल्लीवाल गच्छीय सघ ने अति सुन्दर तीन गवाक्ष सहित निर्गम द्वार की चौकी विनिर्मित करवाई। एव वि० स० १६८२ में समस्त सघ ने नन्दिमण्डप का निर्माण करवाया।

उन्नीसवी शताब्दी पर्यंत वीरमपुर समृद्ध एवं विशाल नगर रहा है। इस शताब्दी के अन्त में मालाशाह के एक वंशज नामक शाह ने राजकुमार के व्यवहार से रुष्ठ होकर वीरम पुर का त्याग करने का विचार किया। इस उद्देश्य की पूर्ति में उसने जैसलमेर तीर्थ के लिये एक संघ यात्रा करने का आयोजन रचा और उस बहाने बह २२ जैन घर और ४ जैनेतर घरों के परिवारो के सहित जैसलमेर तीर्थ की ओर चला और वे सब वहीं बस गये और लोटे नही। वीरमपुर की समृद्धि एवं शोभा इस संघ यात्रा के निष्क्रासन के साथ ही लुप्त हो गई और वीरमपुर कुछ ही वर्षों में उजड़ गया था। और फिर आबाद न हुआ। लेकिन तीर्थ के कारण आज भी वीरमपुर नाकोड़ा प्रसिद्ध है और कई सहस्त्र यात्रियों के प्रतिवर्ष के आवागमन के कारण अपनी पूर्व समृद्धि को चरितार्थ कर रहा है। इस तीर्थ की उन्नति एवं प्रसिद्धि में पल्लीवाल गच्छ और ज्ञाति दोनों का सराहनीय योग रहा है, यह ही विशेष उल्लेखनीय है।

श्री कोरटा तीर्थ—इस तीर्थ पर भी पल्लीवाल बन्धुओं की सेवाओं के सम्बन्ध में विशेष सुना जाता है। परन्तु इस सम्बन्ध में कोई उल्लेख प्राप्त नही हो सका है।

श्री अर्बुदतीर्थ—इस तीर्थ के श्री नैमिनाथ नामक लूणसिंह वसही में दण्डनायक तेजपाल की तत्वावधानता में ही पल्लीवाल ज्ञातीय नैमड़ और उसके परिवार ने जो-जो शिल्पकार्य करवाये उनका विशुद्ध परिचय नैमड़ के प्रकरण में दिया जा चुका है।

श्री शत्रुंजय गिरनार—तीर्थों पर भी पल्लीवाल ज्ञातीय बन्धु नेमड और अन्य द्वारा जो-जो शिल्पकार्य करवाये गये है। उनका परिचय यथाप्रसग इस लघु इतिहास मे दिया जा चुका है। यहाँ पुन. पिष्टपेषण को उचित नहीं समझा।

पल्लीवाल श्रेष्ठिबन्धुओं द्वारा कुछ प्रतिष्ठित प्रतिमाओं का परिचय निम्नवत है —

श्री शत्रुञ्जय तीर्थ—वि० सं० १३८३ वैसाख कृ० ७ सोमवार को पल्लीवाल ज्ञातीय पदम की पत्नी कौन्हणदेवी के श्रेयार्थ पुत्र कोका द्वारा कारित श्री महावीर प्रतिमा श्री गौडी पार्श्व-जिनालय मे विराजमान है।[1]

प्रभास पत्तन—वि० सं० १३३९ वैशाख शु० (२) शनिश्चर को पल्लीवाल ज्ञातीय ठ० आसाढ ठ० आसापल द्वारा पत्नी जाल्ह (ण) के श्रेयार्थ एक जिन प्रतिमा श्री बावन जिनालय की चरण चौकी मे विराजमान है। [2]

इसी बावन जिनालय की चरण चौकी मे द्वितीय प्रतिमा श्री पार्श्वनाथ की वि० स० १३४० ज्येष्ठ कृ० १० शुक्रवार की प्रतिष्ठित जिसको पल्लो० वीरवल के भ्राता पूर्णसिंह ने पत्नी वयजल देवी पुत्र कुमरसिंह, केलि (कालूसिंह) भा० ठ० स्वकल्याणार्थ करवाई, विराजमान है। [3] इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा कोरटकीय किसी आचार्य साधु ने की।

१–३ जैसलमेर नाहर लेखाक ६५७, १७९१, १७९२।

चौपासकोट (बलीबाबाद)—वि सं० ११ ० वैशाख शु० ११ बुधवार को श्री सहविमपुरवासी पल्ली० ब्राह्मणी देवा रूपी बहूदेवी के पुत्र वरी महीपाल महीचन्द के पुत्र राजपाल विक्रमपाल द्वारा म ठाकर पत्नी सामी के पुत्र सपर्णि मुनि देव के स्वपरिवार सहित देवकुलिका युक्त श्री मल्लिनाथ बिम्ब कारित एव अन्यगच्छीय श्री हरिप्रभसूरिशिष्य श्री यशोधर सूरि द्वारा प्रतिष्ठित जैन मन्दिर में विराजमान है।[1]

महम्मदाबाद—वि सं १३२० वर्ष शु ८ को पीथुगा जिता मय म पल्ली कुमरसिंह भार्या कुमरदेवी के पुत्र सागन्त पत्नी मू मारदेवी के श्रेयार्थ उनके पुत्र ठ० विक्रमसिंह ठ मूल ठ० सागा के द्वारा कारित एवं वडगच्छीय श्री चन्द्रसूरि शिष्य श्री माणिक्यसूरि द्वारा प्रतिष्ठित एक मोटी धातु पंचतीर्थी विराजमान है।[1]

मलक्षिमपुर पत्तन—वि स १३७१ आषाढ़ शु० ८ रविवार को पल्लीवाल ज्ञातीय श्रेष्ठि द्वारा प्रतिष्ठित श्री पार्श्वनाथ धातु बिम्ब कलापिना पाड़ा के बड़े मन्दिर में विराजमान है।[1]

नौतला—एक जैन मन्दिर में वि सं १३६७ माघ शु १० शनिवार को पल्ली ठ० छाडा पत्नी मायकी के पुत्र कि चौधरी कारित एवं श्री धर्मघोषगच्छीय श्री मानतुङ्ग सूरिशिष्य श्री [illegible] राजसूरि द्वारा प्रतिष्ठित एक श्री महावीर धातु प्रतिमा विराजमान है।

(१) जैसलमेर नाहर से०११७८ २ ३ वाँ पा प्र मि १६७ ३६८।

घोघा—वि० स० १५१० फा०कृ० ३ शुक्रवार को पल्ली० मं० मण्डलीक पत्नी शाणी के पुत्र लाला द्वारा पत्नी रगी तथा मुख्य कुटुम्ब सहित कारित एव श्री अचलगच्छीय श्री जय केशरिसूरि के उपदेश से प्रतिष्ठित श्री चन्द्रप्रभ धातुबिम्ब श्री जीरावला पार्श्वनाथ मदिर मे विराजमान है।[४]

हरसूली—वि० स० १४४५ फा० कृ० १० रविवार को श्री हारीजग० पल्ली० श्रेष्ठि भूभा भार्या पाल्हणदेवी पूजू के पुत्र कुन्नू, हापा द्वारा स्वमाता-पिता के श्रेयार्थ कारित एव श्री शील भद्र सूरिद्वारा प्रतिष्ठित श्री महावीर धातुप्रतिमा पचतीर्थी श्री पार्श्वनाथ जिनालय मे विराजमान है।[५]

लाडोल—वि० स० १३२६ चैत्र कृ० १२ शुक्रवार को पल्ली० श्रेष्ठि धनपाल द्वारा कारित एव चित्रावालगच्छीय श्री शान्तिभद्र सूरि शिष्य श्री धर्मचन्दसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री शान्तिनाथ एव अजितनाथ धातुप्रतिमा एक जिनालय मे विराजमान हैं। ७-८

राधनपुर—वि० स० १३५५ वैशाख कृष्णा × को श्री हारीज गच्छीय पल्ली० श्रे० जद्दता के श्रेयार्थ उसके पुत्र द्वारा कारित एव श्री सूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री चन्द्रप्रभ धातुबिम्ब एक जिनालय मे विराजमान है।[९]

गिरनारतीर्थ—वि० स० १३५६ ज्येष्ठ शु० १५ शुक्रवार को पल्ली० श्रे० पासु के पुत्र शाह पदम पत्नी तेजला ×× द्वारा कारित एव कुलगुरु के उपदेश से प्रतिष्ठित श्री मुनिसुव्रतस्वामी धातु प्रतिमा सहित देवकुलिका पितामह श्रेयार्थ विद्यमान है।[१]

दहीवा—वि सं० १३३५ चैत्र सु ५ की पल्ली० पद्मस पद्मा द्वारा थे सहजमल माता-पिता के श्रेयार्थ कारित एवं श्री विजयरत्नसूरि के राज्यकाल में श्री उदयप्रभसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री शान्तिनाथ धातु प्रतिमा बावा श्री पार्श्वनाथ मंदिर नरसिंह जी की पोल में विराजमान है।[९]

वि स १३२८ माघ सु ५ को पल्लीवालगच्छ म गग दरीया सोमीय थी धारली पुत्र पद्मा पत्नी मथकू के पुत्र भोमा द्वारा कारित एव श्री महावेश्वसूरिपट्टाधिकारी आमसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री पद्मप्रभ धातुबिम्ब शाह मोतीलाल हीराचन्द के घर देवालय में विराजमान है।

कम्मन—वि स १४ ८ वैसाख सु ५ गुरुवार की पल्ली थे समेत द्वारा पिता सेता माता मायू के श्रेयार्थ कारित एवं श्री चैत्र गच्छीय श्री पद्मदेव सूरि पट्टालंकार श्रीमानदेवसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री शान्तिनाथ धातुबिम्ब कुम्भार पाडा के श्री शीतल नाथ जिनालय में विराजमान है।

इसी मंदिर में वि सं १३४१ माघ सु १२ पल्ली स हरिचन्द्र के पुत्र स तेजपाल द्वारा माता पासहणदेवी के श्रेयार्थ

---

४ ५ प्राचीन लेख संग्रह (विद्याविजय जी) ले ९५, २३१
६. प्रतिष्ठ लेख संग्रह (विनय सागर जी) ले १७०
७-९ जै ध मि स भा १ स ४६२ ४६३

कारित एव प्रतिष्ठित श्री रत्नमय पार्श्वनाथ धातुबिम्ब विराजमान है।"

नाहिषपपुर—पल्ली० शाह ईसर के पुत्र माणिक पत्नी श्री० नाऊ के पुत्र शाहकुमारसिह ने श्री चन्द्र प्रभ जिनालय का जीर्णोद्धार करवाया था।[६]

अर्बुदतीर्थ—वि० स० १३०२ ज्येष्ठ शु० ६ शुक्रवार की पल्ली० भा० धणदेव पत्नी भा० धणदेवी के पुत्र भा० वागड पत्नी द्वारा कारित एव प्रतिष्ठित प्रतिमा श्री नेमनाथ जिनालय के श्री शातिनाथ मदिर (कुलिका) मे विराजमान है।

बीकानेर—वि० स० १३७३ वैशाख शु० ७ सोमवार को पल्ली० से० पामदत्त द्वारा से० नरदेव के श्रेयार्थ कारित एव चैत्र गच्छीय श्री पद्मसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री शातिनाथ प्रतिमा श्री चितामणी (चडवीसरा) जिनालय मे विराजमान है।

इसी नगर के श्री महावीर मदिर मे वि० स० १३६० वशाख कृ० ११ पल्ली० श्रे० ठ० मेघा द्वारा पिता अभयसिह माता लक्ष्मी के श्रेयार्थ कारित अम्बिका मूर्ति विराजमान है।[३]

बूदी—वि० स० १५३१ माघ शु० ५ शुक्रवार को पल्ली० शाह राज पुत्र धर्मसी के पुत्र प्रियव्रर द्वारा कारित एव वृहद्

प्राचीन जैन लेख सगह (जिन० वि०) लेखाक ४७७,५७ (गिरनार प्रशस्ति ५)

३-६ जै० ध० प्र० ले० स० भा० २ लेखाक १३१,२२८,५५०,६५५

७—विविध तीर्थ कल्प पृ० ५४।

गच्छीय श्री शान्तिभद्रसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री विमलनाथ पंचतीर्थी श्री पार्श्वनाथ मंदिर मे विराजमान है।[४]

हिरडोल—वि सं० १७९२ वैसाख सु १ शनिश्वर को नगर वासी के पल्ली नौसाठिया गोत्रीय श्री लखमीदास पत्नी बीजली के पुत्र शाह देवीदास द्वारा कारित एव विजय गच्छीय श्री तिलकसागर प्रतिष्ठित श्री ऋषभदेव प्रतिमा जिसकी प्रतिष्ठा हिरडोल में ही हुई थी। यह लेख श्री मन्दिर जी के दरवाजे पर है।

उक्त शाह देवीदास ने उक्त गच्छीय आचार्य से वि संवत १७९६ फा सु ७ गुरुवार को श्री पार्श्वनाथ प्रतिमा प्रतिष्ठित करवाई थी। यह प्रतिमा भी उक्त मंदिर में ही विराजमान है।[५]

भामरा—वि सं १३१६ की पल्ली मे भीम के पुत्र सीम और मेल द्वारा कारित एवं राजगच्छीय हंसराजसूरि द्वारा उपदेशित श्री शान्तिनाथ प्रतिमा श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ मंदिर मे विराजमान है।

१—अर्बुद प्रा जै लेख सं से ४६२
२ ३—बीकानेर जै ले संग्रह ले १६३१
४—प्रतिष्ठा ले सं (विनय सागर जी) प्र भा ले ७३८
५—प्रथम मूर्ति लेख में 'बास नागर नगरे' और द्वि मूर्ति लेख में 'हुमाणा बसे' पढ़ा गया है।
६—श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथ मंदिर भंडार भामरा से १७

भरतपुर—सं० १८२६ वर्षे मिती माघ वदि ७ गुरुवार डीग-नगरे महाराजे केहरीसिंह राज्य विजय राज्ये सदा भट्टारक श्री पूज्य श्री महानन्दसागर सूरिभिस्त इन्दस्त पल्लीवाल वश टगिया गोत्रे हुरसाणा नगर वासिना चौधरी चौथ राजेन प्रतिष्ठा करापितायां।

यह श्री मुनिसुव्रत स्वामी बिम्ब मूलनायक रूप मे श्री जैन श्वेताम्बर पल्लीवाल मदिर अटी मोहल्ला भरतपुर मे विराज मान है। इसी मदिर मे सर्वधातु की पचतीर्थी जी पर निम्न लिखित लेख है.—

॥ सिधि ॥ संवत १५५४ वैशाख सुदी ३ पल्लीवाल ज्ञातिय सघ घलित सूना सघना। श्री पार्श्व नाथ बिम्ब कारितं . . ।

सांचा (राजस्थान)—श्री शारदाय नमः श्री गुरुभ्यो नमः सवत १७०८ वर्षे फागुन सुदी १२ भृगुवासरे सिरपोन्नाल जैन जाति पल्लीवाल के भया लालचन्द लि० ततु सिष मोहन जि ततु सिष दशरथ ततु सिष पेतसि सवत १७०८ फागुन सुदी १२।

यह जैन श्वे० पल्लीवाल मन्दिर साचा (राजस्थान) का लेख है :

उपरोक्त प्रतिमा लेखो के अतिरिक्त कई प्रतिमा लेख और भी प्राप्त किये जा सकते हैं, परन्तु वे अक्षरान्तरित होकर प्रकाशित नही हुए। इस अभाव मे जो और जितने अबतक प्राप्त हो सके हैं उनके आधार पर कुछ पल्लीवाल कुल एव व्यक्तियो

का मात्र नाम परिचय ही हो सका है। परन्तु इतना सुस्पष्ट है कि पल्लीवाल जाति द्वारा कारित एवं प्रतिष्ठित श्वेताम्बर प्रतिमाओं से पल्लीवाल अपेक्षाकृत श्वेताम्बरीय प्राचीनतर सिद्ध होते हैं।

श्वेताम्बरीय पल्लीवाल गच्छ पल्लीवाल जाति का प्रतिबोधक माना जाता है और अगर नहीं भी माना जाय तो भी पल्लीवाल जाति जैन धर्मावलम्बन सम्बंधी प्राचीनतम प्रमाण श्वेताम्बरीय ही उपलब्ध होते हैं अतः मेरे विचार से पल्लीवाल जाति प्रारंभ में श्वेताम्बर थी और अब श्वेताम्बर मूर्ति पूजक स्थानकवासी और दिगंबर तथा वैष्णव मतानुयायी भी है।

पल्लीवाल जाति द्वारा विनिर्मित कई जैन मंदिर हैं जो भारत के विभिन्न भाग विशेषतः राजस्थान संयुक्त प्रदेश मालवा और मध्य भारत में हैं। उनकी यथा प्राप्त सूची नीचे दे रहा हूँ।

जयपुर	भरतपुर	[illegible]
मंडीप	डीग	भीमपुर
हिंडौन	कुम्हेर	हरसाणा
खेरपुर	बयाना	अलवर
मारेड़ा	वैर	[illegible]
कर्मपुरा	समरथा	समोची

सलावद
खेडला
साथा
मंडावर
श्री महावीरजी
(चांदनगाव)
करौली
रसीदपुर
कूजेला
रानोली
किरावली

सिरस
अलीपुर
डेहरा
पीघौरा
रुदावल
भरतपुर

महोदाकानका
मलावली
परवेणी

पल्लीवाल जैन महासमिति

लगभग ६८ वर्ष पूर्व आगरा में विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वाले पल्लीवाल जातीय कुछ विद्यार्थियों ने मिलकर अपनी लघु जाति में फैली हुई फूट, पारस्परिक अनैक्य आदि पारस्परिक सामाजिक प्रथायें, पारस्परिक गोत्रों, तड़े, दसबीसों प्रभेद, भोजन और कन्या व्यवहार सम्बन्धी अनुचित प्रतिबंधों को यथाशक्ति दूर करने की दृष्टि से एवं समाज में धार्मिक उन्नति लाने के दृष्टिकोणों को सामने रख कर एक "पल्लीवाल धर्म वर्धनी सभा" नाम से उक्त तीस समिति सन् १८९२ दिसम्बर ११ को आगरा में निर्मित की! आज जो इस जाति में जागृति प्रदर्शित होती है उसका अंकुर उक्त समिति में उत्पन्न हुआ था! समिति बनाने वाले स्मरणीय विद्यार्थी निम्न थे —

श्री कन्हैया लाल	श्री बिहारीलाल
,, आदीनाथ	,, भिकारीमल
रामकिशन	बाबूराम
,, सूरज भान	,, नारायणलाल
दीपचंद	मुरलीधर
मिट्ठन चंद	,, मुरलीधर की रुकस्या बाला
बुलाकी राम (वि[illegible] मची	,, फतेह लाल

श्री वालक राम ,, तारा चद अजमेर वाला
,, नारायणसिह रायभावाले ,, कु जलाल वुढवारी
,, ताराचद रायभा वाले ,, तारा चद
,, छोटे लाल ,, उमराव सिह
,, परशादी लाल ,, वृजलाल
,, हजारी लाल ,, राम प्रसाद
,, रतन लाल ,, लल्लू राम -प्रथम मत्री
,, चन्द्र भानु ,, नद किशोर
,, गणेशी लाल
,, साँवल दास
,, रामलाल

समिनि के सदस्यों में प्राय सर्व विद्यार्थी मैट्रिक, एफ ए, वी ए, एम ए, कक्षाओं के लडके थे। उन दिनों मे आर्य समाज आन्दोलन वेग पर था। इन सर्व विद्यार्थियो को आर्य समाज के आये दिन होने वाले भाषणो, शास्त्रार्थों, समाज एव देश सम्वधी कतिपय सुधार-विचारो से प्रेरणा, भावना प्राप्त हुई और इन सर्व विद्यार्थियों ने कुछ अन्य सज्जनो के सहयोग-सम्मति से उपरोक्त समिति स्थापित करके अपनी विखरी हुई जाति को एक सूत्र मे वाधने की, परस्पर भोजन-कन्या व्यवहार चालू करने की यत्न धारा प्रारम्भ की।

क्लव की प्रथम वैठक वरारा मे सन् १८६३ नवम्वर २४ को

मामा गणपतिलालजी की भगिनी के विवाह पर हुई। द्वितीय बैठक सन् १९१४ मार्च १० को श्री गट्टूरमल के विवाह पर हुई। तृतीय स्मरणीय बैठक ज्ञाति में प्रसिद्ध मा० मखेदीलालजी के क्यावर पर हुई। तात्पर्य कि ऐसे ही समाज-सम्मेलन के अवसरों पर क्लब की बैठकें होती गईं। क्लब की ओर से एक मासिक पत्र भी चालू किया गया। जिसमें प्राय रस्म-रिवाज प्रणालियों सम्बंधी ही विवरण रहा करते थे। धीरे धीरे यह क्लब अपनी ज्ञाति के विद्यार्थियों को छात्र-वृत्ति भी रु० २) ५) ७) १०) १५) मिडिल से एम ए तक क्रमश निर्धारित ढंग से देने लगा।

प्रथम में जब वा कन्हैयालाल आदि अति उत्साही युवक नौकरी करने के लिये दूर चले गये तो क्लब कुछ शिथिल पड़ने लगा था परन्तु बाबू जादोनाथ के उत्साह एवं प्रयत्नों से वह बन्द होने से बच गया। आगे तो इसके सदस्यों में से कुछ ही वर्षों में, कुछ लोग राजकीय अच्छे पदों पर पहुँच गये और उनका समाज पर अच्छा प्रभाव पड़ने लगा। श्री बुलाकीरामजी प्रजाब में ऐज्यूकेशन-सुपरिन्टेन्डेन्ट हो गये। मा कन्हैयालालजी का प्रभाव तो दिनों दिन फैल ही रहा था। विशेषता यह थी कि सभा के सदस्य बड़े होनहार उत्साही युवक थे और वे दूर दूर नगरों के थे। वे अपने २ नगरों में अपने प्रभाव एवं आधीन होने वाले विवाह क्यावर छोटे-बड़े मोसरों के अवसरों पर क्लब के उद्देश्य के अनुसार ही करने कराने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ थे। अत

कुछ ही वर्षों में वह क्लव सर्वत्र एव समस्त ज्ञाति की एक प्रतिनिधि सभा का रूप ग्रहण कर गया। अव यह प्रतीत होने लगा कि इसको 'पल्लीवाल महा समिति का रूप दे दिया जाय और वडे पैमाने पर जाति सुधार के कार्य किये जावें।

जैन पल्लीवाल कान्फरेन्स

क्लव की अन्तिम वैठक आगरा के नसिया जी मे ज्ये० कृ० ७ वि० स० १९७७ को लाला चिरजीलाल जी के सभापतित्व मे हुई। मा० कन्हैयालालजी इस सभा के कोपाध्यक्ष एव वावू श्यामलालजी वी० ए० स्वागताध्यक्ष थे। दूर २ के स्त्री, पुरुष लगभग १०००-१२०० की सख्या मे उपस्थित हुए थे। कई सुधार सम्वधी प्रस्ताव स्वीकृत हुए। विशेष उल्लेखनीय प्रस्ताव यह था कि मुरेना मध्य-भारत के पल्लीवाल वधुओंसे कन्या व्यवहार प्रारम्भ किया जाय। इस उद्देश्य की पूर्ति में एक समिति ला. भिकरीमलजी ला० दौलतरामजी, सूरजभानुजी, चन्द्रभानुजी इन चार सदस्यों की विनिर्मित की गई और उन्हें मुरेना के पल्लीवालों के गोत्र, नख, धर्म सम्वधी विवरण तुरन्त तैयार करके सभा के समक्ष प्रस्तुत करने को कहा गया।

द्वितीय उल्लेखनीय प्रस्ताव के अनुसार मुरेना, भौजपुर, आगरा, भरतपुर, हिंडौन, जयपुर, मण्डावर मे सभा की शाखायें खोली गईं और उनके मत्री, कोपाध्यक्ष नियुक्त किये गये।

सर्व सम्मति से सभा को पल्लीवाल जैन कान्फरेन्स का नाम दे दिया गया और आगामी अधिवेशन तक सभा के सभापति मा कन्हैयालालजी सर्व सम्मति से चुने गये। यह कान्फरेन्स का प्रथम अधिवेशन था। आगे सभा के कुछ महत्व पूर्ण अधिवेशनों के सम्बंध में परिचय दिया जा रहा है।

महत्वपूर्ण द्वितीय अधिवेशन

सन १९२५ के नवम्बर २५ को मदनेरे में सभा का द्वितीय अधिवेशन हुआ। उसमें मुरेना मध्य भारत के पल्लीवाल बंधु भी सम्मिलित हुए। लगभग दूर २ के ४५ ग्राम नगरों से स्त्री पुरुष आकर सम्मिलित हुए। जांच समिति का विवरण पढ़कर लाला दौलतरामजी ने सुनाया। सर्व सम्मति से मुरेना मध्य भारत के पल्लीवाल बंधुओं के साथ कन्या व्यवहार प्रारम्भ कर देने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। पंडित चिरंजीलालजी को ज्ञाति भूषण की उपाधि प्रदान की गई। विवाहों में वेश्यानृत्य बन्द किया गया आदि कई बड़े महत्व पूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुए। सभा पंडित चिरंजीलालजी के सभापतित्व में हुई थी।

महत्वपूर्ण तृतीय अधिवेशन

यह अधिवेशन फिरोजाबाद में राय साहब कल्याणरायजी के सभापतित्व में सन् १९३१ मार्च १८ वि० सं० १९८८ को हु

७ को बड़े उत्साह से हुआ। इसमें छीपापल्लीवालों के साथ भोजन और कन्या व्यवहार आरम्भ करने का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया।

महत्वपूर्ण चतुर्थ अधिवेशन

यह अधिवेशन गंगापुर वासी ज्ञाति शिरोमणि सेठ रामचन्द्र जी के सभापतित्व में सन् १९३५ अप्रेल १६ को हिण्डौन में हुआ। इसमें ज्ञाति के इतिहास पर प्रकाश डाला गया और संगठन को आगे बढ़ाने के संबंध में विचार विमर्श हुए। रामचंद जी के पुत्र रिद्धिचन्द M. L A, गंगापुर वालों की जयपुर में भी रिद्धिचन्द जगन्नाथ के नाम से लखपती फर्म हैं।

सभा का सन् १९३६ का अधिवेशन ता ३० जून को अलवर में हुआ। इसने ज्ञाति में प्रचलित रस्म रिवाज सम्बन्धी एक पुस्तक प्रकाशित करके घर २ पहुँचाने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

सभा के आगे के अधिवेशन सेरली, और महावीर जी में हुए। इन अधिवेशनों में छीपा पल्लीवाल एवं मुरेना के पल्लीवालों के साथ वैवाहिक सबन्ध स्थापित करने के जो विरोध उत्पन्न हो रहे थे, धीरे २ उनको दूर करने का प्रयत्न किया गया।

क्लब ने सभा को जन्म दिया और सभा ने जाति को एक रूप में बांधा। क्लब और सभा के समस्त कार्यकर्त्ता पल्लीवाल ज्ञाति के इतिहास में स्मरण करने योग्य एवं धन्यवाद के पात्र हैं।

लाला बधीयर जी का नाम तो विशेषत उल्लेखनीय है। इस सच्चे जाति सेवक सज्जन ने ग्राम-ग्राम भ्रमण करके अत्यन्त कठोर श्रम करके एक ही वर्ष में जनवरी सन् १९१६ से दिसम्बर १९१६ तक ही जन-गणना कार्य तूफानी वेग से सम्पन्न कर डाला। जन गणना के कठिन श्रम से ये इतने अशक्त हो गये थे कि सन् १९१७ में ही इनका देह-त्याग हो गया। जन गणना का समस्त व्यय पैंची निवासी लाला गोपीलाल जी ने सहर्ष उठाया था। आगरा निवासी ला सूरजभानजी प्रेमी ने बड़े श्रम से जन गणना के कोष्टक तैयार किये थे। सन् १९२ में ला कन्हैया लाल के द्वारा जन गणना का विवरण प्रकाशित किया गया। समिति का जन-गणना का कार्य एक महत्व पूर्ण कार्य कहा जा सकता है। इससे जाति की समस्त स्थितियों का एक चित्र तैयार कर लिया गया और उसके आधार पर जिससे कई सुधार सम्भव और सहज हो सके।

लाला ज्ञानचन्द-बैरनी सभा के सभापति चुने गये थे। इनका वीर समाधिया है। ये बड़े उत्साही एवं सुधारक विचारों के हैं।

सेठ मोतीलाल जी ये पैंची के निवासी थे। श्री महावीर जी का अधिवेशन इनके सभापतित्व में हुआ था।

पल्लीवालज्ञाति का अन्य जैन ज्ञातियों में स्थान

जैन ज्ञातियो मे ओसवाल, श्रीमाल, पोरवाल, खण्डेलवाल, बघेरवाल अगरवाल आदि कई ज्ञातिया हैं उनमे पल्लीवाल ज्ञाति भी एक है। पल्लीवाल ज्ञाति वर्ग मे ही जंगयाल और सैलवाल अति छोटी दो ज्ञातियां भी सम्मिलित है। जैन ज्ञातियो में मेडतवाल, दिशावाल, पल्लीवाल, नागरवाल, वागटी अति छोटी ज्ञातिया हैं। फिर धर्म और अर्थ के क्षेत्रो मे अपने अपने आकार के अनुसार सर्व ज्ञातिया अपना अपना प्रभुत्व रखती आई हैं। यह स्वभाव मानना पडता है कि जिसके सौ हाथ उसके सौ साथ। इस दृष्टि से ओसवाल, श्रीमाल, पोरवाल, अगरवाल ज्ञातियां अधिक समुन्नत रही। राज्य, व्यापार, तीर्थ धर्मस्थानो मे इनका ही बोलवाला रहा। परन्तु जब समानुपात की दृष्टि से विचार करेंगे तो लघु ज्ञातियो का पलडा वजन मे झुकता दिखाई देगा। यह लघु इतिहास इसके प्रमाण मे प्रस्तुत किया जा सकता है। इस ज्ञाति मे श्रेष्ठिनेमड जैसा धनपति, दिवान जोधराज जैसा धर्मिष्ठ, आचार्य धर्मघोषसूरि जैसे महाप्रभावक युगप्रधान हो गये हैं। जिनसे साहित्य, तीर्थ, धर्मक्षेत्र सबही शोभा को प्राप्त हुए हैं।

अन्य जातियाँ संख्या में बड़ी और यह जाति नहीं बड़ी इस सम्बंध में एक बात जो उल्लेखनीय है वह यह है कि ओसवाल श्रीमाल पोरवाल जैसी जातियों का निर्माण कई शताब्दियों तक होता रहा और उनका वर्ग अधिकाधिक बढ़ता ही रहा। इन जातियों ने अपने प्रथम मूलस्थान को ही अपना जन्मदाता नहीं माना। जो जैन बने और इनमें जो मिलना चाहते थे उनको इन्होंने सहर्षस्वीकार किया एवं नगर अथवा ग्राम से इनका नाम का कलेवर नहीं बना है। संभव है यह बात पल्लीवाल वैश्य जाति के निकट नहीं रही। जो पाली से जैनधर्मी बने वेही पल्लीवाल वैश्य जैन रहे और उनकी घटती बटती सन्तानें ही आज का पल्लीवाल जाति का आकार बना पाई है और फलतः इसमे पश्चात् बनने वाले जैन कुलों का समावेश नहीं होने के कारण यह जाति छोटी रही और रह रही है। फिर भी सर्व जैन जातियों में इसका बराबरी का स्थान है और सम्मान है।

ओसवाल श्रीमाल पोरवाल बड़ी बड़ी जातियां हैं। इन जातियों ने अपने अपने कुलों को यथा शक्ति यथावसर उन्नति करने में सहाय की है। श्रीमाल पोरवालों का क्षेत्र गुर्जरभूमि बनी और यही कारण है कि श्रीमाल और पोरवाल गुर्जरभूमि मे आज भी अधिक संख्या में हैं और ये जातियां वहां के राजघरों मे राज्यों में वर्चस्व रखती आई हैं। जो किसी भी इतिहासकार से अज्ञात नहीं है बल्कि यों कहा जा सकता है कि इन जैन जातियों

के इतिहास मे गुर्जरदेश, राज्यो का समूचा इतिहास पढा जा सकता है। गुर्जरभूमि का वडा से वडा राजा और अधिक से अधिक विस्तारवाला साम्राज्य इन पर निर्भर रहा है। इसी प्रकार राजस्थान मालवा के देशी राज्यो मे ओसवालो का प्रभाव रहा। पल्लीवाल ज्ञाति को राजस्थान, मालवा के देशी राज्यो मे अपना प्रभुत्व जमाने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ। परिणाम इसका यह रहा है कि ज्ञाति छोटा छोटा वाणिज्य कृषि करती रही। जाति को अधिक उन्नतिशील वनाने के हेतु ही पल्लीवाल क्लव की आगरा मे स्थापना हुई थी और वह उन्नतशील रह कर अन्त मे 'पल्लीवाल महासमिति,' का रूप ग्रहण कर सकी थी। इसने जो क्राति की और ज्ञाति मे जो सगठन उत्पन्न किया उसके सम्वध में सम्वधित प्रकरण मे कहा जा चुका है।

अव तो इस ज्ञाति मे पढे-लिखे लोगो की सख्या अच्छी वढ गई है और वढती जा रही है। अर्थ के क्षेत्र मे भी अव इसने अच्छी उन्नति की है।

इस ज्ञाति मे भी अन्य जैन ज्ञातियो की भाति जैन धर्म के सर्व सम्प्रदायो की मान्यतायें प्रचलित है। जैसे श्वेताम्वर मूर्तिपूजक, स्थानकवासी, दिगम्वर आदि।

सन् १९२० मे मा० कन्हैयालाल जी, ने पल्लीवाल ज्ञाति की जन गणना का विवरण प्रकाशित किया था। उसका एक

संक्षिप्त कोष्टक इस लघु इतिहास में यथा प्रसंग दिया गया है। उसमें जाति में पुरुष स्त्री की संख्या शिक्षा वैवाहिक-अविवाहित विधुर, विधवा एवं व्यवसाय और नौकरी आदि स्थितियों का विशद परिचय हो जाता है। आज उस बात को ४० वर्ष का समय व्यतीत हो गया। परन्तु, अन्य जैन जातियों के साथ अगर इस लघु जैन जाति का भाग्य भी बंधा हुआ माना जाय तो उनकी भांति अभी इस वैज्ञानिक एवं प्रगति के युग में ठप हो बैठी हुई है। अपने संकुचित क्षेत्र से विकास नहीं पा रही है। जाति के अगेवानों पर इसकी उन्नति का उत्तरदायित्व है। वे सोचें समझें और मार्ग में पड़ी हुई विघ्न बाधाओं से जूझकर अपनी जाति को आगे बढ़ा ले चलें। इस लघु-इतिहास के प्रकाशन का मुख्य हेतु यही है कि जाति अपने भूत और वर्तमान को पढ़ें और समझें और भविष्य के प्रति जागरूक बनें और भारत की उन्नतशील जातियों से कन्धा मिला कर आगे बढ़ें।

पल्लीवालगच्छ पट्टावलि

प्रथम चोवीस तीर्थंकरो और ग्यारह गणधरो के नाम लिखकर आगे पाटानुक्रम इसी प्रकार लिखा है।—

(१) श्री स्वामी महावीर जी रै पाटि श्री सुधम्म

(२) तिण पट्टे श्री जम्बूस्वामी

(३) तत्पट्टे श्री प्रभवस्वामी

(४) श्री शय्यभवसूरि

(५) तत्पट्टे श्री जसोभद्रसूरि

(६) तत्पट्टे श्री सभूतविजय

(७) तत्पट्टे श्री भद्रवाहु स्वामी

(८) तत्पट्टे, तिणमहें भद्रवाहु री शाखान वधी, श्री स्थूलिभद्र

(९) तत्पट्टे श्री सुहस्तिसूरि, २ काकद्याकोटि सूरिमंत्र जाप्यां चात् कोटिक गण। तिहांरै पाटिसुप्रतिवध ९ तियांरै गुरुभाई सुतिणारा शिष्य दोय विज्जाहरी१, उच्चनागरी२ सुप्रतिवधपाटि९ तिणरी शाखा २ तिणांरा नाम मझमिला १, वयरी २।

(१०) वयरी रै पाटि श्री इन्द्रदिनसूरि पाटि

(११) तत्पट्टे श्री आर्य दिन्नसूरि पाटि

(१२) तत्पट्ट श्री सिंहगिरिसूरि पाटि

(१३) तत्पट्ट श्री वयरस्वामि पाटि

(१४) तत्पट्ट तिणोंरी शाखा २ तिणांरा नाम प्रथम श्री वयरसेन पाटि १४ बीजो श्री पद्मूर तिणरी शाखा। तीजो श्री रथसूरि पाटि श्री पुसियीर री शाखा चौथी वयरसेन पाटि

(१५) तत्पट्ट श्री चन्द्रसूरि पाट १५ संवत् १२० चन्द्रसूरि

(१६) संवत् १११ (१६१) श्री शांतिसूरि तत्पट्ट १६ श्री संवत् १८ स्वर्ग श्री शान्तिसूरि पाटि १६ तिणरे शिष्य ८ तिहारा नाम श्री महेन्द्रसूरि १ तिणथी मथुरावाल गच्छ, श्री शालिगसूरि श्री पुरवालगच्छ, श्री देवेन्द्रसूरि -संदेवालगच्छ, श्री भावदेवसूरि सीमिठवालगच्छ, श्री हरिभद्रसूरि मंडोवरागच्छ, श्री विमलसूरि पत्तनवालगच्छ श्री वद्ध मानसूरि भरवच्छवालगच्छ ७ श्री मूलपाटे

(१७) श्री यशोदेवसूरिपाटि १७ संवत्१२६ वर्षे वैशाख सुदि ५ प्रस्हादि प्रतिबोधिता श्री पालिवालगच्छ थापना' संवत् ३६ (?) स्वर्ग

(१८) श्री नन्नसूरि पाटि १८ संवत ३२६ स्वर्ग (३६५)

(१९) श्री उद्योतनसूरि पाट १९ संवत ४० स्वर्ग

(२) श्री महेश्वरसूरि पाटि २ संवत ४२४ स्वर्ग (४४)

(२१) श्री प्रभव(अजित) देवसूरि पाटि २१ संवत ६५ वर्षे स्वर्ग (४७२)

(२२) श्री श्रामदेवसूरि पाटि २२ सवत ४५६ स्वर्ग
(२३) श्री शांतिसूरि पाटि २३ मवत ४५ (६१) ५ स्वर्ग
(२४) श्री जस्योदेवसूरि पाटि २८ सवत ५३४ स्वर्ग
(२५) श्री नन्नमूरि पाटि २५ मवत ५७० म्वर्ग
(२६) श्री उजोग्रणसूरि पाटि २६ सवत ६१६ स्वर्ग
(२७) श्री महेश्वरसूरि पाटि २७ सवत ६४० स्वर्ग
(२८) श्री ग्रभय(ग्रजित) देवसूरि पाटि २८ सवत ६८१ स्वर्ग
(२९) श्री श्रामदेव सूरि पाटि २९ सवत ७२२ स्वर्ग
(३०) श्री शानिसूरि पाटि ३० सवत ७६८ स्वर्ग
(३१) श्री जस्यादेवमूरि पाटि ३१ सवत ७९५ स्वर्ग
(३२) श्री नन्नमूरि पाटि ३२ सवत ८३१ म्वर्ग
(३३) श्री उजोयणसूरि पाटि ३३ सवत ८७२ स्वर्ग
(३४) श्री महेश्वरसूरि पाटि ३४ सवत ९२१ स्वर्ग
(३५) श्री ग्रभय(ग्रजित) देयसूरि पाटि ३५ सवत ९७२ स्वर्ग
(३६) श्री श्रामदेवमूरि पाटि ३६ सवत ९९९ म्वर्ग
(३७) श्री शातिसूरि पाटि ३७ सवत १०३१ स्वर्ग
(३८) श्री जस्योदेवसूरि पाटि ३८ सवत १०७० स्वर्ग
(३९) श्री नन्नसूरि पाटि ३९ मवत १०९८ स्वर्ग
(४०) श्री उज्जोयणसूरि पाटि ४० सवत ११२३ स्वर्ग
(४१) श्री महेश्वरसूरि पाटि ४१ सवत ११४५ स्वर्ग

(४२) श्री अभय(अजित) देवसूरि पाटि ४२ (संवत) श्री मलधारी श्री अभयदेवसूरि आदि मिस्या तापसे अजितदेव ठामि श्रीअभयदेवसूरि तहांणी पाटि ४२ संवत ११६६ स्वर्ग

(४३) श्री आमदेवसूरि पाटि ४३ संवत ११६६ स्वर्ग

(४४) श्री शांतिसूरि पाटि ४४ संवत १२२४ स्वर्ग

(४५) श्री जस्यादेवसूरि पाटि ४५ संवत १२३४ स्वर्ग

(४६) श्री नन्नसूरि पाटि ४६ संवत १२३६ स्वर्ग

(४७) श्री उजोमणसूरि पाटि ४७ संवत १२४३ स्वर्ग

(४८) श्री महेस्वरसूरि पाटि ४८ संवत १२७४ स्वर्ग

(४९) श्री अभय(अजित) देवसूरि पाटि ४९ संवत १३२१ स्वर्ग

(५) श्री आमदेवसूरि पाटि ५ संवत १३७४ स्वर्ग

(५१) श्री शांतिसूरि पाटि ५१ संवत १४४८ स्वर्ग

(५२) श्री जस्योदेवसूरि पाटि ५२ संवत १४८८ स्वर्ग

(५३) श्री नन्नसूरि पाटि ५३ संवत १५१२ स्वर्ग

(५४) श्री उजोमणसूरि पाटि ५४ संवत १५५२ स्वर्ग

(५५) श्री महेस्वरसूरि पाटि ५५ संवत १५६६ स्वर्ग

(५६) श्री अभयदेव(अजित) सूरिपाटि ५६ नवी पच्छ वासना कीधो गुरा सा (बे) मनीस कीधो कोटि ह प करि क्रिया उद्धार कीधो संवत १५६५ स्वर्ग

(५७) श्री आमदेवसूरि पाटि ५७ संवत १६१४ स्वर्ग

(५८) श्री शांतिसूरि पाटि ५८ संवत १६६१ स्वर्ग

(५६) श्री जम्योदेवसूरि पाटि ५६ सवत १६६२ स्वर्ग

(६०) श्री नन्नसूरि पाटि ६० सवत १७१८ स्वर्ग

(६१) श्री विद्यमान भट्टा (रक) श्री उजोअणसूरि पाटि ६१ सवत १६८७ वाचक पद सवत १७२८ ज्येष्ठ सुदि १२ वार शनिदिने सूरिपद विद्यमान विजय राज्ये ।

(स० १७३४ स्वर्ग)

लेखक प्रशस्ति—सवत १७२८ वर्षे श्री शालिवाहन राज्ये शाके १५६३ प्रवर्त्तमाने श्री भाद्रपद मास शुभ शुक्लपक्षे नवमी ६ दिने वार शनिदिने श्रीमत् पल्लिवीयगच्छे भट्टा० श्री शातिसूरि तत्पट्टे भ० श्री श्री ७ जस्योदेवसूरि सताने श्री श्री उपाध्याय श्री महेन्द्रसागर तत्शिष्य मु० श्री जयसागर शिष्य चेला परमसागर वाचनार्थे श्री गुरारो पट्टावली लिख्यत ॥ श्री ॥

उपरोक्त पट्टावली अप्रकाशित है। यह पट्टावली वीकानेर वड़ा उपाश्रय के वृहत् ज्ञान भण्डार की सूची वनाते समय एक गुटकाकार पुस्तक के रूप मे श्री अगरचदजी नाहटा जी को प्राप्त हुई थी। गुटका उसी गच्छ के यतियो द्वारा लिखा हुआ है। उसी गुटके की नकल करके श्री नाहटा जी ने अपने लेख 'पल्लीवाल गच्छ पट्टावली' मे श्री आत्मानद अर्धशताब्दी ग्रथ मे उसे प्रकाशित की है।

१६ वें श्री शातिसूरि से २२ वे श्री आमदेवसूरि पर्यंत सातो नाम आगे के पट्टधरो के लिये कमश रूढि वनकर चलते रहे है। नामो की रूढता अन्य गच्छो मे भी पायी जाती है।

श्री नाहटा जी ने प्रथम लेख में पट्टावली की प्रामाणिकता के सम्बन्ध में यों लिखा है :—

पल्लीवाल गच्छ की प्रमुख पट्टावली चन्द्रसूरि तक तो अन्य गच्छीय पट्टावलियों से मिलती हुई है पर इसके आगे सर्वथा स्वतन्त्र है।

न. ४४ शांतिसूरि का सं. १२२४ में स्वर्गवास लिखा है, परन्तु सोमशेखर शिष्य उदयशेखरकृत 'जयतारण विभानबिंब स्तवन(गा. २१) में इन्होंने सं. १२३६ माघ सुदि १३ को रावली को भराई हुई इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा (शांतिसूरि जी ने) कराई थी ऐसा उल्लेख है। यथा संभव शांतिसूरि उपरोक्त ही होवें।

न. ४९ अभयदेवसूरि का संवत १३२१ में स्वर्ग (वास) लिखा, है परन्तु जैन धातु प्रतिमा लेख संग्रह लेखांक ८९९ में इनका (प्रतिष्ठा) में १३८३ मा. सुदि ११ लेख उपलब्ध है।

न. ५१ शांतिसूरि का सं. १४८८ में स्वर्गवास लिखा है परन्तु पट्टावली-समुच्चय पृ. २ ३ में संवत १४५८ का इनका लेख है। तथा श्री नाहटा जी के स्वयं के संग्रह में भी संवत १४९९ का लेख है।

न. ५२ यशोदेवसूरि का स्वर्गवास सं. १४८८ लिखा है परन्तु संवत १५ १-७-११ तक के आप के द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तियों के लेख उपरोक्त दोनों ग्रन्थों में पाये जाते हैं।

पल्लीगच्छ अथवा पल्लीवाल गच्छीय

आचार्य-साधुप्रतिष्ठित

प्रतिमा लेख

पाली मे पूर्णभद्र वीर जिनालय की महावीर एवं आदिनाथ प्रतिमाओ पर वि० स० ११४४ और ११५१ के लेख है। जिनमे 'पल्लीकीय प्रद्योतनाचार्यगच्छे', पद का प्रयोग हुआ है।

अभयदेवसूरि—स० १३८३ माघ शु० १० सोम० (जै० धा० प्र० ले० भा० २ ले० ८९९)

आमदेवसूरि —स० १४३५ फा० शु० २ शुक्र (प्रतिष्ठा ले० सग्रह—विनयसागरजी ले०१६२)

शातिसूरि —स० १४५३ वै० शु० २ ,, ले० १७७

,, —स० १४५६ माघ शु० १२ शनि (नाहटा सग्रह)

,, —स० १४५८ फा० कृ० ११ शुक्र (प्र० ले० स० विनय० ले० १८३)

,, —स० १४५८ फा० कृ० १ शुक्र० (?) (पट्टावली समुच्चय पृ० २०५)

,, —स० १४६२ माघ कृ० ४ (जैन लेख सग्रह-नाहर ले० २४७८)

,, स०—१५३० वै० सु० ६ (प्र० ले० स० विनय- ले० ७२०, ७२१)

उद्योतनसूरि —स० १५२८ चै० कृ० १३ सोम (प० समु० पृ० २०६)

,, —स० १५३३ ज्ये० शु० ५ शुक्र (प्र० ले० स० विनय० ले० ७५६)

,, —स० १५३६ वै० ६ चन्द्र (जै० ले० स० नाहर० ले० १५५५)

,, —स० १५३६ आषाढ शु० ६ (,, ले० १४६२)

,, —स० १५४० ,, कृ० १ (प्र० ले० स० विनय ले० ८२३)

,, —स० १५५१ पोष शु० १० (प्र० ले० स० विनय० ले० ८६३)

,, —स० १५५६ पौष शु० १५ सोम (नाहटा सग्रह)

,, —स० १५५८ चै० कृ० १३ सोम (जै० ले० स० नाहर ले० ६७१)

,, —स० १५५६ आषाढ शु० १० बुध (प्र० ले० स० विनय० ले० ६०१)

,, —स० १५६६ माघ कृ० २ (जै० धा० प्र० ले० स० भा० २ ले० ४४)

महेश्वरसूरि—सं १५७८ आषाढ़ कृ ७ रवि (प्र० ले० स० विनय-ले १११)

„ —सं १५८३ फा कृ १ शुक्र (ले १७३)

—सं १५११ आषाढ़ शु० १ रवि (नाहटा संग्रह)

यशोदेवसूरि राज्ये—स १६१७ मा कृ १ (प समु०पृ २ १)

„ —सं १६७८ द्वि मा सु २ रवि („ पृ० २ १)

„ —सं १६८१ वै कृ ३ सोम (पृ २ १)

यथाप्राप्त साधन सामग्री पल्लीवालगच्छीय आचार्य मुनि द्वारा प्रतिष्ठित लेखों की संक्षिप्त सूची ऊपर दी गई है।

पल्लीवाल जाति

इतिहास प्रेमी आचार्य श्री देवगुप्तसूरिजी महाराज (प्रसिद्ध नाम ज्ञान सुन्दर जी) पुस्तक 'भगवान पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास' से।

इस जाति की उत्पत्ति मूल स्थान पाली शहर है जो मारवाड़ प्रान्त के अन्दर व्यापार का एक मुख्य नगर था। इस जाति में दो तरह के पल्लीवाल हैं। १ वैश्य पल्लीवाल २—ब्राह्मण पल्लीवाल और इस प्रकार नगर के नाम से और भी अनेक जाति हुई थी जैसे श्रीमाल नगर से श्रीमाल जाति खंडेला शहर से खंडेलवाल महेश्वरी नगरी से महेश्वरी जाति उपकेशपुर से उपकेश जाति कोरंट नगर से कोरन्टवाल जाति और सिरोही नगर से सिरोहिया जाति इत्यादि नगरों के नामों से अनेक जातियाँ उत्पन्न हुई थी इसी प्रकार पाली नगर से पल्लीवाल जाति की उत्पत्ति हुई है। वैश्यों के साथ ब्राह्मणों का भी सम्बन्ध था कारण ब्राह्मणों की आजीविका वैश्यों पर ही थी अतः जहां यजमान जाते है वहां उनके गुरु ब्राह्मण भी जाया करते हैं जैसे श्रीमाल नगर के वैश्य लोग श्रीमाल नगर का त्याग करके उपकेशपुर में जा बसे तो श्रीमाल नगर के ब्राह्मण भी उनके पीछे चले आये। अतः श्रीमाल नगर से आए हुए श्रीमाल वैश्य और ब्राह्मण श्रीमाल ब्राह्मण कहलाये। इसी प्रकार पाली के

वैश्य और ब्राह्मण पाली के नाम पर पल्लीवाल वैश्य और पालीवाल ब्राह्मण कहलाये । जिस समय का मैं हाल लिख रहा हूँ वह जमाना क्रिया कांड का था और ब्राह्मण लोगो ने ऐसे विधि विधान रच डाले थे कि थोडी थोडी बातो मे क्रिया काड की आवश्यकता रहती थी और वह क्रिया काड भी जिसके यजमान होते थे वे ब्राह्मण ही करवाया करते थे । उसमे दूसरा ब्राह्मण हस्तक्षेप नही कर सकता था, अत वे ब्राह्मण अपनी मनमानी करने मे स्वतत्र एव निरकुश थे । एक वशावली मे लिखा हुआ मिलता है कि पल्लीवाल वैश्य एक वर्ष मे पल्लीवाल ब्राह्मणो को १४०० लीकी और १४०० टके दिया करते थे तथा श्रीमाल वैश्यो को भी इसी प्रकार टैक्स देना पडता था । पचशतीशापोडशाधिका अर्थात ५१६ टका लाग दाया के देने पडते है । भूदेवो ने ज्यो ज्यो लाग दाया रूपी टैक्स बढाया त्यो त्यो यजमानो की अरुचि बढती गई । यही कारण था कि उपकेशपुर का मत्री वहड ने म्लेच्छो की सेना लाकर श्रीमाली ब्राह्मणो से पीछा छुडवाया । इतना ही क्यो बल्कि दूसरे ब्राह्मणो का भी जोर जुल्म बहुत कम पड गया । क्योकि ब्राह्मण लोग भी समझ गये कि अधिक करने मे श्रीमाली ब्राह्मण की भाँति यजमानो का सम्बध टूट जायगा जो कि उनपर ब्राह्मणो की आजीविका का आधार था, अत पल्लीवालादि ब्राह्मणो का उनके यजमानो के साथ सम्बध ज्यो का त्यों बना रहा । मत्री वहड की घटना का समय वि० स० ४०० पूर्व का था यही समय पल्लीवाल जाति का समझना चाहिये ।

खास कर तो जैनाचार्यों का मरुधर भूमि में प्रवेश हुआ और उन्होंने दुर्व्यसन सहित जनता को जैनधर्म में दीक्षित करना प्रारम्भ किया। तब से ही उन स्वार्थ प्रिय ब्राह्मणों के आसन कांपने लग गये थे और उन क्षत्रियों एवं वैश्यों से जैनधर्म स्वीकार करने वाले अलग हो गये तब से ही जातियों की उत्पत्ति होनी प्रारम्भ हुई थी। इसका समय विक्रम पूर्व चारसौ वर्षों के आस-पास का था और यह क्रम विक्रम की आठवी-नौवी शताब्दी तक चलता ही रहा तथा इन मूल जातियों के अन्दर शाखा प्रतिशाखा तो वट वृक्ष की भांति निकलती ही गई जब इन जातियों का विस्तार सर्वत्र फैल गया तब नये जैन बनाने वालों की अलग-अलग जातिया नहीं बनाकर पूर्व जातियों में शामिल करते गये। जिसमे भी अधिक उदारता उपकेश वंश की ही थी कि नये जैन बनाकर उपकेश वंश में ही मिलाते गये। ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो पालीवाल और पल्लीवाल जाति का गौरव कुछ कम नहीं है प्राचीन ऐतिहासिक साधनों से पाया जाता है कि पुराने जमाने मे इस पाली का नाम पिल्लवती मल्लिका पालिका आदि कई नाम थे और कई नरेशा ने इस स्थान पर राज्य भी किया था। पल्लीनगर एक समय जैनों का मणिभद्र महावीर तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध था। इतिहास के मध्यकाल का समय पाली नगरी के लिये बहुत महत्व का था। विक्रम की बारहवी शताब्दी के कई मन्दिर मूर्तियां की प्रतिष्ठाओं के शिलालेख तथा प्रतिष्ठा कराने वाले जैन श्वेताम्बर आचार्यों

के शिलालेख आज भी उपलब्ध है इत्यादि प्रमाणो से पाली की प्राचीनता मे किसी प्रकार के सदेह का स्थान नही मिलता है।

व्यापार की दृष्टि से देखा जाय तो भारतीय व्यापारिक नगरो मे पाली शहर का मुख्य स्थान था। पूर्व जमाने मे पाली शहर व्यापार का केन्द्र था। बहुत जत्था बन्द माल का निकास, प्रवेश होता था, यह भी केवल एक भारत के लिये ही नही था पर भारत के अतिरिक्त दूसरे पाश्चात प्रदेशो के व्यापारियों के साथ पाली शहर के व्यापारियो का बहुत बड़े प्रमाण मे व्यापार चलता था। पाली मे बड़े बड़े धनाढ्य व्यापारी बसते थे और उनका व्यापार विदेशों के साथ तथा उनकी बड़ी-बड़ी कोठियां थी? फारस, अरब, अफ्रीका, चीन, जापान, मिश्र, तिब्बत वगैरा प्रदेश तो पाली के व्यापारियो के व्यापार के मुख्य प्रदेश माने जाते थे।

जब हम पट्टावलियों, वशावलियो आदि ग्रथो को देखते है तो पता चलता है, कि पाली के महाजनो की कई स्थानो पर दूकाने थी और जल एव थल मार्ग से पुष्कल माल आता जाता था और इस व्यापार मे वे बहुत मुनाफा भी कमाते थे। यही कारण था कि ये लोग एक धर्म कार्य मे करोडो द्रव्य व्यय कर डालते थे। इतना ही क्यो पर उन लोगो की देश एव जाति भाइयो के प्रति इतनी वात्सल्यता थी कि पाली मे कोई स्वधर्मी एव जाति भाई

भाकर बसता तो प्रत्येक घर से एक मुद्रिका और एक ईंट अपण कर दिया करते थे कि आने वाला सहज में ही लक्षाधिपति बन जाता और यह प्रथा उस समय केवल एक पाली वालों के अन्दर ही नहीं थी पर अन्य नगरों में भी थी जैसे चन्द्रावती और उपकेश पुर के उपकेशवंशी प्राग्वट वंशी अग्रहा के अगरवाल खिडवाला के महेश्वरी आदि कई जातियो मे भी कि वे अपने साधर्मी एवं जाति भाइयों को सहायता पहुँचा कर अपने बराबरी कर बना लेते थे करीबन एक सदी पूर्व एक अंग्रेज इतिहास प्रेमी टॉड साहब ने मारवाड़ में पैदल भ्रमण करके पुरातत्व की खोज शोध का कार्य किया था। उनके साथ एक ज्ञानचन्द जी नाम के यति रहा करते थे उन्होने भी इसका हाल लिखा है कि पाली के महाजन बहुत बडा उपकार करते थे।

इस उल्लेख से स्पष्ट पाया जाता कि मारवाड़ म पाली एक व्यापार का मथक और प्राचीन नगर था। यहाँ पर महाजन संघ एवं व्यापारियो कि बडी बस्ती थी।

पल्लीवाल जाति में जैनधर्म

यह निश्चयात्मक नहीं कहा जा सकता कि पल्लीवाल जाति में जैन धर्म का पालन करना किस समय से प्रारम्भ हुआ, पर पल्लीवाल जाति बहुत प्राचीन समय से जैन धर्म पालन करती आई है। पुरानी पट्टावलियों वंशावलियों को देखने से ज्ञात होता है कि पल्लीवाल जाति में विक्रम के चार सौ वर्ष पूर्व से ही जैन धर्म प्रवेश हो चुका था।

इसकी साक्षी के लिये कहा जा सकता है कि आचार्य स्वयंप्रभसूरि ने श्रीमाल नगर में ९०,००० मनुष्यों को तथा पद्मावती नगरी के ४५,००० मनुष्यों को जैन धर्म की शिक्षा दीक्षा देकर जैन बनाये थे। बाद आचार्य रत्नप्रभसूरि ने उपकेशपुर नगर में लाखों क्षत्रियादि लोगों को जैन धर्म की दीक्षा दी और बाद में भी आचार्य श्री मरुधर प्रान्त में बड़े बड़े नगरों से छोटे छोटे ग्रामों में भ्रमण कर अपनी जिन्दगी में करीब चौदह लक्ष घर वालों को जैनी बनाये थे। जब पाली शहर श्रीमाल नगर और उपकेश नगर के बीच में आया हुआ है, भला वह आचार्य श्री के उपदेश से कैसे वंचित रह गया हो अर्थात पाली नगर में आचार्य श्री अवश्य पधारे और वहाँ की जनता को जैन धर्म में अवश्य दीक्षित किये होंगे। हाँ उस समय पल्लीवाल नाम की उत्पत्ति नहीं हुई होगी, पर पाली वासियों को आचार्य श्री ने जैन अवश्य बनाये

दे। आगे चल कर हम देखते हैं कि आचार्य सिद्धसूरि पाली नगर में पधारे हैं और वहां के श्री संघ ने आचार्य श्री की अध्यक्षता में एक श्रमण सभा का आयोजन किया था जिसमें दूर-दूर के हजारों साधु साध्वियों का शुभागमन हुआ था। इस पर हम विचार कर सकते हैं कि उस समय पाली नगर में जैनियों की खूब आबादी हो गयी थी इस प्रकार का वृहद काम पाली नगर में हुआ था। इस घटना का समय उपकेशपुर में आचार्य रत्नप्रभसूरि के महाजन संघ की स्थापना करने के पश्चात दूसरी शताब्दी का बतलाया है। इससे स्पष्ट पाया जाता है कि आचार्य रत्नप्रभ सूरि ने पाली की जनता को जैन धर्म में दीक्षित कर जैन धर्म उपासक बना दी था उस समय के बाद तो कई श्रावकों ने जैन मंदिर बनाकर प्रतिष्ठा करवाई तथा कई श्रद्धा सम्पन्न श्रावकों ने पाली से शत्रुंजयादि तीर्थों के संघ भी निकाले थे। इन प्रमाणों से हम निर्णय पर आ सकते हैं कि पाली की जनता में जैन धर्म श्रीमान और उपकेश वंश के समय प्रचार हो गया था जैन शासन में साधुओं का जिस नगर में विशेष विहार हुआ उस ग्राम नगर के नाम से गच्छ कहलाये। उपकेशपुर से उपकेश गच्छ, कोरट नगर के नाम से कोरंट गच्छ और पाली नगर के नाम से पल्लीवाल गच्छ उत्पन्न हुआ। इस गच्छ की पट्टावली देखने से पता चलता है कि यह गच्छ बहुत पुराना है। श्री उपकेश गच्छ और कोरंट गच्छ के बाद तीसरा नम्बर है।

सं. १२९ पल्लीवाल गच्छ की उत्पत्ति का समय है।

जैन जातियों एवं वंशों की स्थापना

(ले० श्री अगरचदजी नाहटा)

यह तो सुनिश्चित है कि भगवान महावीर के समय मे जैन जातियो का स्वतत्र अस्तित्व नही था। सभी जाति के लोग जैन धर्मानुयायी थे। जैन आगम उत्तराध्ययन सूत्र से स्पष्ट है कि भगवान महावीर के समय जो वैदिक धम मे जन्म से जाति का सम्वध माना जाता था वह जैन धर्म को मान्य नही था ? गुणो से ही जाति की विशेषता जैन धर्म को मान्य थी। कर्म से ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र होने हैं। महाभारत और वौद्ध ग्रथ भी इसका समर्थन करते हैं।

मध्यकाल मे जैनाचार्यों ने वहुत सी जाति वालो को जैन धर्म का प्रतिवोध दिया तो उनमे जैन सस्कार वश परम्परा से चलते रहे इसके लिए उनको स्वतत्र जाति या वश के रूप मे प्रसिद्ध किया गया, क्योकि वैदिक धर्मानुयायी प्राय समस्त वर्णों वाले मांसाहारी थे, पशुओ का वलिदान करते थे और वहुत से ऐसे अभक्ष भक्षण आदि के सस्कार उनमे रूढ ये जो जैन धर्म के सर्वदा विपरीत थे। इसलिए जैनो का जातिगत सगठन करना आवश्यक हो गया। उनका नाम करण प्राय उनके निवास स्थान पर ही आधारित था। जैसा कि १२॥ वारह ज्ञाति सम्वधी पद्यों से स्पष्ट है .—

सिरि सिरिमाल उएसा पल्ली नानेए तहय मेडते ।
डिसेरा डिडूया पंडया तह नराएा उरा ॥१॥
हरिसउरा चाइल्ला पुक्सर तह डिडूमवा
दसिलवाल भव बारस जाइ महीयाइ ॥२॥

प्रर्थात् श्रीमाल प्रोसवाल पल्लीवाल मेड़तवाल डिड सिसेरा खंडेल्या नरायणा हर्षोरा जायसवाल पुष्करा डिड मवा और भाव खंडेलवाल मे साढ़े बारह जाति होती हैं। इन जाति के नामा से स्पष्ट है कि उनका नामकरण उनके निवास स्थान पर ही भाधारित है। प्रत : पल्लीवाल जाति भी पल्ली या पाली से ही प्रसिद्ध हुई है।

जाति के साथ किसी धर्म विशेष का पूर्णत : सम्बंध नही है जिस प्रकार श्रीमाली ब्राह्मण भी है और श्रीमाल जैन भी है। इसी तरह खंडेलवाल और पल्लीवाल ब्राह्मण और जैन दोनों हैं। प्रोसवाल पहले सभी जैन थे फिर राज्याश्रय प्रादि के कारण कुछ वैष्णव हो गये फिर भी प्रधिक संख्या जैनों की ही है। पल्लीवाल वैश्यों में भी सभी एक ही गच्छ के अनुयायी नही थे यह प्राचीन शिलालेखों और प्रशस्तियों से स्पष्ट है। जिस प्रांत में जिस गच्छ का प्रधिक प्रभाव रहा था जिसका जिससे प्रधिक सम्पर्क हुमा वे उसी के अनुयायी हो गये। जैन जातियों का प्राचीन इतिहास बहुत कुछ अंधकार में है, वही स्थिति पल्लीवाल जैन इतिहास की है। प्राप्त प्रमाणों से यथासम्भव इस पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। इति

श्री अगरचंद जी नाहटा

[इस पुस्तक के लिखवाने मे तथा ऐतिहासिक वातो की शोध मे श्री नाहटाजी ने जैसा सहयोग दिया है, उसको देखते हुए यहाँ आपका सक्षिप्त परिचय देकर हम आपकी सेवा मे धन्यवाद अर्पित करते हैं।

—नंदनलाल जैन]

जैन साहित्य के प्रकाँड विद्वान, श्री अगरचन्द जी नाहटा

जैन साहित्य के प्रकांड विद्वान—

श्री अगरचन्दजी नाहटा

गेहुआ रंग लम्बा कद, इकहरा बदन ऊँची किन्तु उभरी हुई पंगा मसुनी मूछें कमर में ढीली धोती और उसकी भी लांग आधी खुली हुई या तो बदन पर लिपटी हुई अथवा गंजी पहने हुए आँखों पर चश्मा लगा कर हैसियन के बोरे या चटाई पर बैठे हुए जिनकी मुखमुद्रा गम्भीर और शान्त है ऐसे एक साहित्य साधक को आप भी अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर मे दिन के प्रायः सोलह घंटे बैठे पाएँगे। घर से बाहर बहुत कम जाते हैं। यदि काम से कहीं जाना हुआ तो बदन पर बंगाली कुर्ता सिर पर मारवाड़ी पगड़ी जिसके पेंच अस्त-व्यस्त रहते हैं कंधे पर सफेद दुपट्टा पैरों में चर्म रहित जूते। यह है उनकी बाहरी वेश भूषा। जिनका यह परिचय हम यहाँ देने जा रहे हैं वह हैं लक्ष्मी एवं सरस्वती के वरद-पुत्र श्री अगरचन्दजी नाहटा। वैसे लक्ष्मी एवं सरस्वती दोनों की एक ही व्यक्ति पर कृपा हो ऐसा बहुत कम देखने में आता है लेकिन अगरचन्दजी पर दोनों ही कृपालु हैं। अपरिचित व्यक्ति उन्हें देखे तो सहसा विश्वास भी नहीं होगा कि यह सीधा-सादा दीखने वाला व्यक्ति विद्वान भी है और धनवान् भी। उनसे प्रत्यक्ष बात किए या सम्पर्क मे आए बिना पता ही नहीं चलेगा कि यह इतने विद्वान हैं कि उनकी ख्याति केवल राजस्थानी जगत् मे ही नहीं

भारत के हिन्दी साहित्य जगत् मे भी है। हिन्दी शोध जगत् के तो यह चमकते हुए नक्षत्र हैं।

नाहटाजी का जन्म बीकानेर के ओसवाल नाहटा कुल मे विक्रमी सवत् १९६० मे चैत्र वदी ८ को हुआ था।

साहित्यिक तीर्थस्थान

नाहटाजी राजस्थानी भाषा और जैन साहित्य के चोटी के विद्वानो मे माने जाते हैं। उनके पास अपना निजी अनुभव तो है ही, पर साथ मे एक बडा पुस्तकालय भी है, जहाँ ३०,००० हस्त लिखित ग्रन्थ और इतने ही मुद्रित ग्रन्थो का विशाल सग्रहालय है। भारत के व्यक्तिगत सग्रहालयो मे यह सबसे बड़ा है, इसे देखकर डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के मुंह से निकल गया कि—"यह साहित्यिक तीर्थ-स्थान है"। अभय जैन ग्रन्थालय मे सैकडो अमूल्य ग्रन्थो एवं पुरातत्व की पुस्तको का सग्रह है। वहाँ भारत के एक छोर से दूसरे छोर तक के विद्वान आते है या वहाँ से ग्रन्थ मागकर लाभ उठाते हैं। नाहटाजी भी मुक्त हस्त इस अमूल्य साहित्य निधि को नि स्वार्थ भाव से वितरित करते हैं पुस्तकालय की विपुल सामग्री का जितना अधिक उपयोग हो सके उतना ही उन्हे सन्तोष होता है।

आजकल कई साहित्यिक अन्वेषक ऐसे मिलेंगे जो नाहटा जी से थीसिस लिखने के लिए विषय पूछते हैं। उनके लिए उपलब्ध साहित्य सामग्री की जानकारी एव उनका मार्ग दर्शन

चाहते हैं। नाहटा जी कभी किसी को ना नहीं करते। सभी को यथासाध्य सहयोग देते हैं। अपने अनुभव से साहित्य-अन्वेषण के मार्ग को प्रशस्त कर देते हैं। अपने पास जो पुस्तकें नहीं होती वे दूसरी जगह से अपने नाम या कीमत से भी मंगाकर सहायता करते हैं। शोध के कुछ विद्यार्थी तो इनके पास आकर निवास भी करते हैं। शिष्य भाव से उनके पास बैठकर लाभ उठाते हैं। नाहटाजी की यह विशेषता है कि अपना सब काम करते हुए भी ऐसे विद्यार्थियों को उचित मार्ग दर्शन व सहायता करते हैं। राजस्थानी एवं जैन साहित्य में शोध करने वाले विद्यार्थी भली भांति जानते हैं कि इन दोनों विषयों पर शोध कार्य करना हो और थीसिस लिखना हो तो नाहटाजी की सहायता अनिवार्य है। केवल नवीन शोध अन्वेषक ही नहीं डाक्टरेट की पदवी प्राप्त विद्वान भी शंका समाधान के लिए नाहटाजी से मार्गदर्शन चाहते हैं। हाल ही की बात है कि अहमदाबाद से एक डाक्टरेट प्राप्त विद्वान का पत्र आया था जो भारत के एक प्राचीन ग्रन्थ विमल देव सूरि के "पउमचरिय पर शोध कर रहे हैं। यह ग्रन्थ प्राकृत भाषा का है और वीर निर्वाण के ५३ वर्ष बाद लिखा गया था। इस ग्रन्थ के विषय में उठी गई शंकाओं के बारे में उन्होंने कई विद्वानों से बात चीत की थी किन्तु किसी से उन्हें सतोषजनक और निश्चित मत नहीं मिल सका। उनमें से कुछ ने शंकाओं के समाधान के लिए नाहटा जी से पूछने के लिए ही लिखा। तात्पर्य यह है कि नाहटा जी के दृष्टिकोण एवं

विचारो को भारत के बडे-बडे विद्वान भी प्रामाणिक और तथ्य-पूर्ण मानते है। कई डाक्टरेट प्राप्त विद्वान विनोद मे प्राय कहते है—"नाहटा जी आप तो हम डाक्टरो के भी डाक्टर है। आपके अपरिमित ज्ञान की तुलना मे हम लोगो का विश्वविद्यालयो मे वर्षों से प्राप्त किया हुआ ज्ञान कुछ भी नही है।" उत्तर मे नाहटा जी हँसते हुए कहते हैं—"मैं तो ५ वी कक्षा का विद्यार्थी हूँ।" सचमुच नाहटा जी आज भी विद्यार्थी बने हुए हैं। उनकी अगाध ज्ञान प्राप्ति का यही कारण है।

पुरातत्व की शोध

नाहटा जी का प्रिय विषय है 'पुरातत्व की शोध'। वह इस विषय के प्रकाड पडित माने जाते हैं। उनके करीब २५०० निबन्ध और विभिन्न विषयो पर लिखे विद्वत्तापूर्ण लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित हुए हैं। उनके लेख शोध पूर्णता के साथ-साथ नवीनता से परिपूर्ण भी होते है। प्राचीन और नवीन का सतुलन उनमे होता है। वह हमेशा कहते हैं—पीसे हुए को फिर दुबारा क्यो पीसना ? इसलिए उनके लेखो मे नवीनता और स्वतन्त्र विचार होते हैं। उन्हें लिखने-पढने का व्यसन-सा हो गया है। नाहटा जी द्वारा लिखित और सपादित करीब डेढ दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। "राजस्थान मे हिन्दी के हस्त लिखित ग्रन्थो की खोज" के दो भाग साहित्य सस्थान, उदयपुर से प्रकाशित हुए हैं जिनमे कई अज्ञात ग्रन्थो का परिचय

है। बीकानेर जैन लेख संग्रह समय सुन्दरकृत कुसुमांजलि ऐतिहासिक जैन काव्य संग्रह समय सुन्दर ग्रन्थावली आदि ग्रन्थ नाहटा जी की वर्षों की खोज और लगन के परिचायक हैं। राजस्थानी काव्य 'ज्ञानसार उद्योत' और हिन्दी काव्य "क़ायम रासो" ग्रन्थ का भी उन्होंने अपने विद्वान भतीजे भीमँवर लाल जी नाहटा के साथ संपादन किया है।

प्रो० नरोत्तमदास स्वामी एम० ए० का मत है कि राजस्थानी भाषा के अज्ञात ग्रन्थों की खोज नाहटा जितनी शायद ही किसी ने की हो। हिन्दी में वीर गाथा काल पृथ्वीराज रासो विमलदेव रासो खुमाण रासो आदि की जो नवीन खोज नाहटा जी ने हिन्दी संसार को दी है उसके लिए हिन्दी साहित्य जगत् नाहटा जी का ऋणी रहेगा। शोध कार्य में भी नाहटा जी गहरी दृष्टि से काम लेते हैं।

नाहटा जी का जीवन अत्यन्त सादगीपूर्ण एवं धार्मिक है। वह अभिमान झूठ कपट आदि से कोसों दूर रहते हैं। उन्होंने जैन सिद्धान्तों को अपने जीवन व्यवहार में गहराई से उतारा है। वह रात्रि में भोजन तो क्या पानी भी नहीं पीते हैं। यही एक दो मील चलना हो तो वह पैदल ही चलेंगे।

प्रत्येक कार्य में वह मितव्ययिता करते हैं। भोग विलास के लिए यह कभी खर्च नहीं करते। उन्हें ऐसा खर्च ना पसन्द है। वह आये हुए पत्रों का यथाशीघ्र उत्तर देते हैं। भारत के विद्वानों से पत्र व्यवहार द्वारा वह बराबर संपर्क बनाए रखते

है। वह समय के मूल्य को पहचानते हैं। इसलिए व्यर्थ बातो मे कभी समय नही गवाँते। फिर भी वह हँसमुख और मिलनसार हैं।

नाहटा जी साल मे केवल दो महीने व्यापार का कार्य करते हैं। बाकी सारा समय साहित्य सेवा मे लगाते हैं। उनका पारिवारिक जीवन सुखी और संतोषपूर्ण है। इनका यह परिचय तो सूर्य को दीपक दिखाने जैसा है। इति

लेखक का परिचय

श्री दौलतसिंह जी लोढ़ा

आज से लगभग १२ वर्ष पूर्व मेवाड़ के प्रसिद्ध क्षेत्र मांडल गढ़ के समीपस्थ ग्राम बामनिया के निवासी सेठ जगतचन्द जी लोढ़ा के कनिष्ठ पुत्र के रूप में बालक दौलतसिंह का जन्म हुआ था। इनका परिवार उस समय मेवाड़ में विशेष सम्मान प्राप्त

था। संवत् १९५६ के अकाल में लोगों की हर प्रकार से सहायता करने के कारण यह लोढा परिवार सर्व प्रिय हो गया था। लाड प्यार में पलने वाले बालक दौलत की पढाई की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा था। लडके के बहनोई ने देखा कि बालक होनहार दीखता है इसे अवश्य पढाना चाहिए, अतः वे इसे शाहपुरा ले गये। यह बालक कुछ तुतलाता था किन्तु पढाई मे एक दम चमक गया। एक ही वर्ष मे कक्षा १ से चौथी मे पहुच गया। स्कूल के सभी अध्यापक बालक से बहुत खुश थे। दौलतसिंह ने क्रमशः मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करली। दसवी कक्षा पास करने तक इनके परिवार की आर्थिक स्थिति एक दम कमजोर हो गई थी। माता पिता शिक्षा पर कुछ भी खर्च करने मे असमर्थ थे, परन्तु इन्हें तो पढने की धुन थी, बिना किसी सहायता के अपने पैरो पर खडे होकर पढते ही रहे। ६ मास तक तो केवल चने की दाल उबली हुई खाकर इन्टर परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए। इनकी तपस्या से सरस्वती मानो प्रसन्न हो गई और गद्य पद्य दोनो मे ही इन्होने अच्छी योग्यता प्राप्त करली। पारिवारिक चिन्ता के कारण जीविकोपार्जन हेतु इन्हें राजस्थान छोडकर भोपाल जाना पडा और वहाँ 'गोदावत जैन गुरुकुल' मे गृहपति का कार्य भार सम्हाला। वहाँ कार्य करते हुए 'बागरा जैन गुरुकुल' की ओर से प्रकाशित विज्ञापन पढने मे आया तब आप 'बागरा' गये और वहाँ विराजित आचार्य श्री विजययतीन्द्र सूरि जी महाराज से प्रथम बार भेंट हुई। आचार्य श्री इनकी

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
प्रर्याप्त	पर्याप्त	३	१६
परन्त	परन्तु	४	२
व्यापाग्यो	व्यापारियों	४	८
दीन	हीन	६	१७
पल्लीगच्छ	पल्लीवाल गच्छ	१०	१८
पल्लीज्ञाति	पल्लीवाल ज्ञाति	१२	७
विश्रुति	विश्रुति	१४	५
पाली	पालीवाल	१६	१८
थी	था	२०	११
धनिपति	धनपत	२१	१२
मिघ	मिध	२२	१७
कही	कहीं	२४	१३
देवनवाडा	देलवाडा	५०	१२
मानाग्र	मानाग्रा	५१	५२
कटम्ब	कुटुम्ब	५४	१८
भागवती	भगवती	६२	१२
अगो	आगों	६४	८
कठ्यारी	कठवारी	६५	२१

स्पष्ट वादिता और धार्मिक प्रेम से प्रसन्न हो गये। इन्हें 'आदरा जैन गुरुकुल' में गृहपति बनाने का आदेश दे दिया। यह बड़ी लगन से काम करने लगे। साहित्य प्रेम तो इनमें अटूट था फिर यह कविता भी अच्छी करते थे। सरस्वती की कृपा से इनकी कविता ऐसी होने लगी जो श्रोताओं को मन्त्र मुग्ध कर देती थी यह देखकर आचार्य श्रीमद्विजययतीन्द्रसूरि जी महाराज ने इन्हें आदेश दिया कि जिस प्रकार मैथिली शरण ने 'भारत भारती' लिखी है तुम भी जैन समाज के लिये 'जैन जगती' तय्यार करो। आचार्य श्री की आज्ञा स्वीकार कर दौलतसिंह उर्फ 'अरविन्द' के नाम से इन्होंने बड़ी ही सुन्दर कविता तय्यार की। जैन समाज को प्रेरणा देने के लिए यह एक अनोखी कविता मानी जा सकती है। पुस्तक 'जैन जगती' जब छप कर सामने आई तो विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा की। फिर तो इनका दिल खुल गया और प्रति वर्ष एक नवीन प्रसून शारदा देवी को भेंट करने लगे।

श्री 'अरविन्द' कवि और लेखक दोनों ही थे। श्री अगर चन्द जी नाहटा के शब्दों में 'श्री दौलत सिंह 'अरविन्द' बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न स्वाभिमानी तथा स्वाश्रयी थे। आचार्यश्री की कृपा और गुरुजनों के भक्त होने के कारण इन्हें इतिहास और पुरातत्त्व में भी अच्छा ज्ञान प्राप्त होगया। 'राजेन्द्रसूरि स्मारक ग्रंथ' 'प्राग्वाट इतिहास' और 'शाणगुरुतीर्थ का इतिहास' आदि पुस्तकों के अध्ययन से आपकी साधना का परिचय भली प्रकार

मिलता है। गद्य पद्य मे आपने जितनी भी पुस्तकें लिखी वह पाठकों को बडी पसन्द आई। श्री अगरचन्द जी नाहटा के लिखने पर 'पल्लीवाल जैन इतिहास' के सम्पादन का भार भी इन्हे सौंपा गया, जिसे इन्होने बडे श्रम के साथ लिखा है। खेद है कि इसके छपने से पूर्व ही श्री 'अरविन्द' जी स्वर्गवासी हो गये। इनके बिछुडने मे इनकी मित्र मडली को ही दुःख नही हुआ बल्कि जैन समाज को अपने एक श्रेष्ठ कवि और अच्छे साहित्यकार के असमय ही छिन जाने से भारी धक्का लगा है। हमारे हाथ मे तो 'जैन जगती' आदि इनकी रचित कोई भी पुस्तक जब आती है तभी श्री दौलतसिहजी का मधुर हास्य, घु घराली केश राशि, सादी वेष भूषा और साहित्य सेवा स्मरण हो आती है। यह मानना पडेगा कि इस पल्लीवाल इतिहास की सामग्री को भी इन्होने बडे परिश्रम और खोज के साथ सग्रहित किया तथा एक निष्पक्ष इतिहासकार की भाँति बिखरी ऐतिहासिक कलियो को चुनकर पल्लीवाल जैन इतिहास के रूप मे लिख कर एक बडी कमी को पूरा किया है। इसके लिए मैं लेखक के परिश्रम और साहित्य प्रेम की सराहना करता हूँ।

जवाहरलाल लोढा
सम्पादक—'श्वेताम्बर जैन'' आगरा

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
प्रर्याप्त	पर्याप्त	३	१६
परन्त	परन्तु	४	२
व्यापारयो	व्यापारियो	४	८
दीन	हीन	६	१७
पल्लीगच्छ	पल्लीवाल गच्छ	१०	१८
पल्लीज्ञाति	पल्लीवाल ज्ञाति	१२	७
विश्रुति	विश्रृति	१४	५
पाली	पालीवाल	१६	१८
थी	था	२०	११
धनिपनि	धनपन	२०	११
मिध	सिध	२२	१७
कहि	कही	२४	१३
देवनवाडा	देलवाडा	५०	१२
माताग्र	माताग्रा	५१	५२
कटम्ब	कुटुम्ब	५४	१८
भागवनी	भगवती	६१	१२
अगो	अगो	६४	४
कठयारी	कठचारी	६५	२१